मनोरंजन पुस्तकमाला ४२

संक्षिप्त रामस्वयंवर

संपादक

ब्रजरत्नदास

प्रकाशक

काशी नागरी प्रचारिणी सभा

मनोरंजन पुस्तकमाला--४२

संक्षिप्त

रामस्वयंवर

(रीवाँ-नरेश महाराज रघुराजसिंह की कृति से)

संपादक--

व्रजरत्नदास

१९८१

काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा

द्वारा प्रकाशित

भूमिका

कुटिला लक्ष्मीर्यत्र प्रभवति न सरस्वती वसति तत्र ।
प्रायः श्वश्रुस्नुषयोर्न दृश्यते सौहृदं लोके ॥

चंचला लक्ष्मी और सरस्वती का सौहार्द प्रायः असम्भव सा मान लिया गया है और वस्तुतः देखा जाता है कि धनाढ्यों के वंश में विद्वानों का और सरस्वती के कृपापात्रों के यहाँ लक्ष्मी का अभाव सदा रहता है। परंतु इस महाकाव्य के प्रणेता बांधव-नरेश महाराज रघुराजसिंह देव बहादुर जी० सी० एस० आई० इस नियम के विरुद्ध ऐश्वर्यशाली नृपति और सुकवि हो गए हैं। यह अग्निवंशांतर्गत चालुक्य अर्थात् सोलंखी वंश* के थे और इनके पूर्वज महाराज वीरध्वज के पुत्र महाराज व्याघ्रदेव पहलेपहल गुजरात के बघेला नामक ग्राम से इस प्रांत में आए थे, जिस कारण इनका वंश बघेला वंश भी कहलाता है। कुछ लोगों का कथन है कि इन लोगों के पूर्वज व्याघ्रदेव के नाम पर यह वंश बघेल वंश कहलाया। इन्हीं व्याघ्रदेव ने यहाँ आकर मुरफागढ़ और उसके आस पास की भूमि पर अधिकार कर लिया। महाराज रघुराजसिंह

* इस वंशवाले अपने को अग्निवंशीय बतलाते हैं; परन्तु इन्हीं के वंश के प्राचीन शिलालेखों और ताम्रपत्रों में इन्हें चंद्र या सोम वंशी ...देखिये—सोलंखिओं का इतिहास, १ म भाग पृ० ३—१२ ।

ने अपने ग्रंथ आनंदांबुनिधि में अपनी वंशावली यों लिखी हैः—

वीरध्वज, व्याघ्रदेव, करन, सोहागदेव,
संग रामसिंह और विलासदेव जानिए।
भीमल, अनीकदेव, वलदेव, दलकंद्र,
मलकेश, वुल्लार, वरियार भानिए।
सिंहदेव, भैरोदेव, नरहरि, भयददेव,
त्यों शालिवाहन, वीरसिंह देव गानिए।
वीरभानु, रामसिंह, वीरभद्र, विक्रमजू,
अमर, अनूप, भावसिंह को वखानिए॥

भावसिंह महराज के, अनिरुधसिंह सुजान।
श्री अनिरुध महराज के, श्री अवधूत महान॥
महाराज अवधूत के, श्री अजीत वलवान।
श्री अजीत महाराज के, श्री जैसिंह सुजान॥
महाराज जयसिंह के, धर्म-ज्ञान-यश-धाम।
महाराज नृप-मुकुटमणि, विश्वनाथ प्रदकाम॥

व्याघ्रदेव गुजरात के सोलंखी राजा के छोटे भाई थे और यात्रा के वहाने उत्तरी भारत में राज्य स्थापन करने के लिए आए थे। पहिले उन्होंने मुरफा दुर्ग पर अधिकार कर लिया जो कालिंजर दुर्ग से नौ कोस पूर्व और उत्तर की ओर है। इसके अनंतर पिरहवन के राजा की पुत्री से विवाह किया और काल्पी से चांडालगढ़ तक राज्य फैलाया। इनके पुत्र कर्णदेव

ने मांडला के हैहयवंशीय राजा की पुत्री से विवाह किया जहाँ से इन्हें बांधवगढ़ दहेज में मिला। कर्णदेव ने इसे अपनी राजधानी बनाया ※ और आधुनिक रीवाँ के बहुत कुछ भाग पर अधिकार करके उसका नाम बघेलखंड रखा। सन् १३५५ ई० में गुजरात के बघेला राजा कर्ण को सुलतान अलउद्दीन खिलजी के सेनापति उलुग़ खाँ ने परास्त कर उस राज्य पर अधिकार कर लिया जिससे बघेला वंश के बहुत से लोग इस राज्य में चले आए। इसके अनन्तर चौदहवीं और पंद्रहवीं शताब्दियों में इस वंशवाले अपना राज्य दृढ़ करने में लगे रहे और इस योग्य नहीं थे कि दिल्ली के सम्राटों के राज्य-विस्तार में बाधक होते। मुंतख़बुत्तवारीख़ में लिखा है कि जब सं० १५३७ वि० में जौनपुर के शरकी वंश का सुलतान हुसेन शाह काल्पी के पास बहलोल लोदी से परास्त होकर भागा, तब भट्टी के राजा ने धन, सामान और हाथी आदि की सहायता कर† उसे जौनपुर पहुँचा दिया था।

सं० १५५२ ई० में राजा भयंददेव ने जौनपुर के सूबेदार मुबारक ख़ाँ लोहानी को कैद कर लिया जिससे सुलतान

※ सं० १२६० वि० में कुतुबुद्दीन ऐबक ने कालिंजर पर अधिकार कर लिया जिससे चंदेल राजपूत वहाँ से पूर्व की ओर हटे और बघेलों से मारफा आदि दुर्ग विजय कर वहीं बस गए। बघेला सरदार बांधवगढ़ और सोहागपुर चले आये, जहाँ हैहयवंशियों का राज्य था। उसी समय से अंतिम वंशवालों के लेख नहीं मिलते।

† ये दोनों राज्य सटे हुए थे और इनमें आपस में मित्रता थी।

सिकंदर लोदी ने इन पर चढ़ाई की। विंध्य पर्वत की एक घाटी के पास युद्ध में राजा परास्त हुआ और भागते समय घावों के कारण उसकी मृत्यु हो गई। सिकंदर लोदी राजधानी बांधवगढ़ के दस कोस उत्तर तक पहुँचा, पर इस चढ़ाई में उसके बहुत से घोड़े मर गए थे जिसका पता पाकर हुसेन शाह शर्की ने इस पर चढ़ाई की। राजा शालिवाहन ने सिकंदर का साथ दिया और इसकी सहायता से वह चुनार होता हुआ बनारस चला गया। सं० १५५५ ई० में सिकंदर लोदी फिर बघेलखंड में आया और यहाँ छः मास रहा। इसने राजा शालिवाहन से उसकी पुत्री विवाह में माँगी, परंतु उसके न मानने पर लड़ाई छिड़ गई। सिकंदर लोदी ने बांधवगढ़ तक चढ़ाई करके उसके आसपास के ग्रामों को लूटा, पर उस दृढ़ दुर्ग को विजय न कर सकने पर वह लौट गया। राजा शालिवाहन के पुत्र और उत्तराधिकारी वीरसिंहदेव हुए जिन्होंने वीरसिंहपुर नामक नगर बसाया, जो आधुनिक पन्ना राज्य के अंतर्गत है।

इनके पुत्र राजा वीरभानु हुए जो कुछ दिन तक सुलतान सिकंदर लोदी के दरबार में रह चुके थे। इस समय इस वंश का प्रभाव और ऐश्वर्य इतना बढ़ गया था कि बाबर ने अपने आत्मचरित्र में भारत के तीन बड़े राजाओं में भट्टः अर्थात् बघेल प्रांत के राजा को भी परिगणित किया है। गुलबदन बेगम ने हुमायूँ नामा में लिखा है कि जब हुमायूँ चौसा के युद्ध में शेरशाह सूरी से परास्त होकर भागा था, तब उसने यहीं कुछ दिन शरण

ली थी। आरेल पहुँचने पर जब नदी मिली और नाव एक भी नहीं थी, तब इसी राजा ने हुमायूँ को एक उतार से पार उतारा और उसकी सामग्री-रहित सेना के लिये बाज़ार लगवा दिया था। वहाँ कुछ दिन आराम से रहने पर हुमायूँ कड़े मानिकपुर की ओर चला गया। गुलबदन बेगम ने राजा का नाम नहीं दिया है, पर जौहर ने अपनी पुस्तक में वीरभानु नाम लिखा है और यह भी लिखा है कि उसने हुमायूँ का पीछा करने-वाले मीर फ़रीद ग़ोर को परास्त कर भगा दिया था।

इनकी मृत्यु पर इनके पुत्र रामचंद्र या रामसिंह राजा हुए जिनके दरबार में तानसेन नामक प्रसिद्ध गवैए थे। अकबर ने उनकी प्रशंसा सुनकर उन्हें लाने के लिए अपने शस्त्राध्यक्ष जलालखाँ को भेजा। रामचंद्र ने बादशाह के योग्य भेंट सहित तानसेन को विदा किया। सं० १६२१ वि० में राजा रामचंद्र ने ग़ाज़ीख़ाँ तन्नोज़ नामक एक सरदार को शरण दी जिस पर बादशाही सेना ने चढ़ाई कर दी। कई युद्धों के अनंतर ग़ाज़ीख़ाँ मारा गया और राजा बांधवगढ़ में घिर गया। कई दरबारी राजाओं के मध्यस्थ होने से संधि हो गई। सं० १६२७ वि० में बादशाही सरदारों ने दुर्ग कालिंजर* घेर लिया। उसकी रक्षा अपनी शक्ति के बाहर देखकर रामचंद्र ने उन्हें यह दुर्ग सौंप

---

१ सं० १६०२ वि० में शेरशाह ने इस दुर्ग को राजा क़ीरतसिंह चंदेल से विजय किया जिसे कुछ वर्ष के अनन्तर रामचन्द्र ने वहाँ के दुर्गाध्यक्ष से क्रय कर लिया था।

दिया। यद्यपि इन्होंने अपने पुत्र वीरभद्र को दरबार में भेज दिया था पर स्वयं नहीं गये थे, इससे बादशाह ने फिर चढ़ाई करने का विचार किया। परंतु वीरभद्र की प्रार्थना पर अकबर ने राजा बीरबल और जैनख़ां कोका को इन्हें बुलाने के लिए भेजा और दरबार में पहुँचने पर इनका अच्छा सत्कार किया। सं० १६४६ वि० में इनकी मृत्यु हो गई और वीरभद्र राजा हुए। ये राजधानी से स्वदेश आते समय पालकी परसे गिर पड़े थे जिससे अत्यधिक चोट आई; पर औषध करने पर ये अच्छे हो गए थे; किंतु रक्त ऐसा बिगड़ गया था कि अनेक रोगों ने इन्हें आ घेरा और दूसरे वर्ष इस लोक से चल बसे।

राजा वीरभद्र के अल्पवयस्क पुत्र विक्रमाजीत के राजा होने पर राज्य में बहुत गड़बड़ मच गई। तब अकबर ने राय पत्र दास को बांधवगढ़ विजय करने के लिये भेजा। इन्होंने कई स्थानों पर थाने बैठाकर वहां अधिकार कर लिया। सं० १६५४ वि० में आठ महीने और कई दिन के घेरे पर बांधवगढ़ टूटा। सं० १६५६ वि० में दूसरे पुत्र दुर्योधन को बादशाह ने राजा बनाया और भारतीचंद्र को उनका अभिभावक नियुक्त किया। ये स्यात् वर्ष ही दो वर्ष गद्दी पर रहे क्योंकि इनका नाम महाराज रघुराजसिंह ने अपनी वंशावली में नहीं दिया है। राजा विक्रमाजीत ने रीवाँ नगर बसाया और दुर्ग बनाकर इसे अपनी राजधानी बनाया। इनके पुत्र अमरसिंह ने सं० १६८२ वि० में जहाँगीर के दरबार में जाने की इच्छा प्रकट की

थी जिस पर बादशाह ने कान्ह राठौर को आज्ञापत्र, खिलअत आदि के साथ भेजा था। शाहजहां के बादशाह होने पर सं० १६९२ वि० में ये अब्दुल्लाखां बहादुर के साथ रत्नपुर के राजा को दंड देने गये थे और इनके मध्यस्थ होने से संधि भी हो गई थी। उसी वर्ष जुझारसिंह बुँदेला के विद्रोह को दमन करने के लिए गये थे।

अमरसिंह की मृत्यु पर उनका पुत्र अनूपसिंह राजा हुआ। सं० १७०७ वि० में ओड़छानरेश पहाड़सिंह के डर से चौरागढ़ का भूम्याधिकारी हृदयराम अनूपसिंह की शरण में चला आया जिससे क्रुद्ध हो पहाड़सिंह ने इन पर चढ़ाई कर दी। अनूपसिंह हृदयराम को साथ लेकर नथूंथर के पार्वत्य प्रदेश में चले गए। पहाड़सिंह ने रीवाँ नगर को लूट लिया। सं० १७१३ वि० में अनूपसिंह प्रयाग के सूबेदार सलावतखां सैयद के साथ दरबार में आये और बादशाह की कृपा से उसका राज्य फिर उसे मिल गया। राजा रामचन्द्र की मृत्यु के अनंतर उनके अल्पवयस्क उत्तराधिकारियों के समय इस राज्य का प्रभाव और बल कम हो गया था और आसपास कई छोटे बड़े राज्य स्थापित हो गए थे।

अनूपसिंह की मृत्यु पर उनके पुत्र भावसिंह राजा हुए। सं० १७४७ वि० के लगभग इनके पुत्र अनिरुद्धसिंह राजा हुए जो दस वर्ष राज्य करने के अनंतर मऊगंज के सेंगर ठाकुरों के हाथ मारे गए। इनके पुत्र अवधूतसिंह राजा हुए जिनकी

अवस्था उस समय छः मास की थी। प्रसिद्ध छत्रसाल के पुत्र हृदयशाह ने, जो पन्ना के राजा थे, रीवाँ पर चढ़ाई कर अधिकार कर लिया और अवधूतसिंह की माता अपने पुत्र सहित अवध में प्रतापगढ चली गईं। दिल्ली के बादशाह की सहायता से हृदयशाह को निकालकर अवधूतसिंह ने फिर अपने राज्य पर अधिकार कर लिया। इनकी मृत्यु पर इनके पुत्र अजीतसिंह राजा हुए और सं० १८८६ वि० में महाराज जयसिंह देव राजा हुए। इन्हीं के समय पहले पहल भारत सरकार और रीवाँ राज्य के बीच संधि स्थापित हुई। सं० १८६६ वि० में पिंडारियों ने इनके राज्य से होकर मिरजापुर लूट लिया जिसमें इनका भी कुछ लगाव था। इसी घटना पर उसी वर्ष बृटिश सरकार ने इन्हें संधि स्थापित करने पर बाध्य किया। महाराज जयसिंह स्वयं अच्छे विद्वान् तथा कवि थे और इन्होंने लगभग बीस पुस्तकें लिखी हैं।

महाराज जयसिंह ने जीवितावस्था में ही अपने पुत्र विश्वनाथसिंह को राजगद्दी दे दी। ये भी अच्छे विद्वान हुए और कई ग्रंथों पर इनकी टीकाएं मिलती हैं। इनकी सहधर्मिणी श्रीमती परिहारिन मा साहिबा नागोद की राजपुत्री थीं जिनसे सं० १८८० वि० में महाराज रघुराजसिंह का जन्म हुआ था। बाल्यावस्था में इन्हें अच्छी शिक्षा मिली थी और संस्कृत में भी इन्होंने अच्छी दक्षता प्राप्त कर ली थी। इनकी काव्यशक्ति दैवी थी। पहले पहल इन्होंने विनयमाल नामक पुस्तक लिखी। सं०

१९११ वि०में इनके पिता की मृत्युपर इन्हें राजगद्दी मिली। सं० १९१४ वि० के बलवे में इन्होंने भारत सरकार की अच्छी सहायता की थी जिसके उपलक्ष में इन्हें सोहागपुर और अमरकंटक के परगने मिले थे और जी. सी. एस. आई. की पदवी प्राप्त हुई थी। इन्हें दत्तक लेने का अधिकार और १९ तोप की सलामी भी प्रदान की गई थी। इनकी सं० १९३० वि० में मृत्यु हुई और इनके उत्तराधिकारी महाराज वेंकट रमणसिंह जी हुए जिनकी अवस्था उस समय तीन वर्ष की थी। सं०१९५२ वि० में इन्हें पूरा राज्याधिकार प्राप्त हो गया। दो वर्ष के अनन्तर अकाल के सुप्रबंध के उपलक्ष में भारत-सरकार ने इन्हें जी. सी. एस. आई की पदवी प्रदान की। सं० १९७५ वि० में इनकी मृत्यु हो जाने पर युवराज गुलाबसिंह रीवाँ की गद्दी पर सुशोभित हुए।

महाराज रघुराजसिंह ने कविता के लिए अपना कोई उपनाम नहीं रखा था। ये कभी कभी अपने नाम का एक अंश 'रघुराज' छंदों में व्यवहृत करते थे। इनके प्रथम ग्रंथ का ऊपर उल्लेख हो चुका है। दूसरी पुस्तक जो इन्होंने २७ वर्ष की अवस्था में लिखी थी, रुक्मिणी-परिणय नामक काव्य है इसकी कविता भी अच्छी है और इसमें कई रसों का समावेश किया गया है। उदाहरणार्थ एक पद्य देखिए--

चरखा अरु सीतहु आतप को निसि द्यौस सहैं सरही में खरे
कहुँ सूखिहू जात, कहूँ हरियात, रहैं जलजात यों ध्यान धरे॥

"रघुराज" सुनो तप के बस जद्यपि, रावरे के गल माहिं परे।
तबहूं न लहैं सरि रुक्मिनि के पद की मधु ब्याजहि आसु भरे॥

इनके दूसरे बड़े ग्रंथों के नाम ये हैं—आनंदांबुनिधि, राम रसिकावली, भक्ति विलास, सुंदर शतक, गंगा-शतक, जगदीश-शतक, चित्रकूट-माहात्म्य, रामस्वयंवर, पदावली, रघुराज विलास, विनयपत्रिका और विनय प्रकाश। इनको छोड़कर और भी कई छोटे छोटे अष्टक और स्फुट कविताओं का निर्माण किया है। आनंदांबुनिधि एक विशद ग्रंथ है जिसमें श्री मद्भागवत के बारहो स्कंधो का पद्यमय अनुवाद है। इसकी कविता भी सराहनीय है और यह अनेक प्रकार के छंदों में रचित है। इस की कविता का भी एक उदाहरण लीजिए—

सवैया

पद पंकज पंजर में ललना, यह तीतुरी नूपुर सोर करै।
मम कानन धार सुधा सी ढरै नहिं नैनन में कछु मोद ढरै॥
बन में बसिकै तरु को त्वच त्यागि, कदंब प्रभा पट काहे धरै।
येहि हेतु कसी कल किंकिनी तूँ कटि मेरी कहूँ नहिं टूटि परै॥

रामस्वयंवर एक बड़ा काव्यग्रंथ है और इसमें भी अनेक प्रकार के छंद हैं, पर अधिकांश चौबोला छंद ही है। इस ग्रंथ के अन्त में महाराज रघुराजसिंह ने इसके प्रणयन का यह कारण लिखा है। महाराज रघुराजसिंह एक समय काशी आए हुए थे। उस समय काशिराज महाराज ईश्वरीनारायण सिंह रामनगर की गद्दी पर शोभायमान थे। रामनगर में

आश्विन मास भर रामलीला होती है। बांधवनरेश ने भी यह लीला देखी और काशिराज के कहने से, जिन्हें यह पितृ-भाव से मानते थे, यह काव्य तैयार किया। इस ग्रंथ में वाल्मीकि की कथा के अनुसार इन्होंने राम-जन्म से स्वयंवर तक की लीला बहुत विस्तार से लिखी है और सीताहरण से राज्याभिषेक तक की कथा बहुत संक्षेप में लिखी है। ऐसा करने का कारण आपने स्वयं यों लिखा है—

मैं असमर्थ नाथ-दुखगाथा गावन में सब भाँती।
बिरह बिपत्ति व्यथा बरनन में रसना रहि रहि जाती॥
जद्यपि सेतुबंध लंकापति-विजय विदित तिहुँ लोका।
बिपिन-गमन दशरथकुमार को उपजावत अति सोका॥

इनकी राम पर कैसी भक्ति थी यह इन पंक्तियों से प्रकट होती है। यह ग्रंथ दो वर्ष में सं० १६३४ वि० की पूर्णिमा को पूर्ण हुआ था। यह ग्रंथ इनके अन्यान्य ग्रंथों से अधिक उत्तम है और इसकी कविता भी अधिक मनोहर और प्रौढ़ है। इसमें इन्होंने नगर, वाटिका, बारात आदि का बहुत अच्छा वर्णन दिया है जो अन्य कवियों के ग्रंथों में कम मिलता है। इनके इस ग्रंथ के अधिक प्रचार न होने का मुख्य कारण रामचरितमानस का अधिक प्रचार है; और दूसरे यह कि और लीलाओं के अभाव के साथ रामस्वयंवर तक की लीला का बहुत ही विस्तार हो गया है।

इसी दूसरे कारण को मिटाने के लिये रामस्वयंवर का

यह संक्षिप्त संस्करण तैयार किया गया है। इसमें लीला क्रम कहीं टूटने नहीं पाया है और यथा संभव अच्छे अच्छे पद चुनकर लिए गए हैं। आशा है कि इस संक्षिप्त रामस्वयंवर से पाठकगण श्रीमान् की कविता का रस आस्वादन करने पर पूर्ण ग्रंथ देखने का अवसर प्राप्त करने में न चूकेंगे।

इस ग्रंथ के नामकरण के सम्बन्ध में कुछ लोगों का आक्षेप है कि यह ठीक नहीं है अर्थात् रामस्वयंवर न होकर सीयस्वयंवर होना उचित था। पर स्वयंवर का अर्थ है स्वयं वरण करना। और वास्तव में रामचंद्र ने धनुर्भंग कर सीता को वरण किया था। सीताजी को स्वयं वरण करने का रत्ती भर भी अधिकार नहीं था।

पूर्वोक्त विचार से इस ग्रंथ के नामकरण पर जो आक्षेप होता है, वह अनुचित है।

अनुक्रमणिका

रामस्वयंबर

(दोहा)

पर ते पर कारनहु कर, कारन पुरुष प्रधान ।
परविभूति परबिभव प्रभु, जय जदुपति भगवान ॥ १ ॥
जग सिरजत पालत हरत, जाकी भ्रुकुटि-बिलास ।
बसत अचंचल जेहि रमा, जय जय रमानिवास ॥ २ ॥
सुरगन नरगन मुनिनगन, हरत बिघनगन जोय ।
एकरदन सुभसदन जय, मदनकदनसुत सोय ॥ ३ ॥

(कवित्त)

तेरई भरोस भरो भव में न भीति भाऊं, भाषि भाषि भूरि भाव रसना न हारती ॥ भेद त्यों अभेद हाव भावहू कुभाव केते, भावक सुबुद्धि जथामति निरधारती ॥ तेरिये भलाई ते भलाई कविताई भाई, माई मति पाई कौन जापै ना निहारती ॥ हारती न हिम्मति, पसारती सुकिम्मति, सँभारती सुसम्मति, जे बंदैं तोहिं भारती ॥ ४ ॥

(सोरठा)

रघुपति भक्तप्रधान कासीपति-पितु नामपद ।
धरि सिर करहुँ बखान 'रामस्वयंबर' ग्रंथ वर ॥ ५ ॥

(दोहा)

हरिलला साधन विमल, लखि उपजत अनुराग।
यह साधन सब भाँति ते, लखत सुमति बड़ भाग॥ ६॥
अवनि उतारन भार को, हरि लीन्हो अवतार।
पै न बनत बरनत विपिन, पद गमनत सुकुमार॥ ७॥

(छंद चौबोला)

बहुरि स्वामिनीहरन महादुख बरनि जाइ कहु कैसे।
पुनि वियोग जगजननिनाथ को लागत कथन अनैसे॥
ताते मम हरि गुरु निदेस दिय बालकांड भरि पाठा।
करहु तजहु दुख कथा जथा लै घृत बुध त्यागत माठा॥८॥
अश्लोकहु अश्लोकारथ नहिं जब लौं पाठ कराहीं॥
तब लौं अंबु-पानहूं त्यागत का पुनि भोजन काहीं॥
ताते रामस्वयंवर गाथा रचन आस उर आई।
रघुपति-बालचरित्र-विवाह-उछाह देहुँ मैं गाई॥ ६॥
बालकांड को विसद चरित संछेप कथा षट कांडा।
बरनहुँ रीति बालमीकि जेहि सुनि पुनीत ब्रह्मांडा॥
उक्ति जुक्ति तुलसीकृत केरी और कहाँ मैं पाऊँ।
बालमीकि अरु व्यास गोसाइँ सूरहि को सिर नाऊँ॥१०॥

(सोरठा)

जय जय दशरथलाल, अवधपाल कलिकालहर।
अनुपम दीनदयाल, दै मति करहु निहाल मोहिं॥११॥

अवध-वर्णन।

(छंद चौबोला)

सरजू तीर सोहावन कोसल नगर वसत अति पावन।
निज छवि अमरावती लजावन सुरन मोद उपजावन॥
द्वादस जोजन लंब मान तेहि जोजन त्रय विस्तारा।
कनककोट अति मोट छोट नहिं विमल विसाल वजारा॥१२॥
वसत चक्रवर्ती दसरथ जहँ जिमि दिवि देव-अधीसा।
पालित प्रजा वृद्धि सुख पावत लहि प्रताप जगदीसा॥
वाट वाट बहु द्वार विराजत चामीकर महरावैं।
हाटक ठाट कपाट ठटे वर घाटन घाट सोहावैं॥१३॥
सरजू-तीर हेम-सोपानन सब थल करहिं प्रकासा॥
गुर्ज मेरु-मंदर-सम मंडित जेहि लखि दुवन निरासा॥
भिन्न भिन्न सब भौन भौन की गली न कछु संकेतू।
अति विचित्र वर कनक रजत के निरमित सकल निकेतू॥१४॥
तोपन-तोम तड़प तड़िता सी गुरिज कोट महँ केतीं।
घहरहिं मनहुँ मेघगन घहरत गोला अवली लेतीं॥
तिमि घरनाल और करनालैं, सुतुरनाल, जंजालैं।
गुरगुराब, रहँकले भले तहँ लागे विपुल वयालैं॥१५॥
ऊँची अटा घटा इव राजहिं छरति छटा छिति छोरैं।
मनहुँ स्वर्ग की लगीं सोपानैं रवि-विस्रामहि ठोरैं॥

नगर चहूँ दिसि बाग सुहावन अति मंजुल अमराई।
विहरत विविध कुरंग विहंग मनोहर सोर मचाई ॥१६॥
तीनि ओर परिखा जल-पूरित उत्तर सरजु सुहाई।
गजसाला तुरंगसाला रथसाला विविध बनाई ॥
दुर्ग भयावन नगर सुहावन रिपु दुर्गम प्राकारे।
इंद्र बरुन यम की गति जहँ नहिं का पुनि भूप विचारे ॥१७॥
वीना वेनु पटह पनवादिक बाजत रोज नगारे।
अवध सरिस सोभा सुर नर मुनि त्रिभुवन में न निहारे ॥
भावी राम-जन्म गुनि प्रगट्यो वसुधा में वैकुंठा।
जहँ ब्रह्मर्षि सुरर्षि राजऋषि बिचरहिं बुद्धि अकुंठा ॥१८॥
महा महर्षि सरिस सब द्विजवर सील सँकोच सुभाऊ।
प्रजन परमप्रिय प्रान सरिस जिन मानत दसरथ राऊ ॥
ऐसे कोसलपुर को नायक दसरथ भू-भरतारा।
जाको सुजस जगत जगजाहिर करत दिगंत पसारा ॥ १९॥
भेदभास यक चारि वरन में अतिथि देव में पूजा।
चतुराई कृतज्ञताई थल अवध सरिस नहिं दूजा ॥
विक्रम बस्यो सकल सूरनगन धर्म सत्य तनु माहीं।
कुल कदंब महँ बसी वृद्धि तहँ दंड वाद्यगन पाहीं ॥२०॥
बसता बसी ब्रह्म छत्री विट सूद्र जाति अनुसारा।
धर्म पतिव्रत अवध नगर महँ नारिनगन आधारा ॥
हंसवंसअवतंस भूप वर दसरथ सील सुभाऊ।
जासु प्रसंस करत सुर नर मुनि भयो जथा मनु राऊ॥२१॥

लसत अयोध्या के सब जोधा निगमागम कृत वोधा।
क्रोधा शत्रु-समूहन सोधा नहिं गति कहुं अवरोधा॥
अवधराज की विमल विराजति विसद सुवाजिनसाला।
सकल जाति के बँधे तुरंगम रूप अनूप विसाला॥२२॥

(सोरठा)

अनुपम अवध भुवाल, जाकी गजसाला विमल।
सिंधुर लसत विसाल, विविध जाति अरु देस के॥ २३॥

(दोहा)

मंत्री दसरथ भूप के, उत्तम आठ प्रधान।
चतुर देवगुरु सरिस सब, करहिं सत्य अनुमान॥ २४॥
सकल मंत्र जिनको विदित, जानत लखि आकार।
नित नरपति हित में निरत, मितभाषी अविकार॥ २५॥
श्रीवसिष्ठ ब्रह्मर्षि वर, वामदेव ऋषिराज।
उभै पुरोहित नृपति के, कारक सब सुभ काज॥ २६॥
ऐसे सचिवन ते सहित, दसरथ भूभरतार।
शासत सकल बसुंधरा, धराधर्म आधार॥ २७॥
चतुर चार गुप्तहु प्रकट, कै सब देस प्रचार।
पालत प्रजा भुवालमनि, करत धर्म संचार॥ २८॥
कहूँ अधर्म को लेस नहिं, धर्म कर्म रत लोग।
सुखी सनेह रुखी प्रजा, दुखी मुखी नहिं जोग॥ २९॥
जासु प्रताप प्रताप ते, भई अकंटक भूमि।

लोकप इव सामंत जेहि, वंदत नित पद चूमि ॥ ३० ॥
कुसल समर्थ सु सचिव सव, सहित सु दसरथ राज।
अवधपुरी सोभित भयो, जिमि कर-जुत उडुराज ॥३१॥

अश्वमेध यज्ञ विचार।

(छंद चौबोला)

कियो विचार भूप मन में अस केहि विधि सुत हम पावैं।
करिकै वाजिमेध मख उत्तम हरि सुत हेतु मनावैं॥
देहिं ईस सुत वंश-विधायक उरिन पितर-ऋन होई।
यहि विधि करि मतिमान ठीक मति मंत्रिन मंत्र समोई ॥३२॥
और सवै सुख, नहिं संतति सुख, सुत लालसा हमारे।
तेहि हित अश्वमेध मख करिवो हम मन माहँ विचारे॥
शास्त्ररीति ते सवै विचारहु जेहि विधि सुत हम पावैं।
सुनि नृप वचन वशिष्ठादिक मुनि वोले वचन ललामैं ॥३३॥
भलो विचार कियो नरनायक करहु यज्ञ संभारा।
तजहु तुरंग संग सुभटन के दै द्रुत विजय नगारा।
यज्ञभूमि सरजू उत्तर दिसि कीजै विमल विधाना।
पैहो नरपति पुत्र सर्वथा जो तुम्हरे मन माना ॥ ३४ ॥
सुनिकै वचन वशिष्ठादिक के सजल नैन महराजा।
कह्यो हरषि सचिवन अव कीजै सकल यज्ञ को काजा॥
गुरु वसिष्ठ आदिक मुनिजन के विमल वचन अनुसारा।
तजहु तुरंग संग सुभटन के दै द्रुत विजय नगारा ॥३५॥

सचिव सुनत शासन साहिब को सादर कह्यो सराही ॥
प्रभुशासन अनुसार वाजिमख होई विधि हत नाही ॥
यह सुनि पुलकि वशिष्टादिक मुनि दै नृप आशिरवादा।
माँगि विदा निज निज अवास को गये सहित अहलादा ॥३६॥
यहि विधि मुनिन विदा करि भूपति सचिवन मख हित भाषी।
तुरत गये रनिवास अवास हुलासित सुत-अभिलाषी ॥
कौशल्या कैकयी सुमित्रा आदिक जे महरानी।
तिन सों कह्यो पुत्र हित हयमख हम दीन्ह्यो अब ठानी ॥३७॥

(दोहा)

सुनत वचन तिनके वदन, विकसि भये मुदवंत।
जिमि लहि अंत हिमंत को, सर सरोज विकसंत ॥३८॥
यहि विधि दसरथ भूमिपति, कौशल्यादिक रानि।
भनत परस्पर वचन बहु, सिगरी रैनि सिरानि ॥ ३९ ॥

शृंगी ऋषि की कथा।

(छंद चौबोला)

उठि भूपति करि नित्यनेम सब सभासदन पगु धारे।
तहँ सुमंत एकंत जाइ सिर नाइ वृतांत उचारे ॥
सुनहु नाथ यह कथा पुरानी एक समय वन माहीं।
गये गलानि मानि मन में हम भजन-हेतु हरि काहीं ॥४०॥
दीन देखि मोहि अति दयालु तहँ सनत्कुमार सिधारे।
ज्ञान विज्ञान बिराग विविध विधि मंजुल वचन उचारे ॥

तेहि पीछे पुनि कह्यो ऐसहू अवै न तजु संसारा।
दसरथ भूपति-भवन भुवनपति लैहैं नर-अवतारा ॥ ४१ ॥
सनत्कुमार दरस हित मुनिजन औरौ तहँ चलि आये।
तिनके सन्मुख पुनि मुनिपति मोहिं ऐसे वचन सुनाये ॥
कश्यप-तनय विभांडक ह्वैहैं जाहिर सकल जहाना।
शृंगी ऋषि तिनके सुत ह्वैहैं कानन में अस्थाना ॥ ४२ ॥
वर्धमान ह्वैहैं आश्रम में वनचर संग विहारी।
कछु संसारचार जनिहैं नहिं पितु सेवा सुखकारी ॥
नारी-पुरुष-भेद जनिहैं नहिं ब्रह्मचर्य महँ राते।
महा महात्मा सिद्धसिरोमनि सकल जगत विख्याते ॥ ४३ ॥
अग्निहोत्र ठानत पितु सेवत वीति जाइ बहु काला।
अंग देस महँ रोमपाद यक ह्वैहै कोउ भूपाला ॥
धर्म व्यतिक्रम करी भूप जव अनावृष्टि तव होई।
परी महादुर्भिच्छ राज्य में प्रजा दुखित सब रोई ॥ ४४ ॥

(दोहा)

निरखि घोर दुर्भिच्छ तहँ, भूप दुखी मन माहिं।
बोलि वृद्ध पंडित द्विजन, नृप कहिहै तिन पाहिं ॥ ४५ ॥

(छंद चौबोला)

प्रायश्चित्त करावहु मोकहँ मिटै महा दुर्भिच्छा।
हरबर होइ प्रजा प्रमुदित सब पृथिवी पाय सुभिच्छा ॥
सुनि नृप वचन वेदविद ब्राह्मण बोले वचन बिचारी।
सुवन विभांडक मुनि शृंगी ऋषि आनहु इत तपधारी ॥ ४६ ॥

शांता सुता भूप दशरथ की दीजै ताहि विवाही।
तब सुकाल महिपाल राज्य में ह्वैहै प्रजा उछाही॥
विप्र-वचन सुनि तब वसुधापति चिंता अति उर आनी।
मुनिवर केहि उपाव ते आवैं पुछिहैं सचिव सुजानी॥४७॥
मुनिवर आनन सचिव पुरोहित भूपति विपिन पठैहैं।
भीति विभांडक की तेहि कानन मुनि आनन नहिं जैहैं॥
मुनि आनन उपाय भूपति सों सादर सचिव सुनैहैं।
गनिकागन बन जाय अत्रसि शृंगी ऋषि को लै ऐहैं॥४८॥
मुनि-आगम प्रभाव ते वासव वरषि सुभिक्ष बनैहैं।
शांता सुता शांत कांतहि लहि अनुपम सुख उपजैहैं॥
सोई शृंगी ऋषि दरसथ को अश्वमेध करवैहैं।
चारि कुमार महासुकुमार उदार अवधपति पैहैं॥४९॥
महा विक्रमी वंश-विधायक पैहैं नृप सुत चारी।
पूरब सनत्कुमार कह्यो अस मोसों सकल उचारी॥
ताते राजसिंहमनि आसुहिं अंग देस पगु धारो।
सदल सवाहन जाइ ऋषीशहि ल्यावहु करि सतकारो॥५०॥
सुनि सुमंत के वचन अवधपति अतिसय आनँद मानी।
लै अनुमति वशिष्ठ सों आसुहि गवन दियो तहँ ठानी॥
सहित सकल रनिवास सचिवगन सुंदर सैन्य सजाई।
चल्यो अवधनायक सब लायक अंग देस मन लाई॥५१॥
डेरा करत सरित वन पत्तन मंद मंद महराजा।
पहुंचे अंगदेस जहं निवसत शृंगी ऋषि द्विजराजा॥

प्रथम दरस कीन्हों शृंगी ऋषि पावक सरिस प्रकासा।
रोमपाद सुनि दसरथ-आगम पायो परम हुलासा ॥५२॥
सखा परम प्रिय संबंधी नृप रोमपाद लहि प्यारे।
पुनि पुनि करत महा सत्कार अघात न मोद अपारे॥
अंगराज-कृत अति सत्कारिक कोसलनाथ उदारा।
बसे पंचदस दिवस अंगपुर दोउ नृप एक अगारा ॥५३॥
कह्यो अंगपति सों कोसलपति शांताकांत समेता।
हमरे कोसल नगर चलहिं द्रुत मम कारज के हेता॥
अंगराज तब विनय करी नृप बात कही यह नीकी।
शृंगी ऋषि जैहैं कोसलपुर यह हमरेहू जी की ॥५४॥

शृंगी ऋषि का आगमन।

रोमपाद शृंगी ऋषि सों पुनि विनय करी कर जोरी।
अवध जाहु शांता संयुत प्रभु मानि विनय यह मोरी॥
कहि तथास्तु शृंगी ऋषि आसुहि चले सहित निज नारी।
रोमपाद सों कह्यो अवधपति देहु विदा सुखकारी ॥५५॥
पठयो अवध तुरत हलकारे तरल तुरंग चढ़ाई।
साचिवन दियो निदेस अवधपुर राखेहु सुभग सजाई॥
छपन छपा के रवि इव भा के दंड उतंग उड़ाके।
विविध किता के बंधे पताके छुवैं जे रवि-रथ-चाके ॥५६॥
कियो अलंकृत नगर अनूपम खबरि पाय पुरवासी।
राज-रजाइ सिवाइ कियो पुर-रचना मंत्रिन खासी॥

शांता शृंगी ऋषि संयुत नृप जवहिं नगर नियराने।
लिये सकल अगुवान पौरजन दरसन हित ललचाने ॥५७॥
होत धुकार दुंदुभिन के अरु वजत संख सहनाई।
खैरभैर चहुं ओर मच्यो अति आनँद पुर न समाई॥
शृंगी ऋषि को आगे करिकै नगर सुहावन राजा।
कियो प्रवेस सहित रनिवास हुलासित सकल समाजा॥५८॥
राजकुमारी सहित मुनीसहिं देखि महा मुद ठयऊ।
भूप चक्रवर्ती दसरथ सुरपति सम सोभित भयऊ॥
प्रविसि राजमंदिर महँ नरपति अंतहपुर महँ जाई।
शांता सुता सहित शृंगी ऋषि पूजन कियो महाई॥५९॥
करि पूजन विधान जुत नरपति विमल अवास टिकायो।
अपने को कृतकृत्य मानि नृप संपति विविध लुटायो॥
त्रिशत साठि त्रय महरानी लखि सुता और जामाता।
रोज रोज सतकारहि पुनि पुनि आनँद उर न समाता॥६०॥

(दोहा)

एक दिवस नरनाथ तहँ, शृंगी ऋषि ढिग जाय।
विनय कियो कर जोरि कै, करहु यज्ञ मन लाय॥६१॥

(छंद चौबोला)

शृंगी ऋषि तव एवमस्तु कहि कह सुनु भूप उदारा।
तजहु तुरंग संग सुभटन के दै द्रुत विजय नगारा॥
तव राजा सुख मानि सभा चलि तुरत सुमंत बुलाई॥
कह्यो ब्रह्मवादी वोलवावहु सकल पुरोहित जाई॥६२॥

वामदेव, जाबालि, कश्यपहु अरु सुयज्ञ मतिखानी ।
गुरु वशिष्ठ अरु और सकल मुनि ल्यावहु तुम इत आनी ॥
गयो तुरंत सुमंत ऋषिन को ल्यायो सभा बुलाई ।
राजा उठि प्रणाम तब कीन्हो आसन दै बैठाई ॥ ६३ ॥
धर्म अर्थ जुत वचन उचारयो सुनहु सबै मुनिराई ।
और सबै सुख, नहिं संतति सुख ताते कछु न सोहाई ॥
अश्वमेध मख पुत्र-हेत हम करैं मोद तब पैहैं ।
शृंगी ऋषि प्रभाव ते मेरे सिद्ध मनोरथ ह्वैहैं ॥ ६४ ॥
सुनि मुनिजन भूपति मुख निर्गत वचन परम सुख पाये ।
सकल सराहि उछाह भरे पुनि ऐसे वचन सुनाये ॥
तजहु तुरंग संग सुभटन के दै द्रुत विजय नगारा ।
सरजू उत्तर दिसा करहु नृप सकल यज्ञ-संभारा ॥ ६५ ॥
पैहो पुत्र सर्वथा भूपति चारि अमित बलवारे ।
जहँ ते भई धर्म की मति यह करिबो यज्ञ विचारे ॥
अति प्रसन्न तब भये अवधपति सुनि मुनिजन की बानी ।
हरषि कह्यो सुभ बैन सुमंत्रिन देहु काज यह ठानी ॥ ६६ ॥
सब बिधि समरथ अहैा सचिवगन कछु न वस्तु की हानी ।
सकल सिद्धि करिहैं वाजीमख सादर शारंगपानी ॥
भूपसिरोमनि-वचन सुनत सब बोले बचन सुखारी ।
ह्वैहै तथा जथा प्रभुशासन वृथा न गिरा तिहारी ॥ ६७ ॥
शृङ्गी ऋषि शांतायुत यहि विधि बसे अवध पुर माहीं ।
बीति गयो सानंद साल यक जानि परयो कछु नाहीं ॥

आई बहुरि बसंत जबै ऋतु राजा मनहिं बिचारी।
गुरु वशिष्ठ के भवन गयो चलि बोल्यो पद सिर धारी ॥६८॥

(दोहा)

आप हमारे सुहृद गुरु, मोपर किये सनेहु।
रचहु यज्ञ संभार सब, यह भारा तुव लेहु ॥ ६९ ॥

जज्ञ-प्रबंध ।

(छंद चौबोला)

एवमस्तु कहि गुरु वशिष्ठ मुनि बोले वचन विचारी।
करिहैं हम सब जस समर्थि मम कारज विघ्न निवारी ॥
अस कहि सभा वशिष्ठ सिधारे विप्रन लियो हँकारी।
जे धर्मज्ञ वृद्ध मंत्री सब वाजीमख-अधिकारी ॥ ७० ॥
तिन सों कह्यो करहु मख कारज परिचर लेहु बुलाई।
सकल कर्मचारी कारीगर सकैं जे सुभग बनाई ॥
अरु जिनको उपयोग यज्ञ में वेदवादि मरयादी।
बोलहु विप्र हजारन पंडित वाजीमख प्रतिवादी ॥ ७१ ॥
सानुकूल सब करहु कर्म यह भूपति-शासन मानी।
सहसन कनक ईंट द्रुत आनहु जेहि वेदी निरमानी ॥
विविध अन्न संपति सम्पादहु पानहुं विबिध प्रकारा।
अतिथि अवनिपति पुरवासिनहित रचहु भुवन विस्तारा ॥
जे कारीगर यज्ञ वस्तु के सुंदर बिरचनवारे।
ते सब क्रम ते अति विशेष ते जाहिं विबिध सतकारे

अन्न वसन भूषन अरु भोजन विविध भांति ते दीजै।
कमै न कौनहुं वस्तु समै महँ चित दै सकल करीजै ॥७३॥
सुनि वशिष्ठ-शासन मंत्री सब बोले वचन तहाँहीं।
प्रभु शासन अनुसार करव सब कमी वस्तु कछु नाहीं ॥
सचिव-वचन सुनि सुखी भये गुरु लियो सुमंत बुलाई।
कह्यो वचन अवनी अवनीपन नेउता देहु पठाई ॥ ७४ ॥
महाराज मिथिलाधिप जिनको जनक नाम अति शूरे।
लोक धर्म वेदज्ञ सत्य बल ज्ञान विज्ञानहुं पूरे ॥
तिनको तुमहिं सुमंत जाइ तहँ ल्यावहु नेउति बोलाई।
सांचे रघुकुलके संबंधी ताते कहौं बुझाई ॥ ७५ ॥
तैसे काशिराज प्रियवादी सुरसम जासु अचारा।
तिनको तुमहिं जाय लै आवहु दसरथ मित्र उदारा ॥
वृद्ध परम धार्मिक केकैपति श्वशुर भूपमनि केरो।
सादर जाइ ताहि लै आवहु पुत्रसहित मत मेरो ॥ ७६ ॥

(दोहा)

महाभाग अंगाधिपति, रोमपाद जेहि नाम।
राजसिंह सारो सुहृद, तेहि ल्यावहु जसधाम ॥ ७७ ॥
दक्षिण भूपति कौशला, भानुमान जेहि नाम।
शूरशास्त्रविद मगधपति, दोउ नृप आनहु धाम ॥ ७८॥

(छंद चौबोला)

राजसिंह शासन अनुसर सब बोलेहु राजन काहीं।
पूरब पश्चिम उत्तर दक्षिण जे मधि देसहु माहीं ॥

सिंधु और सौवीरहु सोरठ जे भूपति रनधीरा।
न्योत पठावहु सकल महीपन बाकी रहैं न वीरा॥ ७९॥
छोटे मोटे और भूप जे पृथिवी पीठ निवासी।
सदल सबांधव आनहु तिनको सत्कारहु सुखरासी॥
सुनि गुरु-वचन सुमंत जथोचित भूपति न्योति बोलायो।
जथाजोग भूपन के घर जन जथाजोग पठवायो॥ ८०॥
जनक आदि जे मुख्य महीपति तिनके आपुहि जाई।
सादर नेउति सदल निज संगहि ल्यायो अवध लेवाई॥
गुरुशासन जस भयो ठानि तस सकल कर्म अधिकारी।
कियो निवेदन सबै आइ ते लीजै नाथ निहारी॥ ८१॥
अति प्रसन्न ह्वै गुरु वशिष्ठ तब पुनि पुनि कह्यो बुझाई।
काहू दियो न खेल झेल करि राख्यो मेल सदाई॥
गुरु वशिष्ठ दसरथ पहँ चलिकै कह्यो सुनहु महराजा।
आये बाजिमेध मख देखन सब धरनी के राजा॥ ८२॥

(दोहा)

तुरत पधारहु यज्ञगृह, सुदिन पूछि नरनाथ।
हानि कौनिहूं वस्तु नहिं, सिद्ध करैं सुरनाथ॥ ८३॥
तब वशिष्ठ, शृङ्गी ऋषिहु, चरन वंदि महिपाल।
सुदिन पूछि गमनत भये, मखशाला तेहि काल॥८४॥

यज्ञ।

यज्ञ कर्म आरंभ किय, शास्त्रन के अनुसार।
दीक्षित भयो भुआलमनि, सहित तीनिहूं दार॥ ८५॥

(छंद चौबोला)

यहि विधि ते आरंभ वाजिमख भयो बसंतहि काला ।
दिसा विजय करि यज्ञतुरंगम आइ गयो तेहि काला ॥
उत्तर सरजूतीर मनोरम होन लग्यो हयजागा ।
शृङ्गीऋषि आगू करि मुनिवर करै कृत्य बड़भागा ॥८६॥
निज निज आसन बैठि बैठि द्विज नितप्रति कर्म कराहीं ।
करहिं अवाहन सकल देवतन भाग देन मख माहीं ॥
होता शृंगी ऋषि, वशिष्ठ मुनि शिक्षा मंत्र विज्ञाता ।
पढ़ि पढ़ि मंत्र देत देवन को भाग सराग विख्याता ॥ ८७ ॥
सविधि रत्नमंडित बहु खंभन अति विशाल मखशाला ।
छाये बसन अनूपम जिनमें बँधे सुरभि सुम माला ॥
बड़े बड़े बहु रत्न चमंकत जिमि सप्तर्षि अकाशा ।
रंभखंभ मंडित अखंड अति तोरन तड़प तमाशा ॥ ८८ ॥
कौशल्या-केकयी-सुमित्रा-पतिजुत कर्म कराहीं ।
वाजिमेध बाजी छबि राजी बँध्यो तुरंग तहांहीं ॥
वेद विधान कियो मख राजा हीन कर्म कछु नाहीं ।
शृङ्गी ऋषि अरु गुरु वशिष्ट मुनि करवाये नृप काहीं ॥८९॥
प्राची दिसि होता कहँ दीन्ह्यो रघुकुल वंस प्रधाना ।
अध्वर्यहि पश्चिम दिसि, ब्रह्महिं दक्षिण दिसि मतिवाना ॥
उद्गातहि उत्तर दिसि दीन्ह्यो यज्ञ दक्षिणा भारी ।
अश्वमेध मख कियो समापत दै पुहुमी निज सारी ॥ ९० ॥

यहि विधि सकल राज्य दै विप्रन भयो सुखी नरनाहू।
मुनिवर आय विनय कीन्ह्यो पुनि यह हमरे उर दाहू॥
यह पृथिवी रच्छन में समरथ आपुहि एक भुवाला।
हम ब्राह्मण जप तप व्रत जानैं लेव न मही विशाला॥६१॥
निष्क्रय देहु कछुक भूपतिमनि मनि सुवरन पट गाई।
सदा उग्र शासन रहिये प्रभु आपु सकल महि सांई॥
सुनि द्विज वचन हरषि भूपतिमनि निष्क्रय वखसन लागे।
दियो लाख दस सुरभी सुंदरि दानसील अनुरागे॥६२॥
सौ करोरि मोहर पुनि दीन्हों मुद्रा चैागुन तासू।
दियो ऋत्विजन विविध दच्छिना हय गय बसन अवासू॥
श्रृंगी ऋषि अरु गुरु वशिष्ठ वहं विप्रन कियो विभागा।
हरपि विप्र सब दै आसिष पुनि वोले जुत अनुरागा॥६३॥
सब विधि हम तोषित नरनायक अब नहिं आस हमारे।
द्विज आसिष प्रभाव ते पूजैं सब मनकाम तुम्हारे॥
श्रृङ्गी ऋषि को वोलि अवधपति कह्यो बचन सिर नाई।
कुलवर्द्धन अब करहु यज्ञ प्रभु जाते सुत हम पाई॥६४॥

(दोहा)

श्रृंगी ऋषि मेधा विमल, कियो दंड जुग ध्यान।
सावधान ह्वै नृपति सें लाग्यो करन वखान॥६५॥

पुत्रेष्टि यज्ञ।

(छंद चौबोला)

पुत्रइष्ट हम करब अथर्वन मंत्र सिद्धि जेहि माहीं।
अति सुकुमार कुमार चार प्रभु दैहैं हठि तुम काहीं॥
अस कहि ऋषिन बोलि श्रृंगी ऋषि पुत्रइष्ट आरंभा।
लाग्यो करन वेदविद संजुत हवन कियो बिन दंभा॥६६॥
पुत्रइष्टि सुतहीन अवधपति करन लग्यो तेहि काला।
हवन करत विधि मंत्र सहित श्रृंगी ऋषि तेज विशाला॥
तहँ यजमान भूप के सन्मुख हवनकुंड ते प्यारो।
अतुलित प्रभा महाबल सुंदर तीनि लोक उजियारो॥६७॥
श्याम शरीर अरुन अंबर तनु दृग विशाल अरुनारे।
सोहत हरित मूछ सिर केस सुवेस रोम तनु सारे॥
भयो उदित मन विमल दिवाकर दिव्य विभूषन धारी।
उन्नत शैल श्रृंग सम अंग अनंग हेरि हिय हारी॥६८॥
दर्पित शार्दूल सम विक्रम लक्षन लक्षित आछे।
कर में कनक थार लीन्हें कटि व नक काछनी काछे॥
परम दिव्य पायस सों पूरित रजत पात्र ते ढाँपी।
मनहुं अंक कीन्हे निज नारी प्यारी छवि में छापी॥६९॥
पायस-चरी पुरुप धारी लै दोऊ पानि पसारे।
कह्यो वचन भूपति दसरथ सों मानहु बजत नगारे॥

प्राजापत्य पुरुष मोहिं जानो तुव हित लेतहि आयो ।
तब कर जोर कह्यो कोशलपति हे प्रभु भले सिधायो ॥१००॥
कहहु प्रसन्न बदन अब मोसन करहुं कौन सेवकाई ।
प्राजापत्य पुरुष तब बोल्यो बार बार मुसकाई ॥
देवन को पूजन तुम कीन्हों ताको फल यह आयो ।
धन अरोगवर्द्धन सुतदायक तुव हित देव बनायो ॥१०१॥
लेहु दिव्य पायस भूपतिमनि दीजै रानिन जाई ।
अवसि पाइहौ चारि पुत्र तुम जेहि हित यज्ञ कराई ॥
जे अनुरूप पट्टरानी तव तिन भोजन हित दीजै ।
पाय प्रबल सुत चारि चक्रवर्ती महि राज करीजै ॥१०२॥
तब नरेस अतिसय प्रसन्न ह्वै शिर धरि लीन्हों थारी ।
देवदत्त देवान्न प्रपूरित कनकमयी छबिवारी ॥
प्राजापत्य पुरुष चरनन को बंद्यो बारहि बारा ।
जन्म रंक जिमि लहै देवा तुम तिमि सुख लह्यो अपारा ॥१०३॥
तौन पुरुष को दै परदच्छिन भयो कृतारथ राजा ।
सोऊ अंतर्धान भयो करि अवधराज कर काजा ॥
पुत्रइष्टि अद्भुत करि भूपति किय समाप्त सविधाना ।
बजन लगे तब अवध नगर में थल थल निकर निसाना॥१०४॥
कनक थार लै भूभरतार अपार अनंद प्रकासा ।
सजल नैन पुलकित शरीर द्रुत गो रनिवास अवासा ॥
बचन कह्यो अति मंजु मनोहर कौशल्या गृह जाई ।
सुमुखि सयानि लेहु यह पायस सुतदायक सुखदाई ॥१०५॥

दियो अरध पायस कौशल्यहिं जौन अरध रहि गयऊ।
तामे अरध सुमित्रहि दीन्ह्यो अरध जुगल करि दयऊ॥
आधो दियो कैकयी को नृप पुनि आधो जो बाँचो।
बहुरि विचारि सुमित्रहि दीन्ह्यो तासु नेह महँ राँचो॥१०६॥
कौशल्या, कैकयी, सुमित्रा पायस भोजन कीन्ह्यो।
भानु कृसानु समान तेज सब उदर गर्भ धरि लीन्ह्यो॥
गर्भवती युवती अपनी लखि पूरनकाम नरेसा।
बसत भयो सानंद अवधपुर सरजू दच्छिन देसा॥१०७॥

(दोहा)

देवन हित भूपति भवन, किय हरि गर्भ निवास।
को दयालु अस दूसरो, जैसो रमानिवास॥१०८॥

वाल्मीकि कथा।

(सोरठा)

रामायण को मूल, वाल्मीकि-नारद-मिलन।
प्रश्न कियो अनुकूल, उत्तर दीन्ह्यो देवऋषि॥१०९॥

(छंद चैाबोला)

वाल्मीकि सुनि नारद मुख ते वचन परम सुख पायो।
करि अर्चन उपचार अष्ट जुग चरनकमल सिर नायो॥
लहि महर्षि-सत्कार अपार प्रमोदित देव ऋषीशा।
हरिगुन गावत बीन बजावत चल्यो सुमिरि जगदीशा॥११०॥
जानि प्रभात महर्षि गयो मज्जन हित तमसा तीरा।

जो सुरसरि के निकट वहति मरकत सम नीर गँभीरा ॥
वाल्मीकि को शिष्य विचच्छन भरद्वाज जेहि नामा ।
लै मुनि-वसनकलसकुस आदिक गयो संग मतिधामा॥१११
शिष्य-पानि ते लै वल्कल निज इंद्रियजित मुनिनाथा।
विचरन लाग्यो विपिन विलोकत रह्यो न तहँ कोउ साथा ॥
तब निषाद आयो इक पापी मुनि के लखत तहाँहीं ।
मार्‌यो मिथुन विहंग वान इक मर्‌यो क्रौंच छन माहीं ॥११२॥

(दोहा)

लगत बाण तलफत विहँग, पर्‌यो सशोनित गात ।
हत पति देखि क्रौंकुली, रोदन कियो अघात ॥११३॥
करुना-वरुनालय ललित, अतिसय मृदुल सुभाव ।
सजल नयन मंजुल वयन, बोलत भे ऋषिराव ॥११४॥
वाल्मीकि भाष्यो वचन, तेहि निषाद प्रति जौन ।
छंदरूप है सारदा, प्रकट भई भुव तौन ॥११५॥
जद्यपि साधारन कह्यो, वाल्मीकि मुनिराज ।
छंद अनुष्टुप वचन ते, प्रगट्यो द्रुतहिं दराज ॥११६॥

(श्लोक)

मा निषाद प्रतिष्ठान्त्वमगमः शाश्वतीस्समाः ।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥ १ ॥

(छंद चौबोला)

चिंतत बार बार चित में मुनि वहुरि बुद्धि यह आई ।
छंदबद्ध अश्लोक भयो यह राखहुँ नाहिं छिपाई ॥

वाल्मीकि ऐसो मन में गुनि भरद्वाज कहँ बोले।
कह्यो वचन अतिसय उर बिस्मित निज आसय सब खोले॥
अक्षर सम तंत्री लय संजुत परम मनोहर बैना।
भयो सोक अश्लोक कहत मम और कछू यह है ना॥
फरो कंठ भूलन नहिं पावै कारन कछुक देखाता।
भरद्वाज किय कंठ तबै गुरु भे प्रसन्न अवदाता॥११८॥
शिष्य सहित मुनि धर्मधुरंधर आसुहिं आस्रम आये।
बैठि कथत बहु कथा वृथा नहिं चित अश्लोक लगाये॥
वाल्मीकि के देखन के हित चतुरानन चलि आये।
सकल लोककरता जगभरता तहं अति तेजहिं छाये॥११९॥
प्रमुदित बैठ्यो जबै पितामह लोक ओक करतारा।
मुनि ससोक अश्लोक विचारत कछु नहिं वचन उचारा॥
यहि विधि सोचत लखि महर्षि को हर्षि सुवर्षि अमी को।
कह्यो वचन विधि बिहँसि कियो मुनि यह अश्लोकहिं नीको॥
मम प्रसाद ते प्रगट भई यह सरस्वती मुख तेरे।
यहि विधि रचहु महामुनि मंजुल रामचरित्र घनेरे॥
राम लषन सिय चरित मनोहर रजनीचरगन केरो।
गुप्त प्रकासित चारु चरित सब जून नवीन घनेरो॥१२१॥

(दोहा)

तब लगि राम कथा विमल, तब निर्मित मुनिराय।
चलिहै चारु विचारु बिन, तीनि लोक लै जाय॥१२२॥

बाल्मीकि सों अस बचन, हरषित कहि करतार।
तहँ अंतर्हित है गये, गये ब्रह्म-आगार ॥१२३॥
आसन रचि पूर्वाग्र कुस, करि आचमन मुनीस।
रचन हेतु रघुबर चरित, नाइ सीस जगदीस ॥१२४॥
बैठ्यो करत विचार मुनि, सुमिरि राम कर जोरि।
निश्चल लगी समाधि मन, गयो राम रस बोरि ॥ १२५ ॥
श्रीरघुवंस-चरित्र को, रचन सहित विस्तार।
मुनि कीन्ह्यो सूचन प्रथम, बरनहुँ सकल उदार ॥१२६॥

(छंद चौबोला)

जेहि बिधि जन्म लियो कोसलपुर नारायन सुखसारा।
राम नाम अभिराम धाम सुख हरन हेतु भुविभारा॥
क्षमासिंधु पुनि दीनबंधु प्रभु सील सँकोच सुभाऊ।
बरन्यो सकल महामुनि मंजुल बालचरित्र उराऊ ॥१२७॥
पुनि बरन्यो कौशिक मुनि आगम राम लषन जिमि माँग्यो।
लहि वशिष्ठ मुनि को अनुशासन नृप सुत दियो अनुराग्यो॥
काम कथा कौशिक कुल गाथा जथा ताड़ुका मारी।
जिमि कीन्ह्यो कौशिक मख रक्षन रजनीचर संहारी ॥१२८॥
बरन्यो पुनि मिथिलेस समागम रंगभूमि धनु-भंगा।
वैदेही विवाह सुख बरन्यो बंधु विवाह प्रसंगा॥
श्रीरघुपति अभिषेक तयारी विघ्न कैकयी कीन्हा।
सीता लषन समेत राम बनवास भूप जिमि दीन्हा ॥१२९॥
बरन्यो भरतागमन बहुरि मुनि दसरथ को जलदाना।

भरत राम संवाद कह्यो पुनि लहि पादुका पयाना॥
सूपनखा कुरूप जिमि कीन्ह्यो करत हास संवादा।
खर दूषन त्रिसिरा वध वरनन पुनि दसकंठ विषादा॥१३०॥
पुनि मारयो मारीच जथा प्रभु वरनि जानकी-हरना।
राम विलाप कलाप कह्यो पुनि गीधराज गति करना॥
ऋष्यमूक को गवन पवनसुत मिले जवन विधि आई।
पुनि सुग्रीव सनेह-सीम कहि दुंदुभि अस्थि ढहाई॥१३१॥

(दोहा)

सप्तताल भेदे जथा, वालि-सुकंठ-विरोध।
पुनि वाली सुग्रीव रन, वध्यो वालि-करि क्रोध॥१३२॥
वैदेही दरसन कियो, जेहि विधि पवनकुमार।
दियो सुंदरी मुंदरी, वूड़त मनहुँ अधार॥१३३॥
पुनि वरन्यो रावण-निधन, सीतामिलन हुलास।
कह्यो विभीषन को तिलक, पुहुपविमान विलास॥१३४॥
अवध नगर आगम कह्यो भरत सभाग समोद।
राजतिलक रघुवीर को, वरन्यो प्रजा विनोद॥१३५॥
वानर विदा बखान किय, रघुपति रंजन राज।
सिय गवनी पुनि विपिन जहँ, सुंदर ऋषिन समाज॥१३६॥
अब आगे को चरित जो, कह्यो सो उत्तर पाहिं।
वरन्यो यह अनुक्रमणिका, ऋषि रामायण माहिं॥१३७॥
मुनि बिरच्यो चैाविस सहस, रामायण अस्लोक।

सर्ग पंचशत कांड पट, हरन हार सब शोक ॥१३८॥
उत्तर कांड रच्यो बहुरि, कांड भविष्य समेत।
आठ कांड यहि विधि भयो, रामायण सुखसेत ॥१३६॥

रावण कुंभकर्ण की जन्मकथा।

(छंद चौबोला)

जन्म्यो जबहिं जलंधर रावण महाबली सुरजेता।
तब भूभारहरन हित प्रगटे केशव कृपानिकेता॥
दियो देवऋषि साप रुद्रगन ते दोउ भूतल माहीं।
रावण कुंभकर्ण प्रगटे जिन सरिस कोउ बल नाहीं ॥१४०॥
भानुप्रताप भयो कोउ भूपति धर्मनिरत दोउ भाई।
विप्र सापबस दसकंधर अरु कुंभकर्ण भे आई॥
रामजन्म में हेतु अनेकन कहँ लों कहौं बखानी।
पै पुराण श्रुति संमत सब विधि जौन कहे मुनि ज्ञानी ॥१४१॥
हरि पार्षद जयविजय अनूपम सनकादिक को रोके।
ते प्रचंड दिय साप दुहुनँ कहँ होय असर्पक ओके॥
असुर भाव दोउ तीनि जन्म लगि जन्म जगत महँ पैहौ।
हरि-कर लहि बध बिगत साप ह्वै पुनि बिकुंठ कहँ ऐहौ॥१४२॥
प्रथम जन्म ते हिरनकसिपु अरु हिरन्याक्ष भे जाई।
राक्षस रावण कुंभकर्ण पुनि तेइ भये महि आई॥
पुनि सिसुपाल दंतवक्रहु भे तजे न आसुर भाऊ।
महाबली त्रिभुवन के जेता डरैं जिन्हैं सुरराऊ ॥१४३॥

(दोहा)

कनककसिपु कनकाक्ष को, हन्यो नृसिंह वराह ।
कुंभकर्ण रावण हन्यो, है प्रभु कोशल-नाह ॥१४४॥
दंतवक्र सिसुपाल को, हन्यो देवकी लाल ।
विगत साप हरि पारषद, वसे विकुंठ विसाल ॥१४५॥

राम–जन्म

जब ते नारायण कियो, नृप घर गर्भ निवास ।
तब ते कोसल नगर महँ, नित नव होत हुलास ॥१४६॥
जैसे तैसे बीतिगे, कलपत द्वादस मास ।
आई बहुरि वसंत ऋतु, बिमल भई दस आस ॥१४७॥

(कवित्त)

विमल वसंत ऋतु तामें मधु मास सुभ, स्वच्छ सित पच्छ नौमी तिथि ससिबार हैं ॥ अभिजित विजय प्रदाता है मुहूरत सो, सूल जोग कौलौ नामकरण उदार हैं ॥ रघुराज वेला मध्य दिवस की आई जबै, अति मन भाई सुखदाई निर्विकार हैं ॥ सगुन सोहावन अनेक तहाँ होन लागे, परै लागे खलन परावन अपार हैं ॥१४८॥

कुँवर जनम जानि अवसर आनंद को, माच्यो सोर भैार राज मंदिर में भारी है ॥ अति अतुराई एक सखी चलि आई तहँ, वैठे रघुवंशी राजवंशी दरबारी है ॥ भूपमनि कान में

सुधासमान बानी कही, सावन सलिल जनु सूखत कियारी है॥ रघुराज मानो प्राची दिसि तें उदोत भयो सोक सर्वरी को नासि आनँद तमारी है॥ १४६ ॥

(सोरठा)

तब आयो सो काल, जो दुर्लभ बहु कल्प महँ।
प्रगटे दसरथ-लाल, कौशल्या की सेज पर ॥१५०॥

(कवित्त)

सिद्धिन की सिद्धि दिगपालन की ऋद्धिवृद्धि, वेधा की समृद्धि सुरसदन भुरै परी। ब्रह्म की विभूति करतूति विश्व-कर्मा की, साहिवी सकल पुरहूत की लुरै परी ॥ रघुराज चैत चारु नौमो सित ससिवार, अवध अगार नव निद्धिहू धुरै परी। वैभव विकुंठ ब्रह्मानंद की अपार धार कौशला की कोखि यकवारहीं कुरै परी ॥१५१॥

शंभु औ स्वयंभु जाकी भृकुटि निहारै नित, लोकपाल जाके पदकंज सिर धारै हैं। देवऋषि ब्रह्मऋषि राजऋषि महाऋषि, महिमा विचारैं पै न पावैं नेकु पारै हैं॥ वानी को विलास है प्रकाश चारि वेदन को, विश्वसृष्टिपालन सँहार खेलवारै हैं॥ सोई रघुराज भूमि भारै के उतारै हेतु, लीन्ह्यो अवतारै अवधेश के अगारै हैं ॥१५२॥

कोसलपुर बाजे वधैया।

रानि कौशला ढोटा जायो रघुकुल-कुमुद-जोन्हैया॥
फूले फिरत समात नाहिं सुख मग मग लोग लोगैया।

सोहर सोर मनोहर नोहर माचि रह्यो चहुँ घैया ॥
छिरकत कुंकुम रंग उमंगित मृगमद अतर मिलैया।
धार अपार बही सरिता सम सरजू पीत करैया ॥
श्रीरघुराज जगत महँ जागो वर्ण दकार सदैया।
कोउ न रह्यो तीनौ पुर में अस एक नकार कहैया ॥१५३॥

(दोहा)

चैत शुक्ल नौमी नखत, पुनर्वसू विधुवार।
कौशल्या के भवन में, भयो राम अवतार ॥१५४॥
चैत शुक्ल दसमी विमल, नखत पुष्य कुजवार।
भयो कैकयी के भवन, भरतचंद्र अवतार ॥१५५॥
चैत शुक्ल एकादशी, अश्लेषा बुधवार।
भयो लषन रिपुदमन को, जन्म जगत सुखसार ॥१५६॥
बिछे बिछौने जरकसी, लसी ललित दरबार।
पीत वसन भूषन बने, रघुवंशी सरदार ॥१५७॥
ल्याईं सखी लेवाय तहँ, आये भवन भुवाल।
नांदीमुख क्रम सों कियो, हरषि शराध उताल ॥१५८॥

(छंद चौबोला)

भवन भवन में परम मनोहर सोहर गावन लागीं।
आनँद उमँग उराव अटक नहि इंदुमुखी अनुरागीं ॥
भई भीर भूपति के द्वारे रज पषान है जाहीं।
देस देस के वेस नरेस सुद्वार देस दरसाहीं ॥१५९॥

कोउ तुरंग चढ़ि कोउ मतंग चढ़ि कोउ सताँग चढ़ि आये।
अति उछाह नरनाह भरे सब संपति विपुल लुटाये॥
जिनके धन नहिं ते पट आयुध देत लुटाइ उछाही।
जे लूटत तेउ तुरत लुटावत कोउ न भये धनग्राही ॥१६०॥
द्वारे द्वारे बजत नगारे घनकारे घहरारे।
बिपुल किता के विविध पताके चपला के छबिहारे॥
तोरन मनहु इंद्रधनु सोहत मोर कूक सहनाई।
बरषत आनँद आँसु अंबु सोइ अवध प्रजा समुदाई ॥१६१॥
विविध रंग अंबर कंमर कसि बिबिध रंग सिर पागे।
विविध रंग तेइ कुसुम विराजत अंगराग सुख रागे॥
विविध सुगंधित अनिल बहत तहँ जनसमूह घस मंदा॥
छ्वै सरजू शीतल अति आवत परसत परम अनंदा ॥१६२॥
बहु मुरचंग मृदंग सरंग उपंग सुसलिल तरंगा।
बाजत रंगभूमि रस रंगनि, तेइ मनु बदत विहंगा॥
नर्तक नचत मयूर मनहु बहु भवन कुंज छवि छाये।
सोहर मंजु पुंज सुख को अति भौरन गुंज सोहाये ॥१६३॥
दान अखंड अमल अंबर सम कीरतिकर दिसि छाजै।
उडुमंडल द्विजमंडल सोहत तिमि वशिष्ठ द्विजराजै॥
राजराज रघुराज तनय सुख उदय देखि कृतकाजा।
मानहु सकल समाज जोरिकै मिलन चल्यो ऋतुराजा ॥१६४॥
निर्मल अवध जलाकर सोहत विकसत हित जलजाता।
फटिक अटा ते सरद घटा मनु कोक वृंद बुध ख्याता॥

पूरित सस्य प्रमोद मही सब ससि भूपति ससिसाला।
लघु बड़ सोहत रत्न कलस बहु तेइ तारन की माला ॥१६५॥
देव विमानावली विराजति गगन पंथ मलहीना।
सारस सुखित मराल करौंकुल जनु सोहत पख पीना ॥
रघुवंशी सरदार रत्न की खोसे सीस कलंगी।
मनहुं सालि की वालि विविध अति सोहि रहीं बहुरंगी १६६॥

(दोहा)

अवध भुवार अगार में, लखि कुमार अवतार।
मनहुं सरद ह्वै सारदा, खड़ी करति बलिहार ॥१६७॥

(सोरठा)

को कहि सके उछाह, रामजन्म में जस भयो।
लहै कौन विधि थाह, मनुज महोदधि में प्रविसि ॥१६८॥

(छंद चौबोला)

बोलि वशिष्ठ आदि गुरु वृद्धन कुंवरन भवन सिधारे।
नांदीमुख शराध आदिक नव जातकर्म निरधारे॥
जो राजर्षि यज्ञ भागन ते अबलों नाहिं अघायो।
ताहि कनक मुद्रा महं मधु धरि दसरथ भूप चटायो ॥१६९॥
हिरन्याक्ष अरु हिरनकसिपु भट आदिक जो संहारयो।
ताहि प्रेतवाधा वारन हित राई लोन उतारयो ॥
जासु चरन प्रगटित सुरसरिता कीन्हों विश्व पुनीता।
तेहि सुचि करन हेत कौशल्या नहवावै अति प्रीता ॥१७०॥
जो बलि छल्यो बाढ़ि बामन बपु द्वै पद किय संसारे।

धन्य भाग्य तेहि रानि कौशला छोट रूप महँ पारै॥
जासु नाम मुख लेत रोग भव छूटत विनहिं प्रयासा।
ताहि देत घूंटी नृप-भामिनि देखहु अजब तमासा॥१७१॥

(कवित्त)

पेषिकै प्रदोष काल भौन महिपालजू के, चामीकर थारन में परम प्रभा दली। धै धै हेम दीपक प्रदीपति सुपंथ छाइ, पहिरे सुरंग पट धारे भूषनावली॥ मंगलामुखीन संग गावैं मंगलानि गीत, मंगलानि द्रव्य लीन्हे चारु कुसुमावली। रघुराज आई राजमंदिर अवध नारी, तारावली आगे करि मानो चपलावली॥१७२॥

(घनाक्षरी)

रोशनी के वृक्ष रोशनी के वने ऋषि वहु, रोशनी के गुच्छे रोशनी के रक्ष अच्छे हैं। रोशनी के वाजी वाजी रोशनी की गजराजी, रोशनी के राजिव तड़ाग गन स्वच्छे हैं। चंद चांदनी सों कहूँ विमल प्रकास पूरो, कहूँ भान भासही सों फूल जात लच्छे हैं। भनै रघुराज कहूँ श्याम रंग पीत रंग, हरित सुरंग रंगभूमि रंग लच्छे हैं॥१७३॥

(छंद चौबोला)

मोदमई यहि भांति चैत की नौमी निसा सिरानी।
भयो भोर चहुं ओर सोर मग करन लगे सुखदानी॥
उठि भूपति करि प्रातकृत्य सब लियो वशिष्ठ बोलाई।
दीन्हों द्विजन दान संपति बहु बार बार सिर नाई॥१७४॥

महा महर्षि वशिष्ठ आदि नृप लै अंतहपुर गयऊ ।
कुल व्यवहार चार संसारी सकल निवाहत भयऊ ॥
बीति गये यहि भांति दिवस दस मंगल मोद उराये ।
एकादसयें दिवस भूपमनि मुदित वशिष्ठ बोलाये ॥१७५॥
सिंहासन बैठाय पूजि पद बार बार सिर नाई ।
अति विनीत ह्वै विनय कियो नृप आनंद अंबु बहाई ॥
देव मनोरथ सकल हमारे पूरे दया तिहारे ।
जदपि रहे दुर्लभ परमेश्वर करुना नैन निहारे ॥१७६॥

नामकरण ।

(दोहा)

नाथ घरी सुख सोधि कै, द्विजन सहित बिन देर ।
नामकरन अब कीजिये, चारि कुमारन केर ॥१७७॥

(छंद चौबोला)

माधव कृष्ण पंचमी सुभ तिथि नामकरन अब होई ।
यह सुनि अवध प्रजा उछाह वस लहे नींद नहिं कोई ॥
नई साजु साजन सब लागे बांधे पीत निसाना ।
तोरन कदलिखंभ द्वारन प्रति ताने विसद विताना ॥ १७८ ॥
सोरभोर मचि रह्यो नगर महँ नामकरन उतसाहू ।
कियो जनाव जाइ रनवासहि यह उराउ नरनाहू ॥
नामकरन सुनि सकल कुमारन अति हुलास रनिवासा ।

कियो विचार मनहिंमन ऐसो धनि धनि भाग्य हमारा ॥
अस विचारि सिर नाइ मनहिं मन वैठे निकट मुनीसा ।
वोलि भूप कहं सूप निकट तव सुमिरि सत्य जगदीसा॥१८५॥

(दोहा)

गुन अनेक अभिराम अति, विदित तीनिहू धाम ।
आम जगत विस्राम अति, अहै नाम श्रीराम ॥१८६॥
पुनि कैकयी-कुमार को, लीन्हो अंक उठाई ।
मुनि वशिष्ठ वोले वचन, कोसलपतिहि सुनाइ ॥१८७॥
भरतखंड-वासिन सकल, भरिहै सव मनकाम ।
ताते यह कहवाइहैं, जगत भरत अस नाम ॥१८८॥
लक्षित सकल सुलक्षननि, महावीर जग आम ।
तीजा सुत नृप रावरो, लहै सुलक्ष्मण नाम ॥१८९॥
वैरिवृंद वाधक विदित, विस्व विजय वपु वाम ।
चौथो सुत नृप रावरो, लहै शत्रुहन नाम ॥१९०॥
अस कहि मुनिवर कनक के, चारि पान कर लीन ।
चारि कुमारन के तुरत, चारि नाम लिखि दीन ॥१९१॥

(छंद चौवोला)

औरहु चार करावहु मुनिवर ससि सूरज सुत देखैं ।
तुम्हरी कृपा नाथ यह आनँद हमको भयो अलेखैं ॥
चारि कुमारन के कर ते कछु दीजै दान कराई ।
धर्म-निसा महँ करहु नाथ पुनि षष्ठी कृत्य वनाई ॥१९२॥

उठीं सकल रानी हुलसानी पीतबसन तनु धारे।
दसरथ पीतांबर पहिरे तहं मंजुल वचन उचारे॥
देव तिहारी कृपा भये सुत ताते तुमहिं उठाई।
लै आँगन प्रभु चारि कुमारन रवि ससि देहु देखाई॥१६३॥
मुनि वशिष्ठ अभिलषित सिद्ध गुनि रामहि लियो उठाई।
विहँसि देखावन ससी दिवाकर आँगन में लै जाई॥
रामहि प्रथम देखायो रवि ससि पुनि लषनैं मुनिराई।
बहुरि भरत रिपुसूदन कहं तहं अति आनँद उर छाई॥१६४॥

(सवैया)

प्रभु आपने आपने देखन को अँगना में कढ़े मुनि अंक लसैं।
धनि भाग्य विचारि तमारि तहां रथ रोकि रहे हिय में हुलसैं॥
तिनको करि वंदन बारहिंवार ससीजुत मोद लहे सरसैं।
रघुराज गुने हम देखे तिन्हैं अजौं देखन को जो अजौ तरसैं॥१६५॥

(सोरठा)

सीत भानु अरु भान, यहि विधि सुतन देखाइकै।
दियो विविध विधि दान, अवधनाथ आनँद मगन॥१६६॥

(दोहा)

मुनिवर कुँवरन पानि ते, लक्ष लक्ष वर धेनु।
दान करायो सविधि तहँ, भयो दीन गन चैनु॥१६७॥

(छंद चौबोला)

कह्यो राजमनि पुनि रघुबंसिन आजु जाति जेवनारा।
भोजन-भवन चलहु बांधव सब हिलि मिलि करहिं अहारा॥

सकल राजवंसी रघुवंसी भोजन करि सुख छाये।
अचवन करि नरनाथ हाथ सों तांबूलन को पाये ॥१९८॥
बहुरि प्रजन को कियो निमंत्रण व्यंजन विविध जिवाँये।
पौर जानपद द्वै असीस सब निज निज भवन सिधाये॥
जथा कियो सत्कार बाहरे दसरथ नृप मतिखानो।
तिमि बांधवन पौर नारिन को सतकारीं सब रानी ॥१९९॥
खात खवावत हँसत हँसावत भै संध्या सुखदाई।
छठी चारु उपचारु करन नृप कह्यो वशिष्ठ बोलाई॥
परम हुलास प्रकास हिये महं गुरु रनिवास सिधारे।
छट्ठी भवन साजु सब सुंदर वेद विधान सवाँरे ॥२००॥
कौशल्या कैकयी सुमित्रा बैठीं सुतन समेतू।
कनककुंभ मनिखचित ससत धरिगे कनक निकेतू॥
मनिन दीप-अवली अति राजति आगे गौरि गनेसू।
पुरट पात्र सामग्री सोहति जैसी वेद निदेसू ॥२०१॥
अवसर जानि सुमंत तुरंतहि भूपति गये लिवाई।
गुरु वशिष्ठ तहं वेद मंत्र पढ़ि कृत्य अरंभ कराई॥
छठी-भवन भूपति रानिनजुत छठीकृत्य सब करहीं।
खड्ग कमान बान करियारी मंथ पूजि सुख भरहीं ॥२०२॥
यहि विधि करिकै छठी कर्म सब लक्ष गऊ नृप दीन्हें।
गुरु वशिष्ठ विप्रन कहं बाँटे ते सादर सब लीन्हें॥
अवसर जानि रैनि आधी गत सैन-अयन पगु धारे।
छठी-भवन जागरन करी तिय गाइ बजाइ अपारे ॥२०३॥

यहि विधि बरहौं छठी सुतन को भूपतिमनि निरधारी।
बसे अवध आनंद अवधि लहि निरखि कुमारन चारी॥
नामकरन जबते पुत्रन को कीन्हे दसरथ राई।
तबते होत रहेउ नित नव नव मंगल मोद बधाई॥ २०४॥
रोजहि मुनि मंडलो महीपति सादर निवति जेवावैं।
दीन द्विजन गृह बोलि बोलि बहु व्यंजन विविध खवावैं॥
सुंदर कनक अमोल खटोलन नील निचोलन धारे।
किलकत कबहुँ हँसत कहुँ रोवत सोवत चारि कुमारे॥२०५॥
कबहुँ निहारत कर मुख डारत कबहुँ उचारत गूंगा।
पय प्यावति जननी लखि सूखत अधर निदरि दुति मूंगा॥
सखी डुलावहि बिजन बैठि कोउ राई लोन उतारैं।
तेल बोरि पट अनल जरावहिं दीठि दीप द्रुत झारैं॥२०६॥
गुरु वशिष्ठ बुलवावहिं रानी आवहिं साँझ सबेरे।
हाथदेन के ब्याज परसि पद पावहिं मोद घनेरे॥
कोउ मुठुको घुंनघुना डुलावैं कोउ करताल बजावैं।
अंक उठाइ कोउ हलरावैं सुत रोवन नहिं पावैं॥२०७॥
सखि कज्जल को परम सलोना भाल डिठोना देहीं।
मनु पंकज कोना पर बैठो अलिछोना मधु लेहीं॥
कबहूँ अंक उठाइ भामिनी मनिन चित्र दरसावैं।
कबहुँ अंग धरि मनिन खिलोनन अनुपम खेल खिलावैं॥२०८॥

अन्नप्राशन

(दोहा)

यहि विधि अवध अनंद महं, बीत्यो पंचम मास।
लाग्यो छठवाँ मास पुनि, अनि हुलास रनिवास ॥२०६॥
एक दिवस नरनाह तव, गुरु मंदिर महं जाइ।
गुरुपद पंकज परसिकै, बार बार सिर नाइ॥ २१०॥
बोले बचन विनीत है, सुनिये देव दयाल।
अब आयीं कुंवरन सकल, अन्नप्रासनी-काल ॥२११॥

(छंद चौबोला)

सुनत वशिष्ठ हुलसि हिय बोले भले कह्यो महराजा।
चारि कुमार अन्न को प्रासन करवावहु कृत काजा॥
अस कहि सुभ दिन सोधि ब्रह्मऋषि तुरत सुमंत बोलायो।
भादौं मास श्रवन द्वादसि को सुदिवस सुखद सुनायो॥२१२॥
सुनत सुमंत पुलकि तनु बोले भले कह्यो मुनिराई।
हौं अब जात साज सजवावन जस मुनिराज रजाई॥
आइ गई द्वादसी हुलासिन अन्नप्रासनोवाली।
खैरभैर माच्यो कोसलपुर चलीं सकल जुरि आली ॥२१३॥
चले रंगमंदिर अति सुंदर जहं इंदिरा प्रिया लै।
तहं कौशल्या अरु कैकेयी लषन जननि तेहि काले॥
औरहु त्रिसत साठि महरानी रची सची इव साँची।
परिचारिका सहस्रन सोहैं रति रंभा छवि राँची॥ २१४॥

गावहिं मंगल गीत प्रीत भरि कनक कुंभ सिर धारे।
कोउ दधि दूब हरद अच्छत भरि चलीं कनक कर थारे॥
यहि विधि सहित सकल रनिवास हुलास भरे महिपाला।
रंगनाथ मंदिर महं आये लै चारिहु निज लाला॥२१५॥
कियो महीपति रंगनाथ को पूजन सकल प्रकारा।
बार बार बंदन करि सिर सों करि अस्तुति बहु बारा॥
चारि कुमारन के कर ते तहं नेउछावरि करवाई।
बोलि परम परवीन सुआरन बहु व्यंजन बनवाई॥२१६॥
धरयो रंगपति के आगे सब थारन पुरट भराई।
गुरु वशिष्ठ तहं रंगनाथ कहं दियो निवेद लगाई॥
रंगनाथ को लै प्रसाद मुनि रामहिं दियो खवाई।
बहुरि भरत कहं तिमि लषनहुं कहँ रिपुहन को सुखछाई॥
मुनि कह सुनहु महीप सिरोमनि लै निज अंक कुमारा।
करहु अन्नप्रासनो पानि निज जथा बंस व्यवहारा॥
पढ़न लगे स्वस्तैन ब्रह्मऋषि गाइ उठीं सब नारी।
लै नरनाथ अंग रघुनाथहि रंगनाथ संभारी॥२१८॥
तनक तनक सिगरे सुख व्यंजन सुतहि खवावन लागे।
मोचत जुगल विलोचन आनँद वारि परम अनुरागे॥
रानी सकल कुमारन को तब राई लोन उतारो।
भाल डिठौना दै अति लोना फेरि उतारी बारी॥२१९॥
भूपति लै चारों कुंवरन को सपदि बाहिरे आये।
शत्रुंजय सिंधुर हरि गज सम तापर दियो चढ़ाई॥

पुनि तुरंग पर पुनि स्यंदन पर दसस्यंदन चढ़वाई।
कुंवरन कर छुवाय संपति बहु दीनन दियो लुटाई ॥२२०॥

(दोहा)

अन्नप्रासनी राम की, यहि विधि भई विसाल ॥
अवध प्रजा आनँद मगन, बसे सहित महिपाल ॥२२१॥

(छंद चौबोला)

जब ते अन्नप्रासनो ह्वै गै रंगनाथ के द्वारै।
तव ते कुँवर कढ़हि नित बाहर प्रमुदित प्रजा जोहारैं ॥
मनि मंदिर में रत्न पालने मंजुल रेसम डोरी।
राजकुँवर तिनमें अति राजत करत चित्त की चोरी ॥२२२॥
नीलक वसन उढ़ाय चारहू बालक सेज सोहाहीं।
मानहु पूरन चारि चंद्रमा जलद पटल मधि माहीं ॥
साँझ समय भूपति नित आवत सुखी होत सुत देखी।
अंक उठावत अति दुलरावत निज कहँ धनि जग लेखी ॥२२३॥

(दोहा)

एक समय पयपान की. बिलम भई वस काम।
पद को अँगुठो निज मुखै, मेलि लियो तव राम ॥२२४॥

(कवित्त)

चौंकि उठे संकित विरंचि संच रंच नहीं, संकर ससंकित बिचारैं तेहि जाम हैं। छोनो छोड़िबे को चहैं दिग्गज दहंस मानि, हैलखैल माचि रहे देव धाम धाम हैं ॥ भनै रघुराज उठी तरल तरंग सिंधु, प्रलै के पयोद धाये व्योम ठाम ठाम हैं।

डोल्यो सिसुमार त्यों तरनि तारा तारापति, चरन अँगूठो जब मेले मुख राम हैं ॥२२५॥

शंकर आगमन

(दोहा)

एक समय बैठो रहीं, कौशल्यादिक मात।
पय प्यावत हलरावतीं, कहि कहि लालन तात ॥२२६॥

(छंद चौबोला)

सखी सयानि एक तहं आई ऐसे बचन सुनायो।
जोगी बाबा नारि लिये यक द्वारदेस महं आयो॥
बैल चढ़ो अँग भस्म चढ़ाये भानु समान प्रकासू।
बालक करतल देखि कहत सब जन्म हाल अनयासू॥२२७॥
ल्याउ लेवाइ तुरत जोगीवर कौशल्या कह बानी।
गई लेवाइ ताहि अंतहपुर महामोद मन मानी॥
जोगी बाबा देखि रामकहं कीन्ह्यों मनहिं प्रनामा।
करी मनहि मन तासु नारि नति पूर भयो मनकामा॥२२८॥
कौशल्या कैकयी सुमित्रा चलि आईं सब रानी।
तेहि बैठाय पीठ पद धोयो लै पानी निज पानी॥
ल्याइ चारिहूं लालन को तब डार्यो चरनन माहीं।
जोगी कह्यो जियै जुग जुग सुत इन कहं कहुं डर नाहीं॥२२९॥
भये मनोरथ पूर हमारे देखि कुमार तिहारे।
तोहिं सम भाग्यवंत नृपवरनी हम नहिं जगत निहारे॥

लै जोगी निज गोद राम को मोद मानि मन भूरी ।
छ्वै सिर कर पुनि परसि कंजपद धारयो सिर पदधूरी ॥२३०॥
पूजि गई कामना हमारी लालन देखि तिहारो ।
अब मैं जान चहौं अपने घर करि रच्छन तुव प्यारो ॥
अस कहि उमासहित परदच्छिन दीन्ह्यों चारि पुरारी ।
बार बार पद परसि पानि सों कीन्ह्यों गमन सुखारी ॥२३१॥

बाल-लीला

(दोहा)

यहि विधि बीते बरस जुग, एक दिवस मुद बाढ़ ।
कनककुंभ कर पकरिके, भये राम महि ठाढ़ ॥२३२॥

(छंद चौबोला)

धाई लखि धाई सुखछाई मातन खबरि जनाई ।
ठाढ़े भये कुंवर यहि अवसर कृपा करी जगसाँई ॥
आनँद अंबु अंब अंबक भरि सबै तहां जुरि आईं ।
दीनन दीन्ह्यों दान मान करि कुंभ सो धाई पाईं ॥२३३॥
खबरि पठाइ दई दसरथ पहं राम भये अब ठाढ़े ।
उभै पानि नृप मनिन लुटावत आये अति मुद बाढ़े ॥
अर्ध इंदु इव लघु ललाट पर लागे तीनि दिठोना ।
सुधा पियन हित मनहुं सीस मधि लसैं भुवंगम छोना ॥२३४॥
त्रिकुटी ते कानन लगि सोहत भृकुटि रेख लघु लोनी ।
मनहुँ काम लिखि दियो लीक द्वै इतनी ही छवि छोनी ॥

सील अयन जुग नलिन नैन वर अति बिसाल कजरारे।
मनहुँ मीन छवि जाल फंसे द्वै सोभासिंधु करारे ॥२३५॥
मन हुलासिका नवल नासिका लघुमुकताजुत राजै।
मानहुँ चंपककली भली विधि ओस बिंदु अति भ्राजै॥
अति मृदु वदन अधर अरुनारे लसहिं दँतुरिया प्यारी।
मनहुँ कंज बिम्ब धरै बिंब जुग अंतर बीज निहारी॥२३६॥
लसत कपोल अमोल गोल अति तनक अलक छहराहीं।
मनहुं सोभ सरसी मनि मंडित काम केतु फहराहीं॥
मधि हीरा दुहुँ दिसि मुकुतावलि कठुला कंठ बिराजा।
बंधु कंबु कहँ भुज पसारि जनु मिलन चहत द्विजराजा॥२३७॥
छोटी मुकुतमाल लहरै उर जननी करन सँवारी।
मानहु जमुनधार हंसावलि बैठी पंख पसारी॥
छोटे छोटे भुजन बिजायठ छोट कटक कर माहीं॥
मनहु भरी छवि छरी मदन की बंधन कनक सोहाहीं॥२३८॥

(कवित्त घनाक्षरी)

कोसलेस-लालजू के लाल लाल पदतल,
अंकुस कुलिस कंज चक्र धुज रेख हैं।
ठमुकि ठमुकि वागैं कौशिला के आंगन मैं,
झुमुकि झुमुकि बाजैं भूपन बिसेष हैं॥
द्रवीभूत होती मनि उपरैं चरन चारु,
चूमैं चंद्रबदनी अनंदित असेप हैं।

रघुराज तेई पद पावन की लाख लाख;
करै अभिलाख लेखा लोकन अलेख हैं ॥ ॥२३९॥

(दोहा)

यहि विधि बीती बैस कछु, करत विनोद विसाल।
अवध अजिर विचरत भये, पंच वर्ष के बाल ॥२४०॥

कागभुशुंडि मोह

(कवित्त)

नोल सैल बासी बाल राम को उपासी काग,
जानिकै अवध अवतार अविनासी को।
आयो सो दरस आसो परम हुलासो हिये,
जाको बरदान अहै विश्व के प्रकासी को।
कबहुँ न तोहिं महामाया मोह भासी भव,
ह्वैहै तू अज्ञान नासी कल्प कल्प नासी को।
वायस विलोकि औधवासी रघुराज राम,
बालक विलासी भूल्यो ब्रह्म गति खासी को ॥२४१॥
वायस बिचारयो बुद्धि सुद्धि सत्वरूप जाको,
सत्ता ते जगतव्यापी माया जासु दासी है।
सत चिदानंद रूप है अनूप रघुराज,
सृजत हरत पालै विश्व अविनासी है ॥
सोई परब्रह्म लीन्ह्यों औध अवतार सुन्यो,
देख्यो आइकै सो तहं ब्रह्म तेजरासी है।

रोटी गहे हाथ में सुचोटी गुहे माथ में,
लँगोटी कछे नाथ साथ बालक विलासी है ॥ २४२ ॥
भरि अनुराग काग वागै प्रभु पाछे लाग,
पद्मराग अंगन में भाग बड़ मानिकै।
भूमि गिरे जूठे कन खात न अघात उर,
जात कहुँ आगे गति चंचलसी ठानिकै ॥
एक बार पानिसों गिरायो राम रोटी टूक,
भाग्यो चोंच दावि द्रोन भीति अति आनिकै।
हाथ को पसारे नाथ माथ को उघारे धाये,
बायस के साथ रघुराज जन जानिकै ॥२४३॥

(सवैया)

बायस पीठ को औ प्रभु पानि को अंतर अंगुल द्वैक देखानो।
भाग्यो महा भभरो भव लोकन सातहु स्वर्ग पताल परानो ॥
मेरु के कंदर अंदर हू धस्यो देख्यो जबै मुरिकै डर मानो।
अंगुली द्वै निज पीठि ते पानि पसारे भुजा रघुराज लखानो ॥
बायस भीति सों मूद्यौ दृगै पुनि खोलि लख्यो पुर कोसल आयो।
पाँचही वर्ष के अंगन खेलत ताहि विलोकि हरी मुसुकायो ॥
ताही समै प्रभु के बिहँसात तुरंतही सो मुख जाय समायो।
श्रीरघुराज अनेकन अंड-कटाह लख्यौ कछु अंत न पायो ॥२४५॥
बीते अनेकन कल्प तहाँ भटकात कहूँ थिरता नहिं पाई।
देखो बिचित्र भली रचना वहु साँसहि लेत सो बाहर आई ॥
श्रीरघुराज लख्यो प्रभु को कर रोटी सुखेलत अंगन धाई।

काग कह्यो हरि सो सिरनाइ हर्यो भ्रम मो महिमा दरसाई ॥
श्रीरघुराज को वंदन कै गिरि नील को वायस कीनो पयानो।
भक्तसिरोमनि ताहि को ह्वै कै दियो निज भक्तिहि को बरदानो ॥
खेलन लागे सखान के संग कोऊ यह चित्त चरित्र न जानो।
जानि विलंब तुरंतहि अंब वोलाइ कराइ दियो पय पानो॥२४७॥

(दोहा)

करन लगे चारिहु कुंवर, भाजन विविध प्रकार।
जननि डोलावहिं कर बिजन, निरखहिं मुख बहु बार॥२४८॥

(छंद चौवोला)

इमि भोजन करवाइ माइ सब निज कर कर पग धोई।
पोंछि बदन पौढ़ायो लालन पालन में सुदमोई ॥
चापहिं पद पंकज कर कंजन सजनी विजन डोलावैं।
मंद मंद रघुनंदन को तहं प्रिय पालने झुलावैं ॥२४६॥
दुपहर जानि जगे चारिउ सुत उबटन मातु लगावैं।
गर्म सुगंधित सलिल विमल रचि सुतन सपदि नहवावैं॥
देह पोंछि पुनि पेंछि श्याम कच चोटी सुभग बनावैं।
एक एक मनि भाल उपर गहि फिरि भूषन पहिरावैं॥२५०॥
बहु बिधि करि शृंगार कुमारन सखि मंडल करि संगा।
छोटि छोटि पहिराइ पनहियां नृप दरबार उमंगा ॥
यहि विधि चारो कुंवर सखिन सँग भूपति सभा सिधारे।
पितहि विलोकन प्रथम जाव हम धाये करि किलकारे॥२५१॥

लपन दौरिकै चढ़े ग्रीव महं मुकुट पकरि दोउ हाथा।
रिपुहन भरत बैठि जुग जानुन मध्य अंक रघुनाथा॥
चूमहिं बदन सुतन कर भूपति ठोढ़ी धरि बतवावैं।
सुनि सुनि तोतरि बानि विनोदित हँसे हेरि हँसवावैं॥२५२॥
यहि विधि सुतन खिलावत नृपमनि सिंहासन आसीने।
लहत मोद भट सचिव सभासद पंडित प्रजा प्रवीने॥
तेहि अवसर गंधर्व जुगल तहं प्रभुदरसन की आसा।
चित्रसेन विश्वावसु आये दसरथ नृपति निवासा॥२५३॥
करि सत्कार उदार शिरोमनि सभा बीच बैठाये।
करहु गान बालक हुलासहित शासन तिनहिं सुनाये॥
सुनि गंधर्व गान तानन जुत चारिहु राजकुमारे।
मंद मंद सानंद दुहुँन ढिग रघुनंदन पगु धारे॥२५४॥
सफल जानि गंधर्व जन्म निज लिये अंक बैठाई।
प्रभु-पदरज सिर धारि सुखी भे प्रेम बारि झरि लाई॥
पुनि वसुधाधिप बोलि बालकन कही विनोदित बानी।
जननि भवन कहं गवन करहु अब भै संध्या सुखदानी॥२५५॥
करिकै विदा कुमारन को नृप संध्योपासन कीन्ह्यो।
बदन प्रसन्न सदन गुरु गमने मुनि वंदन करि लीन्ह्यो॥
पुनि गुरु सों कर जोरि कह्यो नृप सुनिये देव कृपाला।
चूड़ाकरन करनबेधन को आयो यह सुभ काला॥२५६॥

चूड़ाकरण और कर्ण-वेधन

मुनि कह भली बात भाषी नृप अब विलंब नहिं होई ।
चूड़ाकरन करनवेधन को सुख लूटै सब कोई ॥
अस कहि विदा कियो भूपति को सचिवन सपदि बुलायो ।
चूड़ाकरन करनवेधन को शासन सुखद सुनायो ॥२५७॥
सोध लगन सुदिवस मुनिनायक किय रनिवास जनाऊ ।
चले सचिव सिर धरि मुनि शासन जाय जनाये राऊ ॥
भोरहि ते जागीं रानी सब भूषन वसन सँवारी ।
जोरि सखिन मंगल गावत कल रंगभवन पगुधारी ॥२५८॥
इतै राजवंसिन रघुवंसिन जोरि राजमनि आये ।
विसद रंगमंदिर आँगन में द्रुत दरबार लगाये ॥
गुरु वशिष्ठ अवसर विचारि तहं चारिहु कुंवर बुलाये ।
गौरि गनेस पूजि पुन्याह सुवाचन सविधि कराये ॥२५९॥
भूपति कह्यो मिठाई देहैं लालन कान छेदाये ।
अति बिचित्र भूषन पुनि देहैं सिरमुंडन करवाये ॥
परम निपुन सुखकर बर नापित लीन्ह्यो तुरत बुलाई ।
क्रम सों चारि कुमारन को नृप दिय मुंडन करवाई ॥२६०॥
परम मनोहर काकपच्छ जुग सिखा राखि सिर दीन्ही ।
करनवेध पुनि कियो सुतन कर रंगनाथ नति कीन्ही ॥
संपति अगनित दियो भिखारिन कीन्ह्यो दारिद दूरी ।
बजे नगारे गगन अपारे पुहुपवृष्टि भै भूरी ॥२६१॥

(दोहा)

चढ़ि नालकी नरेस तहं, संजुत चारि कुमार ।
रंगमहल गमनत भये, संग सचिव सरदार ॥२६२॥

विद्यारंभ।

(सोरठा)

सुदिवस सुखद सोधाइ, भेज्यो भवन वशिष्ठ के।
विद्यारंभ कराइ, लगे परोक्षा लेन नित ॥ २६३ ॥

(छंद चौबोला)

थोरेही दिन में सब अक्षर अक्षर प्रभु को आये ।
भाषाबंध प्रबध छंदजुत चारहुं बंधु सोहाये ॥
जौन पढ़ें गुरु भवन सुवन सब सो नित पितहि सुनावैं ।
सुनत सराहत सकल समाजन जननि जनक सुख पावैं ॥२६४॥
एक दिवस इक गुनी अपूरब राजसभा महं आयो ।
लहि नृप शासन सामग्री निज कौतुक की फैलायो ॥
देखन को धाये नर नारी सोर भयो रनिवासा ।
राजकुमार तुरत चलि आये देखन हेतु तमासा ॥ २६५ ॥
बैठे पिता अंक रघुनंदन भरत सत्रुहन जानू ।
लषन कूदि चढ़ि गये कंध महं मनहु मेरु पर भानू ॥
करनाटकी हाटकी सुंदर सभा तुरंत बनाई ।
ढोल बजाय बखानि भूप कहं दिय आवर्त लगाई ॥२६६॥
पुनि अति मंजुल विविध भाँति के लग्यो बजावन बाजे ।

जेहि सुनि विद्याधर चारन किन्नर गंधर्वहु लाजे ॥
करनाटकी नटी प्रगटी पुनि घटी घटी सो नटती।
चलति चटपटी परम अटपटी नटन माहिं नहिं नटती ॥२६७॥

(सवैया)

कौतुकी कौतुक कीन्ह्यो भलो जुग जाम व्यतीते भयो अतिकालै।
बंद करौ अब फंद सबै जननी बोलवावतीं लालन हालै ॥
यें कहि भूप तुरंत सुमंत को शासन दीन्ह्यो उदार उतालै।
देहु इनाम इन्हैं गज बाजि बिभूषन संपति साल दुसालै ॥२६८॥

(छंद चैाबोला)

चारिहु बालन निकट बोलि नृप बदन चूमि अस बोले।
मातु-भवन अब सुवन जाहु सब भोजन करहु अमोले।
कहे कुंवर तब पिता संग तुव भोजन करब तहाँही।
नहिं जैहैं नहीं खैहैं तुम बिन बैठे रहब इहाँही ॥२६९॥
सुनि सिसु वचन बिहँसि भूपतिमनि आसुहिं उठे अनंदे।
उठे सकल सामंत सूर सरदार नरेसहि बंदे ॥
अंतहपुर प्रवेस करि राजा गये कौसिला-अयना।
नृप सँग चारि कुमार निहारि सुफल भे सबके नयना ॥२७०॥
चारु चारि चामीकर के तहँ धरे सुचारन थारा।
पंचम थार भूप के आगे व्यंजन बिबिध प्रकारा ॥
लागे भोजन करन भूमिपति नारायन मुख भाषी।
बिबिध बात बतरात हँसत कछु महामोद मिति नाषी ॥२७१॥

(कवित्त)

नृप बतरात जात मंद मुसक्यात जात, मंद मंद खात जात आनंद विचारिकै। निरखि कुमार सब छोड़ि छोड़ि थार निज, बैठे पितु भाजन के निकट सिधारिकै ॥ भनै रघुराज जौलों साने नृप व्यंजन ले, वचन बखानैं बहु जुक्तिन उचारिकै। तौलों खाय लेत साने व्यंजन को चारों नंद, हंसत नरेंद्र खाली थाली को निहारिकै ॥ २७१ ॥

(छंद चौबोला)

भोजन करत एक व्यंजन जो सो तीनों सुत लेहीं।
जो बारत ताते पुनि झगरत जो न देत तेहिं देहीं ॥
कतहुं कतहुं झगरत चारिहु सुत भूपति रारि बचावैं।
कोउ काहु के उपर डारि कछु अवनिप अंकहि आवैं ॥२७२॥
करि भोजन नृप सहित कुमारन गवने अँचवन हेतू।
अँचै सयन के अयन सिधारे चैन भरे नृपकेतु ॥
धात्री सकल कुमारन को तहं जननि निकट लै आई।
बीरी बदन खवाइ सयन महं पाइ पलोटि सोवाईं ॥२७३॥

व्रतबंध।

यहि विधि लीला करत अनेकन देत मोद पितु मातै।
विहरत अवध नगर रघुनंदन सहित तीनहूं भ्रातै ॥

बीति गये कछु काल मोदमय भे नव वर्ष कुमारा।
जननी जनक करन तब लागे मनहीं मनै बिचारा ॥२७५॥
कौसल्या कैकयी सुमित्रा कह्यो महीपति बैना।
भये कुमार वर्ष नव के सब केशव कृपा सचैना ॥
चाही कियो हमहुं तुमहूं को अब व्रतवंध बिचारा।
एकादस हायन के अंतर लहैं जनेउ कुमारा ॥२७६॥
निज अभिमत सब रानिन को मत जानि उठे अवधेसा।
गये सुमंतसहित अति आतुर तेहि छन गुरु-निवेसा ॥
करि वंदन पद जोरि कंज कर विनय कियो सिर नाई।
उचित होइ तौ कुँवरन को व्रतवंध करौं मुनिराई ॥२७७॥
वचन कह्यो गुरु रचन हेतु व्रतवंध यज्ञ संभारा।
पगुधारो नरनाथ निलै अब दूसर नाहिं विचारा ॥
करि प्रणाम गुरुपदपंकज को भूपति भवन सिधाये।
अनुजन सहित राम व्रतवंध करन की साज सजाये ॥२७८॥

(दोहा)

जेहि जस देत निदेस गुरु, सो तस ठानत काज।
विप्र सचिव परिजन प्रजा, पूरन सदन समाज ॥२७९॥

(छंद चौबोला)

जानि मुहूरत गुरु वशिष्ठ तहं चारिहु कुंवर बोलाये।
राज समाज सहित दसरथ महराज कुंवर जुत आये ॥
बाजत विविधि मनोहर बाजन घर घर मंगल गावैं।
रावहिं नारि मनोहर सोहर मोहर मुदित लुटावैं ॥२८०॥

छाइ रही मख मंडप अंतर विप्र वेद धुनि धारा।
नचहिं नर्तकी बिबिध कला करि दसरथ भूपति द्वारा॥
तहँ वशिष्ठ मुनि सों महीप कह कृत्य करावहु नाथा।
तुमरी कृपा लहे हम यह दिन रघुकुल भयो सनाथा॥२८१॥
तहँ महीप चारिहु कुंवरन की अलकावली निहारी।
जानि छौर व्रतबंध बिहित विधि भरि आये दृग बारी॥
चारि कनक चौकिन में चारि कुमारन को बैठाये।
दान कराइ वेद विधि अनुसर मुनि मुंडन करवाये॥२८२॥
वेद विधान कराइ मंजु मेखला प्रभुहि पहिरायो।
मनहुं नीलमनि महिधर के मधि बासुकि अहि लपटायो॥
जासु नाम श्रुति पंथ परतहीं पाप परावन होई।
तेहि प्रभु के श्रुति पथ गायत्री मुनि उपदेस्यो सोई॥२८३॥
मंजु मेखला धारि दंड लै प्रभु पहिरे कौपीना।
भिच्छा माँगन हेतु ठाढ भे चारिहु बंधु प्रवीना॥
स्याम बरन तनु कनक जनेऊ सोहि रह्यो छविखानी।
मनु तमाल में सोनजुही की ललित लता लपटानी॥२८४॥
औसर जानि उठे जगतीपति संग चलीं सब रानी।
मुक्तामनि प्रबाल मानिक लै दियो भीख मनमानी॥
लै भिच्छा सिच्छा अरु दिच्छा इच्छा के अनुसारा।
शासन लहि गुरु पितु मातन को माँगन चले अगारा॥२८५॥
गये पिता के भवन कुँवर सब भूपति देखि जुड़ाने।
लियो ललकि बैठाइ कुमारन सिंहासन हरषाने॥

लागी होन कुंवर नेउछावर मनिगन रत्न अमोले ॥
गुरु व्रशिष्ठ को वोलि महीपति अपनी आसय खोले ॥२८६॥
सकल वेदविद्या कुंवरन को दीजै नाथ पढ़ाई।
धनुर्वेद गांधर्ववेद अरु वेद अंग समुदाई ॥
मुनि तथास्तु कहि गवन भवन किये संध्याकाल विचारे।
उठे भूप सत्कारि सभासद कुंवर सदन पगु धारे ॥२८७॥

(दोहा)

बीती रजनि अनंद सों, भयो महा सुख भोर।
पढ़न हेतु विद्य गये, गुरुगृह राजकिसोर ॥२८८॥

(छंद चौबोला)

थोरे कालहि में रघुनंदन भाइन सखन समेतू।
वेद शास्त्र पढ़ि लियो दियो पुनि गुरुदक्षिण कुलकेतू।
करहिं शस्त्र अभ्यास पहर जुग पुनि अंतहपुर आवैं।
मातु विरचि मनरंजन व्यंजन चारिहु सुतन खवावैं ॥२८९॥

(दोहा)

सयन करहिं निज निज सदन, अति सुकुमार कुमार।
जननी सकल सुवावतीं, कहि कहि कथा अपार ॥२९०॥

(कवित्त)

कहति कहानी कौसिलाजु छीरसिंधु मध्य, भूधर त्रिकूट रह्यो गज चलवार है। ग्रह्यो तेहि आइ एक महाबली ग्राह

गाढ़े, भयो युद्ध दोहुन को हायन हजार है ॥ हारयो करि कोहू को निहारो नहिं रखवारो, आरत पुकारो अब अच्युत अधार है। ल्याउ चक्र मेरो अस कहि उठि धायो राम, मातु मुख सुनत गयंद की गोहार है ॥२६१॥ चैांकि उठि जननि धरयो है दैारि अंगन लौं, अंक में उठाय लाय पलना सोवायो है ॥ भनै रघुराज मुख चूमति चरन चापि, चीन्ही करवाय राई लोन उतरायो है ॥ कैसो कियो लाल देख्यो सपन कराल कछू, काहे ह्वै बिहाल यहि काल उठि धायो है। डर मति मान मैं तो तेरई समीप बैठी, कहूँ नहिं ग्राह नहिं कहुं गज आयो है॥ २६२॥

(दोहा)

यहि विधि करत कला बिबिध, बसत अवधपुर माँह।
अवध प्रजानि उछाह नित, राम बाँह की छाँह ॥२६३॥

विश्वामित्र—आगमन।

(छंद चैाबोला)

वृद्ध वृद्ध सिगरे रघुवंसिन पौर सचिव मतिवाना।
नृप की सभा मध्य सब बैठे करत बिचार बिधाना।
इतने ही में द्वारपाल द्वै आतुर आये धाई ॥
करि बंदन ते अजनंदन को दीन्हें वचन सुनाई ॥२६४॥

(दोहा)

महाराज महिपति-मुकुट, जासु महा मुनि ख्याति।
सोई विश्वामित्र इत, आये बिनहि जमाति ॥२६५॥

(छंद चौबोला)

द्वारपाल के वचन सुनत नृप उठे समाज समेतू।
लेन चले मुनि की अगुवाई जिमि विधि कहं सुरकेतू॥
नृप कर पूजन लियो महामुनि सकल शास्त्र अनुसारे।
विश्वामित्र लगाइ हिये महं मिले भूमिभरतारे॥२९६॥

(दोहा)

कुसल प्रश्न पूछ्यो सबन, अपनी कुसल सुनाय।
दसरथ के संग भवन में, किय प्रवेस सुख पाय॥२९७॥
विश्वामित्र अनंद लहि, रोमांचित सब गात।
राजसिंह सों कहत भे, बिस्तर बैन विख्यात॥२९८॥
जाके हित आयो इतै, सो सुनिये महराज।
तेहि पूरन करि होहु अब, सत्यप्रतिज्ञ दराज॥२९९॥

[छंद चौबोला]

करन लगे मख सिद्धाश्रम में हम जेहि काल भुवाला।
तहँ मारीच सुबाहु निसाचर आये कठिन कराला॥
जब हम व्रत करि जज्ञ समापत करन चहे द्विजसंगा।
निसिचर जुगल कामरूपी तब करि दीन्हे मखभंगा॥३००॥
नहिं रघुपति सन्मुख द्वउ निसिचर खड़े होन के जोगू।
राम छोड़ि अस कोउ नहिं तिन कर करै जो प्रान-बियोगू॥
महाबली तिमि अति अभीत सठ कालपास बस दोऊ।
नहिं बचिहैं रिपु राम समर महं अस भाषत सब कोऊ॥३०१
जेठो तनय तुम्हार प्रानप्रिय जदपि देत कठिनाई।

बिप्र काज लगि बिन बिलंब नृप दीजै तदपि पठाई॥
अस कहि बचन धर्म जुत मुनिवर मौन भये तेहि काला।
मुनिनायक के बचन सुनत नरनायक भयो बिहाला॥३०२॥

[दोहा]

उठ्यो दंड द्वै महँ नृपति, लीन्ह्यो श्वास अघाय।
मंद मंद बोलत भयो, कौशिक पद सिर नाय॥३०३॥

[कवित्त]

बूढ़े भये ज्ञानी भये तपसी विख्यात भये, राजऋषि ह्वै ते ब्रह्मऋषि तुम ह्वैगये। बिमल बिरागी भये जगत के त्यागी भये, विश्व बड़भागी भये बिषय उर ना ग्ये। भनै रघुराज भगवान भक्तिवान भये, महा धर्मवान सत्यवान जग ज्वै गये॥ छमा में अछेह छमामान भये काहे मुनि, मेरे छोटे छोहरा पै दयावान ना भये॥३०४॥

[दोहा]

कही दीनता जदपि यहु, संक सकोच सुजान।
नरनायक के बचन सुनि, मुनिनायक अनखान॥३०५॥
विनय रीति विसराय सब, लखि वशिष्ठ की ओर।
बोले विश्वामित्र तब, कीन्हें अमरष घोर॥३०६॥

[कवित्त]

प्रथम प्रतिज्ञा करी शासन करूँगो सब, सुत के सनेह बस कस बिसराइये। यह बिपरीत रघुबंसिन उचित नाहिं, आजुलौं

न ऐसी भानुबंसिन सें पाइये ॥ भनै रघुराज जो कल्यान होइ रावरे को, तौतो हम आये जस तैसे फिरि जाइये। मिथ्या-बादी ह्वैके भूप भोग भोगिये अनूप, बंधुन समेत सुख संपति कमाइये ॥३०७॥ कहत सकोप विश्वामित्र के वचन ऐसे, डोलि उठी धरा धराधरन समेत हैं। भागे दिगकुंजर दहन लगी दसों दिसा, देवता पराने तजि नाक के निकेत हैं ॥ भनै रघुराज बोरे बारिधि सुबेलन को, ह्वैगये अनेक जल जंतुहू अचेत हैं। हाय हाय माच्यो विस्व धाय धाय भाषैं सुर, काल विनु काहे प्रभु बाँधे प्रलै नेत हैं ॥३०८॥

[दोहा]

ब्याकुल विस्व विलोकि सब, मुनि वशिष्ठ मतिधीर।
दसरथ सों बोले बचन, हरन हेत जग पीर ॥ ३०९॥
त्रिकालज्ञ यह गाधिसुत, कछु नहिं जो नहिं जान।
तिनके सँग रघुपति गमन, नृप संसय जनि मान ॥३१०॥
जदपि निसाचर हनन में, समरथ गाधिकुमार।
तव सुत के हित हेतु हठि, जाचत जानि उदार ॥३११॥
जदपि गाधिसुत संग में, नहिं दुख पैहैं राम।
लषन गमन सँग उचित है, मारग सेवन काम ॥३१२॥

(छंद चौबोला)

सुनि वशिष्ठ के बचन धीर धरि धरनीपति पुनि भाष्यो।
बिप्र काज लगि आजु देहुँ मैं सरबस नहिं कछु राख्यो ॥

अस कहि सजल नयन गद्गद गर भूपति भये दुखारी।
उठि तुरंत कर जोरि सुखी सुठि रघुबर गिरा उचारी ॥३१३
बिप्रकाज लगि पुनि पितु शासन गुरुनिदेस पुनि भाये।
मोते कौन धन्य धरनी महँ सकल सुकृति फल पाये ॥
सीस सूंघि दसरथ पुत्रन को फेरि पीठि में पानी।
दियो कुमारन कुशिकतनय को जै मंगल अनुमानी ॥३१४॥

(दोहा)

राम लषन लै मुनि चले, धन्य जन्म निज मानि।
सीतल मंद समीर तहं, बहन लग्यो सुखखानि ॥३१५॥
यहि बिधि विश्वामित्र सँग, चलत चलत मग राम।
अवध नगर ते कोस षट, आये अति अभिराम ॥३१६॥

(बरवै)

ठाढ़े भये महामुनि समय बिचारि। मधुर बचन बोले पुनि राम निहारि ॥३१७॥ सुनहु राम रघुनंदन राजकुमार। कौशल्या सुखकारी प्रान पियार॥३१८॥बन्यो न ल्यावत मोसे मन पछितात। कारज बस का करिये बनत न जात ॥ ३१९ ॥ सुनहु बत्स मम प्यारे मंत्र उदार। बला अतिबला विद्या मोद अगार ॥३२०॥ पढ़े जुगल विद्या के सकल सुपास। नहिं श्रम तनु नहिं भ्रम मन नहिं बुधि नास ॥३२१॥

(दोहा)

सुनि प्रभु मुनि के बचन वर, चरन करन जल धोय।
अति प्रसन्न मन सुचि सदा, बैठे मुनि मुख जोय ॥३२२॥

(छंद चौबोला)

अवसर जानि गाधिनंदन तहँ विद्या मंत्र उचारे।
कंठ कराय सिखाय न्यास सब बोले वचन सुखारे॥
जन अभिराम राम यहि रजनी इतहीं करहु निवासा।
सकल वास को है सुपास इत आगे चले प्रयासा॥३२३॥
संध्या समय विचारि गाधिसुत राम लषन सँग लीन्हें।
चलि सरजूतट सुचि निर्मल जल संध्यावंदन कीन्हें॥
पुनि आये तीनौं निवास थल मुनिवर बोले बानी।
सयन करब अब उचित लाल इत मम आँखी अलसानी॥३२४॥
सुनि कौशिक के वचन बंधु दोउ कोमल तृन बहु ल्याई।
निज कर कमल सुधारि सयन हित दीन्हीं सेज बनाई॥
विश्वामित्र बहुरि अपने कर कियो सेज विस्तारा।
करहिं सयन सुख सहित उभय दिसि जामें राजकुमारा॥३२५॥

(दोहा)

सुख सोवत रघुपति लषन, आगम जानि प्रभात। 17/0
विश्वामित्र उठे प्रथम, राम दरस ललचात॥३२६॥
पंथ श्रमित सोवत सुखित, छकित रह्यो मुनि देखि।
सकत जगाय न राम को, समय प्रभात परेखि॥३२७॥
जस तस कै साहस सहित, जागन समय विचारि।
मुनि बोल्यो मंजुल वचन, सुंदर बदन निहारि॥३२८॥

(छंद चौबोला)

पुरुषसिंह जागहु रघुनंदन कौसल्या के प्यारे।
करहु बिमल सरजू जल मज्जन सज्जन प्रान अधारे॥
विश्वामित्र वचन सुनि रघुपति उठे नयन अलसाने।
लषनहुँ को जगाय मुनिवर पद वंदे हिय हरषाने॥३२६॥
परन सेज तजि प्रातकृत्य करि सरजू तीर सिधारे।
सविधि कियो सरजू जल मज्जन धोत वसन तनु धारे॥
दै दिनकर को अर्घ्य मंत्र पढ़ि उपस्थान पुनि कीन्हे।
गायत्री को जपन लगे पुनि ब्रह्मवीज मन दीन्हे॥३३०॥
यहि बिधि करि संध्या वंदन रघुनंदन मुनि ढिग आये।
मुनिपद पद्म पराग सीस धरि भूषन बसन सोहाये॥
राम लषन को देखि गाधिसुत अतिसय आनँद पाये।
लै मृगचर्म कमंडलु मुनिवर आगे चले सोहाये॥३३१॥
राम लषन गमने तिन पाछे आछे वेष बनाये।
गंगा सरजू संगम पहुंचे तहं मध्याह्न नहाये॥
करि मध्याह्न काल की संध्या मुनिवर निकट सिधारे।
मुनि दीन्हें फल मूल सुधा सम दोऊ वंधु अहारे॥३३२॥
गंगा सरजू संगम के तट आश्रम लखि वहु मुनि के।
करत रहे पूरव जहं वर तप निकट सरजु सुरधुनि के॥
राम कह्यो कर जोरि सुनहुँ मुनि काके आश्रम अहहीं।
देहु बताय कृपा करि हमको सुनन वंधु दोउ चहहीं॥३३३॥

[दोहा]

मुनि कहि कथा बिचित्र अति, सब अभिमत अभिराम।
लषन राम अभिराम को, कीन्ह्यो मन विश्राम ॥३३४॥
सयन काल पुनि जानिकै, तृन साथरी बिछाय।
सोये विश्वामित्र मुनि, लषनहुँ राम सोवाय ॥३३५॥
भानु आगमन जानिकै, लालसिखा धुनि कीन।
सबते आगे जगतपति, जागे राम प्रवीन ॥३३६॥

[छंद चौबोला]

कह्यो लषन कहं उठहु लाल अब भयो भोर सुखदाई।
इतने में मुनिनाथ उठे पुनि हरि हरि हरि मुख गाई॥
राम बदन तब निरखि गाधिसुत मंजुल वचन उचारे।
सुरसरि सरजू संगम मज्जन गमनहुं संग हमारे ॥३३७॥
नित्य नेम निर्बाह उछाही आश्रम आइ तुरंता।
करी गमन को सपदि तयारी कह्यो मुनिन मतिवंता॥
आनहु नाव उतारन के हित उतरैं गंग सुखारी।
अस कहि तीर गये सुरसरि के मुनिजुत सुरभयहारी ॥३३८॥
कियो प्रणाम रामलछिमनजुत सुरसरि सरजू काहीं।
दच्छिन तीर जाय नउका ते चले विपिन पथ माहीं॥
महाघोर वन सघन भयानक परत पंथ अंधियारी।
देखि राम पूछ्यो मुनिवर सों नाथ कौन वन भारी ॥३३९॥
सुनि रघुपति के वचन गाधिसुत कही बिहंसि बर बानी।
सुनहु बत्स रघुवंस विभूषन जासु विपिन सुखदानी॥

पूरब मलद करूष देस द्वै देव किये निरमाना।
पूरन रहे धान्य धन जन ते सरित तड़ागहु नाना ॥३४०॥
कछुक काल ते पुनि इक यक्षी कामरूपिनी घोरा।
धारन करि हजार हाथी बल होत भई बरजोरा॥
सुंद नाम को यक्ष भयो यक रही ताहिकी दारा।
नाम ताड़ुका भूरि भयावन जेहि मारीच कुमारा ॥३४१॥
सोइ राक्षस मख मोर विनासत त्रासत देसनिवासी।
जननि तासु ताड़ुका भयावनि खाति मनुज की रासी॥
मलद करूष देस महँ जबते किय ताड़ुका निवासा।
तबते दियो उजारि देस दोउ दै जीवन को त्रासा ॥३४२॥

(दोहा)

दारुन बन वृत्तांत यह, मैं बरन्यों रघुनाथ।
देस उजारयो ताड़ुका, अब तुम करौ सनाथ ॥३४३॥
सुनि मुनिवर के वचन वर, जोरि पंकरुह पानि।
नाय सीस नेसुक बिहँसि, राम कही मृदुवानि ॥३४४॥

ताड़ुका—वध

(छंद चौबोला)

गो ब्राह्मण हित सकल लोक हित तुव शासन हित नाथा।
मैं करिहौं ताड़ुका निधन हठि जो ह्वैहौं रघुनाथा॥
अस कहि श्रीरघुबीर बीरमनि गहि कोदंड प्रचंडा।
कियो धनुष टंकोर घोर रव भरिगो भुवन अखंडा ॥३४५॥

भगे विहंग कुरंग बिपिन के वज्रपात जिय जानी।
धुनि टंकोर कठोर घोर अति सुनि ताड़ुका डेरानी॥
करिकै क्रोध बोध नहिं कीन्ह्यो कौन जोधवर आयो।
काके काल सीस पर नाच्यो को यह सोर सुनायो॥३४६॥

(दोहा)

उठी तुरंतहि राक्षसी, दीन्ह्यो काल जगाय।
महा मीच मूरति मनहुँ, पैड़ानी जमुहाय॥३४७॥
यहि विधि आई ताड़ुका, कीन्हे समर उमंग।
राम लषन मुनि जहँ खड़े, पावक मनहुँ पतंग॥३४८॥
तब नेसुक मुसकाइकै, चितै लषन की ओर।
साज्यो धनु सायक सहज, वीर धीर सिरमोर॥३४९॥

(छंद तोटक)

हरि वज्र समान सुवान लियो। दुख देवन देखत कोप कियो।
प्रभु सो सर त्यागि न दीठि दई। पविपात अघात अवाज भई॥
उर जाय लग्यो तिय पापिन के। द्विज देवन को दुखदायिन के।
तनु को सर फोरि धस्यो धरनी। तहँ तासु विलाय गई करनी॥
मरिगै जब यक्षिनि संगर में। सुर दुंदुभि दीन सुअंबर में।
मुनिकौशिक मोद्रित होत भये। रघुनंदन को मुख चूमि लये॥

(सवैया)

पायो महाश्रम राजकिशोर, इतै यह ताड़ुका के रण माहीं।
ह्वैहैं पिरात सुपंगज पानि, प्रस्वेद के बिंदु सरीर सोहाहीं॥

श्रीरघुराज सुनो रघुराज, विचारि कह्यो नहिं बात वृथाहीं ।
आज निवास करौ रजनी इत, कालिह चलौ मम आश्रम काहीं ॥

(दोहा)

तेहि रजनी में सुख सहित, बन ताड़ुका मँझार ।
विश्वामित्र वसे सुखी, लै दोउ राजकुमार ॥३५४॥
अरुनाई प्राची दिसा, नेसुक कियो पसार ।
ससि विकास कछु हास सो, जहँ तहँ झलमल तार ॥३५५॥
विश्वामित्र उठे प्रथम, सुनि धुनि लालसिखान ।
अति मंजुल बोले वचन, सुनहु भानुकुलभान ॥३५६॥
समर श्रमित सोभित बिजै, समित सत्रु सुख पाय ।
सूर मिलन आवत ललकि, उठहु लषन रघुराय ॥३५७॥
मुनिवर की वानी सुनत, द्रुग मींजत अलसान ।
परनसेज में जगत भे, दिनकर वंस प्रधान ॥३५८॥
मुनि पद बंदन करि मुदित रघुनंदन दोउ भाय ।
संध्याबंदन करत भे, निर्मल सरित नहाय ॥३५९॥
वेला बिमल विलोकि कै, बासव बात बिचार ।
विश्वामित्र बदे वचन, बंधुन बिगत बिकार ॥३६०॥

(छंद चौबोला)

दीनबंधु दोउ बंधु बीरवर आवहु निकट हमारे ।
दिव्य अस्त्र सब लेहु सत्रुजित कौसल्या के प्यारे ॥
ते सब अस्त्र सस्त्र रघुनंदन सत्रु विजय करवारे ।
प्रीति प्रतीति सहित देतो मैं तमको पात्र निहारे ॥३६१॥

अस कहि विश्वामित्र महामुनि बैठि पूर्व मुख-करिकै ।
सकल अस्त्र के मंत्र,राम को दियो सविधि मुद भरिकै ॥
अस्त्र सस्त्र सब पाय राजसुत मुनिवर के पद बंदे ।
विश्वामित्र असीस दियो तब रहहु सदैव अनंदे ॥३६२॥
यहि विधि पाय अस्त्र अरु सस्त्रहु प्रभु प्रसन्न मुख भयऊ ।
परम पवित्र लोक पावन पद चलन पंथ मन दयऊ ॥
निकसि ताडुका वन ते रघुपति निरख्यो दूरि पहारा ।
ताके निकट मेघ इव मंडित देख्यो स्याम पतारा ॥३६३॥
तब अति मधुर वचन रघुनायक मुनिनायक सों बोले ।
नाथ कौन वन स्याम मनोहर पादप अतिहि अमोले ॥
सुनत बैन रघुकुलनायक के मुनिनायक मुदमानी ।
सो कानन की आदि अंत ते लागे कहन कहानी । ३६४॥

(दोहा)

यह आश्रम संसार को, श्रमनासन रघुराज ।
वामन प्रभु परभाव ते, सिद्धाश्रम कृत काज ॥३६५॥
वामन प्रभु पदभक्ति वस, मैं इत करहुं निवास ।
का पूंछहु जानहु सबै, रवि किन जान प्रकास ॥३६६॥

(सवैया)

याही लिये लला माँगि महीप सों, ल्याये लेवाय इतै दोउ भाई ।
आवैं इतै रजनीचर घोर, करैं उतपात महादुखदाई ॥
श्रीरघुराज सुनो रघुराज न, दूसरी आस तिहारी दोहाई ।
धीरधुरंधर बीर-सिरोमनि,देखिहैं रावरे की मनुसाई॥६७॥३

(छंद चौबोला)

पहुंचव आजु राम सिद्धाश्रम हम तुम प्रानपियारे।
जथा हमारो तथा तिहारो भेद न परत निहारे ॥
अस कहि मुनिनायक रघुनायक लषन सहित पगु धारे।
मनहुं पुनर्वसु जुगल तार बिच इंदु प्रकास पसारे ॥३६८॥
राम लषन को मुनि सिगरे पुनि अनुपम अतिथि बिचारी।
कंदमूल फल फूल भेंट दै दीन्हे सीतल वारी ॥
बैठे राम लषन मखसाला विश्वामित्रहि आगे।
मुनिमंडल-मंडित रघुनंदन निरखहिं सब अनुरागे॥३६९॥
कुशल प्रश्न पूछत रघुवर को बीति गये द्वै दंडा।
तब कर जोरि कह्यो कौशिक सो प्रभु करि कर कोदंडा ॥
आजुहिं ते बैठो मुनिनायक निज मख दीक्षा माहा।
करहु निसंक जज्ञ विधि संजुत ऐहैं निसिचर नाहा॥३७०॥

(सवैया)

सुंदर साँवर राजकिसोर, भलो यह वात कही मन भाई ।
हौ समरत्थ सवै विधि ते, दसरत्थ के लाडिले आनँददाई ॥
कौशिक दीक्षा लई मख को, भये मैान वदे बिधि जैहै नसाई।
आजु ते औ षट वासर लौं,रघुराजजू रच्छन कीजै बनाई॥३७१॥
बीति गये जब पंच निसा, दिन आयो छठौ दिन पूरनमासी।
पूरन आहुति को समयो भयो, भे मुनिवृंद विषादित त्रासी॥
श्रीरघुराज कह्यो लषनै लला, होउ तयार विलंब विनासी ।
जानि परै हमहीं हठि आजु,निसाचर सैन की आवनि खासी॥

मारीच सुबाहु युद्ध।

(कवित्त)

भापत परसपर ऋपिन के भीति भरे, मौन मुनि कौशिक न बोल्यो राम हेरिकै। दच्छिन दिसा ते मनो भद्र्व निसा है घोर, उठ्यो अंधकार चारों ओरन ते घेरिकै॥ मूँदि गयो भासमान आसमान ही ते तहां, होत भै भयानक अवाज कान पेरिकै। हल्ला मख-साला मच्यो सकल विहाल भये, रच्छौ रघुराज आज भाषै मुनि टेरिकै॥३७३॥ कोऊ भगे पात्र छोड़ि, कोऊ भगे होम छोड़ि, कोऊ भगे स्त्रुवा छोड़ि भूसुर विचारे हैं। कोऊ मृगचर्म त्यागे लैलै मुनि जीव भागे रहे मखकर्म लागे भरे भीति भारे हैं॥ हाहाकार माचि रह्यो विश्वामित्र आश्रम में, हँसि रघुराज राम केतन नेवारे हैं। बैठ्यो गाधिनंदन भरोसे रघुनंदन के, जानत हमारे रघुबीर रखवारे हैं॥३७४॥

(सोरठा)

यहि विधि जब मारीच, सहित सुबाहु अनेक भट।
जानि न आपन मीच, किये उपद्रव अति कठिन॥३७५॥

(कवित्त)

देखो देखो लषन भषन को भरोस कीन्हे, त्र्खन निकारे मांस भखन पियारे हैं॥ धाए चले आवैं धर्म धुरा धसकावैं भीरु, भीति उपजावैं नहिं समर जुझारे हैं॥ भनै रघुराज सीखे दिव्य अस्त्र कौशिक से, तिनकी परीछा लेन मन में हमारे हैं। मारि मानवास्त्र

को उड़ाय देतो अंबर में, कादर कुटिल क्रूर कौन फल मारे हैं॥३७६॥
भाषि रघुबीर सनधानि एक तीर धनु, मानवास्त्र को प्रयोग कीन्हों मंत्र पढ़िकै। खैंचि गुन कान लों समान पवि सोर कै कै, तकि उर अरि को चलायो बान बढ़िकै॥ भनै रघुराज राम सायक उड़ायो ताहि, फेक्यो सत जोजन समुद्र हू ते कढ़िकै। भ्रमत भ्रमत गिर्‌यौ अतिहि अचेत ह्वैकै, वस्यो पारावार पार आयो नाहि चढ़िकै॥३७७॥

(छंद मोतीदाम)

मारीच को लखि राम। बोले सु करुना-धाम॥
कीन्ह्यो न तेहि बिन प्रान। लखि लेहु लषन सुजान॥३७८॥
राक्षस अनेक प्रचंड। आवत इतै बरिबंड॥
हनिहौं निसाचर वृंद। बचिहैं न करि बहु फंद॥३७९॥
उत उड़त लखि मारीच। सुभबाहु कोप्यो नीच॥
बोल्यो भटन ललकारि। करि कठिन कर तरवारि॥३८०॥
धोखो दियो मुनि मोहि। मैं लिय प्रथम नहिं जोहि॥
ल्यायो कुमार बोलाय। निज करन हेत सहाय॥३८१॥

(छंद पद्धरी)

मारीच बहुरि आवत तुरंत। हम करब उभै द्विजवंस-अंत॥
बचिहैं न धेनु धरनी मँझार। नहि रह्यो धर्म को कहुँ प्रचार॥३८२॥
कहि यों सुबाहु करि घोर सोर। धायो तुरंत जहँ नृपकिसोर॥
बोल्यो प्रगर्भ बानी कठोर। धोखे उठाय दिय भ्रात मोर॥३८३॥

(दोहा)

धावत आवत भीम भट, समर सुबाहु सुबाहु।
संधान्यो सर भानुकुल, कुमुद नवल निसिनाहु ॥३८४॥

(कवित्त)

परम कराल मानों कालहू को काल व्याल, मुनिन निहाल कर तेज आलवाल है। अतिहि उताल बढ़्यो पावक को मंत्रजाल, उठी ज्वालमाल डग्यो दिग्गज को भाल है॥ चंद्रमाल, वारिमाल, लोकपाल भे विहाल, हल्ला पर्‌यो स्वर्ग ते रसातल पताल है॥ सूखे ताल वंदगाल विहँसे लषनलाल, रघुराज जवै सर साज्यो रघुलाल है ॥३८५॥ कोटि पविपात सों अघात घोर सोर छयो, अवनी गगन उतपात अति छायगो। दिसि अरदात होन लाग्यो है प्रभात दाह, उल्कापात वज्रपात धरनि देखायगो॥ भने रघुराज राम सायक प्रबल सत्रु, छाती को विदारि के निषंग पुनि आइगो॥ सहित सनाहु भरो समर उछाहु महा, बाहुसो सुबाहु वारि बुल्ला-सों विलायगो ॥३८६॥

(दोहा)

समर कोपि रघुवंसमनि, जानि मुनिन बड़ रोग।
निसिचरनिकर-विनास हित, किय पवनास्त्र प्रयोग॥३८७॥

(छंद तोटक)

जब छोड़ि दियो पवनास्त्र हरी। प्रगटे सर लाखन ताहि घरी।
सर झुंडन झुंडन छाइ गये। रजनीचर बीर विलाय गये॥३८८॥
अवसेष रहे रिपु जे सिगरे। इक एकन पै सर लाख गिरे।

पद जानहु जंघ भुजा सिर के। किय खंड अखंड रहे थिर को॥३८९॥
दोउ बंधु खड़े रन जीति जहां। चलि आवत भे मुनिनाथ तहां।
जुत बंधु लखे रघुनंदन के। जिन काटि दियो दुख छंदन के॥३९०॥

(दोहा)

आनँद-बस मुनिनाथ सों, बोलि न आयो बैन।
लखन लगे दोउ बंधु की, सोभा अनमिख नैन॥३९१॥
रघुपति-सासन पाय के, मुनि अरंभ मख कीन।
सविधि स ऋत्विज जाग की, पूर्णाहुति करि दीन॥३९२॥
मुनि मोदित मन में भये, जानि सयन को काल।
सुखी सयन कीन्हे सुचित, तिमि सोये रघुलाल॥३९३॥
सिद्धाश्रम सोवत सुखी, लषन राम मुनिव्रात।
आनँदप्रद प्रगट्यो तहां, निसा-प्रयान-प्रभात॥३९४॥

(चौपाई)

उठे राम तब लषन जगायो। तजि आलस मुनिपद सिर नायो॥
प्रातकृत्य करि सविधि नहाये। अर्घ्य प्रदान दीन सुख छाये॥३९५॥
मुनि आश्रम मज्जन करि आये। पूजन हवन कियो सुख छाये॥
सहज सुभाउ सहज दोउ भाई। कौशिक लियो अंक बैठाई॥३९६॥
समय जानि बोले रघुराई। सुनहु मोरि बिनती मुनिराई॥
अब जो सासन करहु मुनीसा। सो करिहैां निसंक धरि सीसा॥
सासन होइ अवधपुर जाऊं। मातु पिता कहँ सुखी बनाऊं॥
सुनि बिनीत मंजुल प्रभु बानी। कौशिक भन्यो त्रिकाल बिज्ञानी॥
देखि देखि देसन रघुराई। जाहु भवन कहँ आनंददाई॥

पुनि जो मुनि सब संमत करहीं। हमहुँ तुमहुँ तेहि विधि अनुसरहीं॥
अस कहि कह्यो मुनिन मुनिराई। काह उचित भाषहु सब भाई॥
सिगरे मुनि कौशिक रुख जानी। एकबार बोले मृदुबानी॥४००॥
मैथिल महाराज विज्ञानी। धर्म धुरंधर जश-विधानी॥
तिनके भवन सुनी अस बाता। धनुपजज्ञ होई विख्याता॥४०१॥
चलहु जनकपुर गाधिकुमारा। लै कोशलकुमार सुकुमारा॥
सुनि मुनि वचन महामुद पाई। विश्वामित्र कह्यो अतुराई॥४०२॥

(दोहा)

भली कही मुनिजन सकल, संमत सब विधि मोर।
चलिहौं मैं हठि जनकपुर, लै सँग राजकिसोर॥४०३॥

जनकपुर-यात्रा

(चौपाई)

अस कहि कौशिक सुदिन बनायो। तहँ तुरंत प्रस्थान पठायो॥
भई जनकपुर गवन तयारी। साजे सहस सकट तपधारी॥४०४॥
चली सकल मुनिराज समाजा। मध्य सबंधु लसत रघुराजा॥
जुगल याम लों पंथ सिधारे। पहुँचे जब सब सोन किनारे॥४०५॥
सोनभद्र महँ सबै नहाये। अति निर्मल जल अति सुख पाये॥४०६॥
कीन्ह्यो होम सविधि मुनिराई। जानि अस्त गमनत दिनराई॥
राम लषन दोउ सोन नहाये। संध्यावंदन करि सुख पाये॥
गये गाधिसुत निकट तुराई। कौशिक सहित मुनिन सिर नाई॥
मुनि लीन्ह्यो निज निकट बोलाई। आगे बैठायो दोउ भाई॥

सोन महानद पाप विनासी। लगे प्रसंस करन तपरासी॥४०८॥
राम कह्यो कौशिकहि बहोरी। सुनहु देव विनती कछु मोरी॥
कहौ नाथ यहि देस कहानी। इत को भयो भूप जसखानी॥४०९॥

(दोहा)

रघुपति अनुमति पाय कै, त्रिकालज्ञ मुनिराय।
लग्यो सुनावन राम को, कथा प्रबंध लगाय॥४१०॥

(छंद चौबोला)

कथा कथत रघुनायक तुमसों बीति गई अधराता।
जुगल बंधु अब सयन करीजै ह्वैहैं पाउँ पिराता॥
बहुत दूरि चलि आये मारग अति सुकुमार कुमारे।
तुमहिं चलावत होत पंथ दुख कौसल्या के वारे॥४११॥

(दोहा)

मुनिजन कीजै सयन सब, हमहुँ कछुक अलसान।
नवल नृपति-नंदन जुगल, नलिन नयन अरुनान॥४१२॥
सुखद सोन तट मुनि निकट, सोवत लछमन राम।
ब्रह्म मुहूरत होत भो, जागे मुनि मतिधाम॥४१३॥
अरुनाई छाई ललित, प्राची दिसा निहारि।
मुनि मंजुल बोले बचन, करि असमरन मुरारि॥४१४॥
करत सयन बीती निसा, भयो राम भिनसार।
उठहु तात मज्जन करहु, सज्जन के आधार॥४१५॥

(छंद चौबोला)

सुनि मुनि-वचन उठे रघुनायक अलसाने अँगराने।
कर सों कर गहि लषन उठाये मुनि वंदे सुख साने॥
मज्जन हेत गये नद तट पर प्रातकृत्य निरबाही।
सविधि नहाय कियो संध्या पुनि दीन्ह्यो अर्घ्य उछाहीं॥४१६॥

(दोहा)

चलत चलत तेहि पंथ महँ, बीति गये जुग याम।
विष्णुपदी सरिता लखे, गंगा जग जेहि नाम॥४१७॥
विष्णुपदी के तीर में, कीन्ह्यों कौशिक बास।
राम लषन मुनि-मंडली, पाये सकल सुपास॥४१८॥

(छंद चौबोला)

प्रातकृत्य करिकै रघुनंदन सहित लषन लघु भाई।
विश्वामित्र समीप आइकै गहे चरन सिर नाई॥
तुमहि जानि उतरन के आसी मुनिन उतरनी तरनी।
आई सुख भरनी मनहरनी गंगपार की करनी॥४१९॥
राजकुमार-वचन सुनि मुनिवर मुनिन सहित चढ़ि नाऊ।
उतरे गंग संग दसरथ-सुत त्रिभुवन विदित प्रभाऊ॥
उत्तर कूल जाय मुनिनायक सब ऋषिगन सत्कारे।
कियो निवास राम लछमन-जुत सुंदर गंग किनारे॥४२०॥

(दोहा)

राम लषन जुत गाधिसुत, चले नगर की ओर।
अमरावती समान छवि, रमनीयता अथोर॥४२१॥

बसे सरित तट तरुन तर, लै कौशिक मुनि भीर।
संध्यापासन हेतु किय, गवन लषन रघुबीर ॥४२२॥
विश्वामित्र मुनीस को, आगम सुनि हरषाय।
सुमति भूप आवत भयो, अगवानी हित धाय ॥४२३॥
जोरि पानि पंकज कह्यो, कुसल रहे मुनिराय।
मोहिं धन्य धरनी कियो, दरसन दीन्ह्यो आय ॥४२४॥
यहि बिधि भाषत मुनि नृपति, वचन विदित व्यवहार।
संध्या करि आये उभय, दसरथ-राजकुमार ॥४२५॥

(कवित्त)

मानो एक संग आवैं भानु सितभानु दोऊ, मानो द्वै सरीर कै कृसानु छबि छावैं हैं। फैलत प्रभा के पुंज गंजन मदनमद, हद्द सुखमा के भरे चखन चोरावैं हैं॥ भनै रघुराज त्रिश्वमोहनी नजरि पास फाँसैं मन बिहंग न जान अंत पावै हैं। देखत स्वरूप अवधेसजू के लालन के, पलक प्रदातै मंद करनी बन्‍‍ै हैं ॥४२६॥

(सोरठा)

लषन राम अवलोकि, उठी तुरंत समभारे।
सुमति नैन जल रोकि, कौशिक सों प्रन निहारे॥

(छंद झूलना) रून दिखाना।
बचन बखाना ॥४३६॥

आफ़ताब सो एक माहताब सो दूसरा
खूब हैं। रुआब यों ख्वाब में देखने में हद्दु

सच्चाई सूव हैं ॥ कहैं रघुराज मुनिराज हमसे कहौ कौन के फवे फ़रज़ंद दिलहूव हैं । विहिश्त के नूर मशहूर दिलहूर हरजान में जहां के जान महवूव हैं ॥४२८॥

(सोरठा)

सुनत सुमति के वैन. विश्वामित्र हुलास भरि ।
दे रघुपति छवि नैन, चैन ऐन कह वैन वर ॥४२९॥

(कवित्त)

आफ़ताव-औलाद मरजादवारे, संग चलते पील असवार प्यादे। रहनेवाले ये ऐश अराम के हैं, मघवान ते शान औ शानज़ादे ॥ रघुराज दोउ भाले मरातिवा के इसी वक्त में पूर करि दिए वादे। समर बाँकुरे ठाकुरे अवध के हैं, दशरत्थ वाद-शाह के शाहजादे ॥ ४३० ॥

(छंद चौवोला)

अतिथि अपूरव जानि अवनिपति दशरथराजकुमारा ।
आइ ६वसन विचित्र मँगाय कियो अनुपम सतकारा ॥
राजकुमा‹ति सत्कार गाधिसुत राम लषन सुख साने ।
उतरे गंग संग निवास हुलासित आसित भोर पयाने ॥४३१॥
उत्तर कूल जाय मुनिील सनेह गेह गवन्यो सिरनाई ।
कियो निवास राम लकाल कछु सयन किये दोउ भाई ॥
ग्या करि कोमलपद जलदाता ।
राम लषन जुत गाधिसुत विश्वमुनि संग चले दोउ भ्राता ॥४३२॥
अमरावती समान छवि, ९ को मुनिन समाज समेतू ।

मंद मंद गमनत गयंद गति ऋषि संग रघुकुलकेतू ॥
गये दूर पथ जुग जोजन जब जनक नगर रहि गयऊ।
मिथिलापुर के तुंग पताके मुनिगन देखत भयऊ ॥४३३॥
अति उतंग मंदिर सुंदर सब चमचमात चहुँघाहीं।
फहरै नाके नाक पताके सुखमा के पुर माहीं ॥
मानहुँ पूरब उदय दिवाकर विलसत करन पसारे।
नहि ठहरात दीठि जगमग द्युति चौथा चखन निहारे ॥४३४॥

(कवित्त)

प्राची दिसि प्रगट दिवाकर दुतीय कैधौं, सरद निसा धौं चंद्र ताराजुत भावती ॥ माया को विलास कैधौं, ब्रह्म को निवास कैधौं, विष्णु को अवास कैधौं, छाय छबि छावती ॥ रघुराज देखो यह जनकनगर सोभा, देखत बनत नहिं मुख कहि आवती। कैधौं अलकावती है, कैधौं अमरावती हैं, पद्मा की बनाई कैधौं पुरी पदमावती ॥४३५॥

अहिल्योद्धार।

(छंद चौबोला)

और कछू नेरे जब गवने मुनिजुत राजकुमारे।
मिथिलापुरी निकट अमराई सीतल सघन निहारे ॥
तहँ यक मंजु मनोहर मुदकर आश्रम सून दिखाना।
जोरि पानि पंकज रघुनंदन मुनि सो वचन बखाना ॥४३६॥
सुनत राम के बचन गाधिसुत बोले मृदु मुसकाई।

ह्यौं सब कथा कहत जैसो इत भो वृत्तांत महाई ॥
जासु साप ते भयो सून यह आश्रम प्रथम सुजाना।
गौतम मुनि इक रहै महातप यहि आश्रम मतिमाना ॥४३७॥
तिनकी रही अहल्या नारी अति सुंदर सुकुमारी।
दोउ मिलि कीन्ह्यो इहाँ महातप वर्ष अनेक सुखारी ॥
गौतम-नारि निहारि महाछवि सुरनायक मन मोह्यो।
घात लगायो मिलन हेत तेहि नहिं अवसर कछु जोयो ॥४३८॥
तब गौतम को रूप धारि हरि आयो आश्रम माहीं।
मज्जन हेतु गये मुनिवर जब प्रविस्यो तुरत तहांहीं ॥
यहि विधि मुनितिय सों रमि वासव चल्यो कुटी सों आसू।
कढ़त कुटी ते मिलिगे गौतम उर उपजी अति त्रासू ॥४३९॥
ज्वलित तेज तप दुराधर्ष अति आश्रम करत प्रवेसा।
अपनो रूप धरे छल बल बस देख्यो त्रसित सुरेसा ॥
समिध सहित कुस लिये पानि मुनि यक कर कुंभ समीरा।
वासव छल बल जानि तपोबल कियो कोप मतिधीरा ॥४४०॥
मेरो बपु धरि अरे सुराधम नहिं कछु धर्म विचारी।
रम्यो विप्रनारी सों सुरपति मेरी त्रास बिसारी ॥
ताते वृषण हीन होवे हठि पावै अति संतापा।
यहि विधि कहि वासव को गौतम दियो अहल्यै सापा ॥४४१॥
री पापिनि तैं धर्म छोड़ि सब सुरपति सों रति ठानी।
अंतर्हित ह्वै बस यहि आश्रम बिना अन्न अरु पानी ॥
आठौ पहर तपत रहिहै तनु जब बीती बहु काला।

तब ऐहैं दसरथ के नंदन रघुपति कोसलपाला ॥४४२॥

(दोहा)

तिनके परसत चरन जुग, लहि आपन आकार।
ऐहै मेरे निकट पुनि, करि रामहि सत्कार ॥४४३॥

(सोरठा)

यहि विधि दै मुनि साप, निज तिय को अरु सक्र को।
तजि आश्रम लहि ताप, गये हिमाचल करन तप ॥४४४॥

(छंद चौबोला)

यह पूरब की कथा कही सब गौतम की अति प्यारी।
अब धनुधारी पगु धारी मुनिनारी आसु उधारी॥
विश्वामित्र-वचन सुनि रघुपति करि आगे मुनिराई।
गौतम आश्रम गये लषन जुत पीछे मुनि-समुदाई ॥४४५॥
परत पाँय पंकज रज तेहि थल गौतम साप नसानी।
प्रगट भई तहँ आसु अहल्या गुनमंदिर छविखानी॥
राम लषन मुनि लखे अहल्या बड़भागिनि तेहि जानी।
जब ते गौतम साप दियो तेहि तब ते अबै लखानी ॥४४६॥
बार बार दृग वारि बहावत पुलकावलि तन माहीं।
नहिं निकसत कछु प्रेम बिवस मुख अनिमिष लखति तहाँहीं॥
सावधान है पुनि कर जोरी प्रभु के आगे ठाढ़ी।
अस्तुति करति अहल्या मुद भरि प्रेम भक्ति उर बाढ़ी ॥४४७॥

(सोरठा)

जै जै कोसलनाथ, परब्रह्म व्यापक जगत।
प्रभु मोहिं कियो सनाथ, करुना वरुनालय विदित ॥४४८॥

(छंद चैाबोला)

गौतम-घरनी राम लपन मुनि पद गहि कियो प्रनामा।
निज पतिवचन सुरति करि मुनितिय भै पूरन मनकामा॥
कंद मूल फल फूल बिबिध बिधि दीन्ह्यो प्रभु कहँ ल्याई।
पूजन कियो सविधि जुग बंधुन प्रीति रीति दरसाई ॥४४६॥
जोग प्रभाव आइगे गौतम प्रभुपद पंकज बंदे।
राम लपन मुनि पद प्रनाम किय बारहि बार अनंदे॥
राम लपन कौशिक मुनिगन को गौतम किय सत्कारा।
सुखी अहल्या सहित भये मुनि गे तप हित लै दारा ॥४५०॥

(दोहा)

यहि विधि गौतमनारि को, नाम अहल्या जासु।
तार्‌यो पदरज झारि निज, भजै न को पद तासु ॥४५१॥

(दोहा)

जा दिन प्रभु गौतम-घरनि, तार्‌यो पदरज झारि।
ताही दिन ताकी कुटी, कियो निवास मुरारि ॥४५२॥

जनकपुर-वर्णन

(छंद चैाबोला)

लखि प्रभात पूषन को आवनि यामिनि जानि सिरानी।

हुलसत कोक असोक होश हित तारावलि विलगानी ॥
मुनिनायक-युत रघुनायक उठि प्रातकर्म सब कीन्हे।
मुनिमंडली सहित रघुनंदन जनकनगर पथ लीन्हे ॥४५३॥
आगे आगे चलत गाधिसुत पाछे राजकुमारा।
पहुँचे जनकनगर उपवन हेमंत वसंत बहारा ॥
यज्ञथली भुवि भली जनकपुर राम लषन अस भाखे।
सुनहु महामुनिनाथ जनक नृप अति सुंदर करि राखे ॥४५४॥
जनकनगर महँ होत स्वयंवर धनुपयज्ञ संभारा।
देखन को देसन देसन ते आये भूप हजारा ॥
महाभीर भूपति के पुर में लाखन विप्र जुहाने।
चारिहुँ वरन अनेकन आये यज्ञ लखन ललचाने ॥४५५॥
ताते करहु निवास महामुनि जहां स्वच्छ थल होई।
जहां जलासय होय विमल अति सहसा जाय न कोई ॥
मुनि सुनि वचन पाय आनँद अति चले पंथ तजि दूरी।
देखे यक थल सकल हर्ष भल विमल जलासय पूरी ॥४५६॥
सीतल अमराई छवि छाई, मंजु विहंगन सोरा।
अति इकांत जहँ होत सांत चित विगत मलिन सब ठोरा ॥
बहत नदी अति निकट सुगम तट साखा सलिल बिलोरै।
मधुकर गुंजनि कुंजनि कुंजनि मंजु पुंज तरु भोरै ॥४५७॥
सकल सुपास निवास जोग थल लखि मुनि लषन खरारी।
कीन्हे वास हुलास भरे सब भयो नास श्रम भारी ॥
देखत जनकनगर की सोभा लोभा मन अविकारी।

भनत परस्पर वचन सकल ऋपि नृप विदेह वड़वारी ॥४५८॥
कंचन कोट कँगूरे कलसा गोपुर गुर्ज दुआरा।
अति सुंदर मंदिर उतंग वर कनक खुवनक केवाँरा ॥
शशिशाला अंतहपुर शाला शाला सभासदन के।
गजशाला तुरंगशाला वर निर्मित मनहुँ मदन के ॥४५६॥

(सवैया)

चाँदनी सी चमकै चहुँ ओर तनी चुनी चाँदनी चारु महाई।
चित्रित चित्र विचित्र वने चितये जेहि चित्त गहै चकिताई ॥
कौन कहै मिथिलेश कि संपति शक्रहु देखि लहै लघुताई।
श्रीरघुराज जहां अगदेव अलंय भई तहँ कौन बड़ाई ॥४६०॥

(छंद हरिगीतिका)

कहुँ धरनिपति सैना परी फहरत अनेक निसान हैं।
हय गय अनेकन विविध स्यंदन सिविर विसद बितान हैं ॥
नौवत झरत वहु नृपति डेरन दुंदुभी धुनि ह्वै रही।
कहुँ नचत नट कहुँ वजत बाजन वारतिय गति लै रही ॥ ४६१॥

विश्वामित्र-विदेह-मिलन

(दोहा)

अभिलाषन लाखन मनुज, अवलोकनि धनु यज्ञ।
आये मिथिला नगर महँ, अज्ञहु तज्ञ कृतज्ञ ॥४६२॥
जथाजोग्य भूपन जनक, कीन्ह्यो अति सतकार।
निमिकुल-कमल-पतंग को, छायो सुजस अपार ॥४६३॥

यहि विधि भाषत मुनिन के, कोउ पुरबासी जाय।
जाहिर कियो विदेह को, गाधिसुअन गे आय ॥४६४॥
विश्वामित्र मुनीस को, सुनि आगम मिथिलेस।
सतानंद को बोलि द्रुत, चले मिलन सुभ भेस ॥४६५॥

(छंद चौबोला)

सतानंद आगे करि लीन्ह्यो द्विज-मंडली सोहाई।
पढ़त वेद वैदिक धरनीसुर जय धुनि चहुं कित छाई ॥
चलत पयादे मुनि दरसन हित सबै सराहत लोगू।
मिलन जात मनु ब्रह्म सतोगुन करि विराग भव भोगू॥४६६॥
आवत देखि विदेह भूप को मुनिजन देखन धाये।
आय आय कौशिक मुनि के ढिग सुखित समाज लगाये ॥
आवत जानि भूप को कौशिक द्वै मुनि तुरत पठाये।
ते निमिकुल-भूपति को कर गहि मुनिनायक ढिग ल्याये ॥
विश्वामित्रहिं भूप विलोकन कीन्ह्यो दंड प्रणामा।
कौशिक धाय उठाय लाय उर आसिष दियो ललामा ॥
दै आसन बैठाइ भूप को अति सत्कारि मुनीसा।
सादर कुसल प्रश्न पूछयो पुनि मोदित अहहु महीसा॥४६८॥
तब कर जोरि कह्यो मिथिलापति कुसल कृपा तुव नाथा।
कीन्ही पावन पुरी हमारी अब मैं भयो सनाथा ॥
सैन-सहोदर-सचिव-सहित प्रभु सब विधि कुसल हमारी।
सफल भयो मम धनुषयज्ञ अब करी कृपा मुनि भारी॥

(दोहा)

गये हुते संध्या करन, पुरुषसिंह दोउ भाय।
आये सहज समाज मधि, जिमि उडगन दिनराय ॥४७०॥
सहित समाज विदेह तहँ, राम लषन को देखि।
पलकन ने कीन्हें विदा, निमि नृप को दुख लेखि ॥४७१॥
सुरति सम्हारि नरेस तव, कौशिक को कर जोरि।
पूछे गद्गद गर गिरा, प्रेम-पयोनिधि वोरि ॥४७२॥

(सवैया)

सुंदर श्यामल गौर सरीर बिलोकत धीर रहे कल काके।
लोचन विश्व के चित्त के चोर किसोर कुमार छपे सुखमा के॥
आपने आनन इंदु छटान ते हारक भे सबके मनसा के।
श्रीरघुराज कहौमुनिराज अनोखे ललान के नाम पिता के॥

(कवित्त)

काके उदै पूरब की पुण्य परिपूरन है, कौन पै विधाता आजु दाहिनो दयाल है। काके अँगना में आजु खेलतो हैं सिद्धि निधि, कौन लूटि ब्रह्मानंद ह्वैगयो निहाल है॥ आजुलौं न देखे ऐसे कुँवर कलानिधि से, विरति वलित मन ह्वैगयो विहाल है। भनै रघुराज मुनिराज क्यों बताओ नहिं, साँवरो सलोनो कहो काको यह लाल है॥४७४॥ कहाँ पाये कौन के पठाये संग आये नाथ, कैसे कै छोड़ाये भौन भले पितु माता हैं। कोमल कमल हू ते चरन वगायो वन, कंकर कठिन काहे आप अवदाता हैं॥ आतप सहत सुकुमार ये कुमार काहे, आपने

ही हाथन ते विरचे विधाता हैं। भनै रघुराज मुनिराज मोहिं जानो परै, सुभग सहोदर कुमार दोऊ भ्राता हैं ॥४७५॥

(दोहा)

सुनि विदेह के बर बचन, बोले मुनि मुसकाय ।
जौन कही तुम सत्य सब, मृषा न नेक जनाय ॥४७६॥

(कवित्त)

विश्व-वर-विदित वसुंधराधिराज धीर, बीरमनि अवध अधीस नरपाल हैं। विबुध सहाई शक्र जाको रुख राखे चलै, वंदत चरन धराधीसन के माल हैं॥ धरमधुरंधर धरा में धाक धावै ध्रुव, ध्रुव सों समुद्धत प्रताप सर्वकाल हैं। भनै रघुराज राज राजमनि महाराज,दाहिने दुनी के दसरत्थजू के लाल हैं॥४७७॥

(दोहा)

जेहि कारन आये इतै, दसरथ राजकुमार ।
सुनो कथा सिगरी खरी, मिथिला-भूभरतार ॥४७८॥

(सवैया)

लंक बसै रजनीचरनाह महाभट रावन रावरो जानो ।
ताके पठाये मरीच सुबाहु उपद्रव यज्ञ में कीन्ह्यो महानो ॥
हौं तप भंग भै साप दियो नहिं कौसलनाथ पै कीन्ह्यो पयानो ।
माँग्यो नृपै सुत द्वै रघुराज दियो दसरत्थ दयाल ह्वै दानो ॥४७९॥
ये जुग नंदन कौसलनाथ के लै सँग आश्रम बाट सिधारे ।
मारग में मिली ताड़का आय भयावनि धावति दंत निकारे ॥
खेल सों खेलत ही रघुनंदन बानन वृंदन ताहि सँहारे ।

श्रीरघुराज बिलोक भये तहँ के मुनि मानव पापिनि मारे ॥४८०॥
आयकै आपने आश्रम में कियो यज्ञ अरंभ प्रमोद प्रफुल्ला।
आये निसाचर साहनी साजि मरीच सुबाहु सुने मखगुल्ला॥
श्रीरघुराज सुनो मिथिलेस दोऊ दसस्यंदन के रणदुल्ला।
मारि के बान दिशानन भेजे बिलाय गये जिमि बारि के बुल्ला॥
रावरी राजसुता को स्वयंवर त्यों धनुयज्ञ सुनै सब कोई।
आवन लागे इतै हमहूं तब राजकुमार कहे मुद मोई॥
श्रीरघुराज हमू चलिहैं सुख पैहैं विदेह की जागहि जोई।
ताते लेवाय चले संग में गुनिकै छन छोड़े महादुख होई॥४८२॥

(दोहा)

अब आये मिथिलानगर, सयुत राजकुमार।
भयो प्रसन्न हमार मन, लहि तुम्हार सत्कार ॥४८३॥
जोरि पानि पंकज हरषि, कह्यो बहुरि मिथिलेस।
धन्य धन्य प्रभु गाधिसुत, सत्य-धर्म-तप-वेस ॥४८४॥

(छंद चौबोला)

मोहिं धन्य कीन्ह्यो धरनी महं धर्मधुरंधर नाथा।
धनुपयज्ञ देखन मिलि आये सहित लषन रघुनाथा॥
हैं अनंत बल, हैं अनंत तप, हैं अनंत गुन रूरे।
सुनत रावरो चरित तोष नहि होत श्रवन सुख पूरे ॥४८५॥
बीति गये जुग जाम दिवस के छन सम परयो न जानी।
ढरे भानु पश्चिम आसा कहं सुनहु विनय विज्ञानी॥
पाय रजायसु जाउं भवन कहं पैहौं बहुरि प्रभाता।

पैहैं हरष देखि पद पंकज सहित नवल दोउ भ्राता ॥४८६॥
अति प्रसन्न ह्वै कह्यो गाधिसुत भली कही मिथिलेसू।
गवनहु राज राजमंदिर कहं मैं रहिहैं यहि देसू॥
सुनि मुनि वचन मुदित मिथिलापति मुनि पद कियो प्रनामा।
आसिष लै दीन्यो परदच्छिन गये हरषि निज धामा ॥४८७॥
वस्तु अनेक बिसेष बिमल वर बहु बिदेह व्यवहारा।
पठये बिश्वामित्र मुनीसहि तैसहि राजकुमारा॥
सतानंद पुनि आय मुनीसहि रघुपति लषन समेतू।
सादर सपदि लेवाय जाय दिय डेरा विमल निकेतू ॥४८८॥

(दोहा)

जनकनगर सोभा सुनत, स्वर्ग न जासु समान।
लषन-लालसा लखन की, लखिन बिधि अधिकान ॥४८९॥

(कवित्त)

मिथिलानगर-सोभा देखन को लोभा चित्त, मुनि के सकोचबस कढ़ति न बात है। तैसे जेठ बंधु रघुनायक सकोच पाय, लाज लरिकाई की अधिक अधिकात है॥ रघुराज मुनिन समाज अभिलाष तैसी, जानिकै मनोरथ मनहिं सरसात है। उर ते उठत कंठ आइकै फिरत नट, बट को तमासो लखि राम मुसकात है ॥४९०॥

(दोहा)

जानि लषन पुर लखन रुख, प्रभु नेसुक मुसकाय।
जोरि जलज कर कहत भे, मुनि सों पद सिर नाय ॥४९१॥

[सवैया]

नाथ कछू विनती सुनिये रघुराज च्यै लघु बंधु हमारो।
पाय रजाय तिहारि प्रसन्न सों देखहुं मैं मिथिलापुर सारो॥
मोहिं लजाय डरै तुम को प्रभु ताते कछू नहिं बैन उचारो।
जाऊं लेवाय लै आऊं देखाय पुरी यदि सासन होय तिहारो॥४६२॥
युक्ति के बोरे पछोरे पियूष के बैन निहोरे कह्यो रघुराई।
सो सुनि गाधिकुमार बिचारि कह्यो सुख अंबुधि चित्त डुबाई॥ जाहु लला लषनै सँग लै पुर देखहु पै न कियो लरिकाई। राखो नहीं तुम जो मरजाद कहौ मुनि दीन बसैं कहँ जाई॥४६३॥

नगर-दर्शन

(दोहा)

सुनि मुनि बचन मुदित मन, पुरुषसिंह रघुबीर।
धर्मधुरंधर बंदि गुरु, चले रुचिर रनधीर॥४६४॥
घुंघुवारी अलकैं लटकि, हलकैं छलक कपोल।
मनु अरविंद मरंदहित, अलि अवली अति लोल॥४६५॥
कटि निषंग धनु वाम कर, दाहिन फेरत बान।
मोल लेन जनु जात हैं, जनकनगर जन जान॥४६६॥
इक एकन ते कहत महं, फैली खबर अपार।
आवत देखन नगर दोउ, सुंदर राजकुमार॥४६७॥

(सवैया)

बिज्जु छटा ज्यों घटा घन में तिमि ऊंची अटान चढ़ीं पुरनारी। धाम को काम बिसारि वधू जुग बंधु बिलोकहिं होहिं सुखारी ॥ श्रीरघुराज के आनन अंबुज भे अलि अंबक आसु निहारी। पावैं जथा सुरपादप को यक बारही भाग ते भूखे भिखारी॥४९८॥ झाँकैं झुकी जुवती ते झरोखन झुंडनि ते झरफैं कर टारी। देखि मनोहर सुंदर रूप अचंचल कीन्हें दृगंचल प्यारी ॥ श्रीरघुराज सखीन समाज में लाज को काज परै न निहारी। आपुस में वर बैन भनै सखि आजु लही फल आँखि हमारी ॥४९९॥ दानव मानव देव अदेवहु देखे न काहिं बिदेहपुरी में। पूरब गाथ पुरानन में सुनि ताते कहौं सखि बात फुरी में ॥ श्रीरघुराज स्वयंबर के दिन ऐहैं नरेस समाज जुरी मैं। तादिन देखि परी सबकी छबि कौन मिली इनकी मधुरी मैं॥५००॥कौनौ सखो पुनि बोलि बिनोदित सत्य सखी है बिचार हमारो। संभु बिलोकी इन्हैं कबहूं समता करतो कछु देखिकै मारो ॥ सोई बिचारि बड़ो अपराध प्रकोपिकै तीसर नयन उघारो। श्रीरघुराज मनोज की मौज उतारि भलेदईमारे को जारो ॥५०१॥

(दोहा)

बिप्रकाज करि बंधु दोउ, आये नगर बिदेह ।
यक बिदेह यहि पुर रह्यो, इन किय अनित बिदेह ॥५०२॥

(सवैया)

पुनि कोई तहां लखि राजकिसोरन बोलि उठी मधुरी बतिया। सखि येही सुबाहु मरीच हते नहिं लागत सत्य किहू भँतिया॥ रघुराज महा सुकुमार कुमार हमार हरै हिय की गतिया। निसिचारिन संग लड़ावत मैं कस कौशिक की न फटी छतिया॥ ५०३॥ कोई कह्यो रघुराज सुनो दुख होत अरी छनहीं छनहीं मन॥ भूप विदेह प्रतिज्ञा करी तुम जानती हौ सिगरी सजनी जन। सो तजिहैं किमि चित्त कठोर चितै चितचोर किसोरन के तन। जो न कियो परनै पन पेलि पषान परै पुहुमीपति के पन॥५०४॥ कोऊ कहैं कर जोरि कै ऊरध संभु स्वयंभु विनय सुनि लीजै। हे भुजचारि मुरारि रमा पुरबासिन के अब प्रेम पतीजै॥ सारदा गौरि मनोरथ पूरहु दीनता देखि यही बर दीजै। श्रीरघुराज सु श्याम कुमार को जानकी-ब्याह बिसेषि करीजै॥५०५॥

(दोहा)

पुरवासिन नारिन कहत, ऐसे बहु विधि बैन।
राजकुंवर निरखत नगर, मंद मंद भरि चैन॥५०६॥

(छंद हरिगीतिका)

आगे बतावत पंथ बालक लाल यहि मग आइये।
यहि ओर कौतुक बिबिध विधि निज अनुज को दरसाइये॥
चितवत चहूंकित चारु नगर प्रयान अमित सोहात हैं।
मनु छबि पुरी महं मार अरु शृंगार बपु दरसात हैं॥५०७॥

कंचन कलस बिलसत बिमल मानहु गगन तारावली।
फहरत पताके तुंग चमकत चारु जनु तड़िताबली॥
फाबित फटिक की फरस फाटक हाटकी हिय हारने।
फैलत फुहारन सलिल सुरभित द्वार द्वार हजारने॥५०८॥
मनु काम कर निरमान बिबिध दुकान धनद धनीन की।
पन्ना पदिक तिमि पदुमरागन रासि लाग मनीन की॥
कंचन कपाटन ठटे ठाटन बाट बाटन द्वार हैं।
सरसीन घाटन हेरि हाटन मुदित राजकुमार हैं॥५०९॥
कहुं चलत चारु तुरंग मत्त मतंग एकहि संग हैं।
कहुं नगर अंगन नृपन की चतुरंग उदित उमंग हैं॥
ऊंची अटा सारद घटा सो कलित कंचन तोरने।
गोले गवाछहु छजत छज्जा देव गृह मद मोरने॥५१०॥
जहं लखहु तहं चौहट्ट मंदिर टट्ट बिसद बजार हैं।
राजत कनक सब वस्तु पूरित विविध अन्नागार हैं॥
जेहि बाट गमनत राजसुत तहं तहं लगत जन ठाट हैं।
हेर हाट में बर बाट में घर घाट में नहि आट हैं॥५११॥

यज्ञशाला-वर्णन

(छंद गीतिका)

कोउ कहत बालक इतै आवहु जुगल राजकुमार।
तुमको देखावहिं जहं स्वयंबर होनहार अवार॥
प्रभु चले बालक संग पीछे भरे लपन उमंग।

देखे धनुष-मख-भूमि चलि जेहि लखत लजत अनंग॥५१२॥
अति विसद थल सम मध्य गच बिल्लौर की मनु नीर।
बिलसत बितान महान झालर झुकी मुकुतन भीर॥
चहुं ओर परम उतंग मंच बिरंचि बिरचित भूरि।
नहिं कतहुं रंचक जन बिसंचक संत्र कर नहिं दूरि॥५१३॥
तिनके तहां पाछे कछुक मंचावली यक और।
जेहि माँह बैठहिं जानपद संकेत होइ न ठौर॥
पाछे तिनहुं के धवल धाम बिदेह दिय बनवाय।
पुरनारि बैठि निहारि कौतुक लहैं मोद निकाय॥५१४॥
सोहत रजत के मंच छड़ बैठक कनक के भूरि।
कलसी कलित रतनावली तेहि भरे चंदन चूरि॥
प्रभु-पानि-पंकज पकरि बालक देत सकल दिखाय।
पूछेहु बिना पूछेहु बनक थल देहिं बिबिध बताय॥५१५॥
बालक बतावन ब्याज प्रभु-कर करत परस तुराय।
मुसकाय कबहुं लजाय कबहुं बताय आगू जाय॥
रचना स्वयंबर भूमि की लखि करत कौतुक नाथ।
जकिसे रहत ठगिसे रहत हरि हेरि मींजत हाथ॥५१६॥
लषनहि बतावत बिबिध बिधि कोदंड मख संभार।
मानत मनहि महि आय निज कर कियो कुलि करतार॥
कोउ कहत बालक प्रभुहिं निकट बोलाय पानि उठाय।
तुम कतहुं देखे अस नहीं मख मोहिं परत जनाय॥५१७॥

(दोहा)

पुनि आई मन महं सुरति, बड़ि बिलंब हम कीन।
बीति गये जुग जाम इत, निरखत पुर लवलीन ॥५१८॥
सभै सप्रेम बिनीत अति, सकुच सहित दोउ भाइ।
गुरुपद पंकज सीस धरि, बैठे आयसु पाय ॥५१९॥
संध्या समय बिचारि मुनि, आयसु दीन उदार।
नित्यनेम संध्या करहु, श्रीअवधेश-कुमार ॥५२०॥
करि संध्यावंदन विमल, सुनि समीप मुनि आय।
राम लषन बैठे मुदित, गुरुपद सीस नवाय ॥५२१॥

(सोरठा)

मुनिवर आलस जानि, कह्यो राम अभिराम सों।
सयन करहु सुखखानि, हमहुं सयन करिहैं लला ॥५२२॥

जनक-वाटिका गमन

(छंद चौबोला)

निसा सिरानी जग सुखदानी यहि विधि भयो प्रभाता।
चहर पहर चहुँकित सुनि चायन जग्यो राम लघु भ्राता ॥
लषन कमल कर परसि पाय पद कछु कौशिक ते आगे ॥
जगे जगतपति सुमिरि गुरूपद गुरुहि जगावन लागे ॥५२३॥
जगे मुनीस मनहिं मन सुमिरत राम चरन-जलजाता।
नयननि खोलि लखे रघुपति-मुख यह मुद मन न समाता ॥
प्रातकर्म करि धर्मधुरंधर बसुंधराधिप-वारे।

आये पुनि अपने निवास महँ केसरि तिलक सँवारे ॥५२४॥
रहे फूल नहिं तेहि औसर महँ चेलन चूक विचारी ।
जानि अनेक हेत कुलकेतुहिं रामहिं कह्यो हँकारी ॥
तात जाय तुम जनकवाटिका सुमन सुगंधित लावो ॥
तहँ की सकल कथा कहि हम सों महामोद मन छावो ॥५२५॥
सुनि गुरु-आयसु रघुनायक तहँ सहित लषन धनुपानी ।
चले कुसुम तोरन चितचोरन थोर न आनंद आनो ॥
अति अभिराम अराम राम लखि लहि सुखधाम ललामा ।
कह्यो लषन सों ललित वचन अस यह वन मन विश्रामा ॥५२६॥
यह विदेह-वाटिका सोहावनि सुखछावनि सबही की ।
आनँद-उपजावनि मनभावनि हठि हुलसावनि ही की ॥
यहि विधि करत बंधु सन बातन गये वाटिका द्वारे ।
द्वारपाल चित चकित निहारे सुंदर राजकुमारे ॥५२७॥
बोले मंजुल वचन राम तहँ द्वारपाल कछु सुनिये ।
आये फूल लेन फुलवाई जान देहु भल गुनिये ॥
द्वारपाल बोल्यो कर जोरे हरि लीनो मन मोरा ।
यह विदेह की फूलवाटिका जाहु चले चितचोरा ॥५२८॥

[सोरठा]

दसरथ-राजकुमार, प्रविसे फुलवारी हरषि ।
छन छन विपुल बहार, सदा विहार बसंत जहँ ॥ ५२९ ॥

[कवित्त]

कंचन क्यारिन में फटिक फरस फाबैं, तामें झरैं

मालती सुमन मनु तारा हैं। बदन कुरंगन के बिबिध बिहंगन के मुखन मतंगन तुरंगन फुहारा है॥ केते कुंज-भौन लताभौन लोने लोने लसैं बल्लिन बितान त्यों निसानहूं अगारा हैं। भनै रघुराज नवपल्लवित मल्लिका के अमल अगारा हैं मुनारा हैं दुआरा हैं॥५३०॥

[छंद गीतिका]

वर बाग मध्य तड़ाग चारिहु भाग कनक सुपान हैं।
मनि सरिस निर्मल नीर परम गँभीर गगन समान हैं॥
फूले कमल कल अमल भल मकरंद मधुप लोभान हैं।
कल्हार इंदीवर सुउत्पल पुंडरीक अमान हैं॥५३१॥
सर निकट गिरिजाभवन राजत कनक मंडित सुंदरै।
मरकत कलस बिलसत बिमल दिनकर बसत मनु मंदरै॥
बहु रत्न खचित प्रदेस मंद्रिर बने वेस सुहावने।
चहुँ ओर बिलसत कनकखंभ सुरंभ थंभ लजावने॥५३२॥
बहु द्वार छज्जा छजित फाबित फटिक फरस अपार हैं।
आवरन देवनरूप वेद बिधान विविध अगार हैं॥
नहिं पुरुष तहं कोउ जात माली रहत इक विश्वास को।
सब नारि रच्छन करहिं उपवन तरु तड़ाग अवास को॥५३३॥

[सवैया]

एहो महीपति-माली सुनो गुरु पूजन के हित फूल उतारन।
आये इतै हम बंधु समेत उतारैं प्रसून जो होइ न बारन॥
कैसे कहे बिन फूल चुनैं मिथिलेस की बाटिका के मनह

वस्तु बिरानी को पूछे बिना रघुराज जू लेय न वेद उचारन॥५३४॥
राम के बैन अराम को पालक कान परे गृह बाहर आयो।
देखि अनूपम भूपकुमार रह्यो तकिकै पलकैं न लगायो॥
पायँन मे परि पानि को जोरि पग्यो प्रभु प्रेम सु बैन सुनायो।
श्रीरघुराज जू रावरो बाग न बावरो मोहिं बिरंचि बनायो॥५३५॥
वाटिका में जुग राजकुमार निहारत फूलन तोरत बागैं।
दोना लिये अति लोना उभै कर छोना मृगेस से जोवन जागे॥
कोसलभूप के बाँकुरे वीर कहै रघुराज लता अनुरागैं।
फूलैं फलैं तरु ताही छनै हरि कोमल कौल करैं जहँ लागैं॥५३६॥
कहुं लेत प्रसून प्रमोद भरे ललिते लतिकान के झोरन में।
कहुं कुंजन में बिसराम करैं अवनीरुह छाँह के छोरन में॥
वर वाटिका ठौरन ठौरन में रघुराज लखैं चहुं ओरन में।
चितचोरन राजकिसोरन को मन लागि रह्यो सुम तोरन में॥

दोहा।

चित चोरत तोरत कुसुम, इत अवधेसकिसोर।
उत बिदेह रनिवास में, कियो पुरोहित सोर॥५३८॥

राम-सीता-मिलन।

[चौपाई]

सतानंद तिहि वचन उचारा। कालिह स्वयंवर होवनहारा॥
ताते आजु जानकी जाई। करै गौरि-पूजन चित चाई॥५३९॥
सुनत पुरोहित को बर बानी। मैथिल महाराज महरानी॥
सखिन बोलि सब साजु सजाई। गिरिजा पूजन सियहिं पठाई॥

(कवित्त)

दासी संग खासी छवि-रासी चपलासी चारु आनंद विभासी रनिवास की निवासिनी। चंद्र चंद्रिकासी लसै कमला कलासी कल कनक-लतासी सबै सीय की सुपासिनी॥ भनै रघुराज सिय-प्रेम की पियासी रहै सर्वदा हुलासी जे प्रकासी मंद हासिनी। रतिसी सुरंभासी तिलोत्तमासी मैनकासी मायासी मयासी मंजु मिथिला-मवासिनी॥ ५४१॥

(छंद हरिगीतिका)

गिरिजा भवन आराम आई नवलि निमिकुल-चंदिनी।
अनयास होत हुलास पुरिहै आस हिमगिरि-नंदनी॥
मिथिलेसजू की लाडिली-आगमन सुनि तहँ मालिनी।
हरबर चली भरभर सकल सजि वसन रूप रसालिनी॥

(सोरठा)

तहँ बहु बाजन सोर भनकारी नूपुरन की।
रही माचि चहुँ ओर दियो मदन मनु दुंदुभी॥ ५४३॥
स्यामल राजकिसोर कह्यो लषन सों बैन वर।
लखहु लाल यहि ओर आवत इत मिथिलेस धौं॥ ५४४॥

(सवैया)

बाजि रहे बहु बाजन वेस सुभावतसों बांड़ भीर जनाई।
देखन नैसुक नयननि नेरे चली वहि ओर कछू नियराई॥
फूलन तोरि चूके भरि दोनन कौतुक देखि गुरू पहँ जाई।
श्रीरघुराज सबै कहि देव महामुनि सों करिकै सेवकाई॥५४५॥

यों कहिकै प्रिय बंधु सों राम चले गिरिजामनि-मंदिर ओरे।
दूरहि ते दोउ देखि सखीगन ठाढ़े भये मन में भये भोरे॥
श्रीरघुराज कह्यो मुरिकै लखि सुंदरी वृंद अनंद हिलोरे।
आगे न जात बनै अब तात सखीन को व्रात दिखात करोरे॥५४६॥
जैबो न लायक लाल उतै परदारन के बिच धर्म बिचारी।
आये इतै मुनि शासन लै नहिं जानी रही मरजाद हमारी॥
रीति है धर्मधुरीनन की रघुवंसिन की जग जाहिर भारी।
पीठि परै नहि संगर में नहिं दीठि परै स्वपन्यो परनारी॥५४७॥
जिहि हेत अनेकन भूप अनूप स्वरूप बनाइकै वागें गली।
जिहि हेत कियो मिथिलेस प्रनै जु महेस के चाप को तोरै चली॥
लहै तौन स्वयंवर में दुहिता विजयी तिहि कीरति विश्व चली।
सुकुमारि महा मनहारि गुनी यह सोइ बिसेपि विदेहलली॥५४८॥
आवत ही लखि नेसुक ताकि लखी नहिं आँखिन मों अस सोभा।
सारद सेस महेस गनेस न भाषि सकैं उर राखिकै सोभा॥
श्रीरघुराज सुनो सहजै मन मेरो पुनीत सोऊ लखि लोभा।
छोड़ि कहौं छलछंदन को अस आजु लौं छोनि में चित्त न छोभा ५४९
लछमन लाल सुनो रघुराज बढ़ै उर लाज कढ़ै मुख बाता।
ाकसमात अमात न आनँद मानद होइगो कौन विख्याता॥
:। छन दच्छिन बाहु बिलोचन क्यों फरकैं कछु जानि न जाता।
कीन्ह्यो विचार मनै बहु बारन सो सब कारन जानै विधाता॥५५०॥

(दोहा)

अस कहि रघुपति लषन सें किये कुंज विश्राम।

तरु छाया सीरी घनी कुसुम-गुच्छ अभिराम ॥५५१॥
उत मंदिर अंदर गई पूजन राजकुमारि।
खड़ी रही बाहर सखी चमर छत्र कर धारि ॥५५२॥

(चौपाई)

सहजहिं तहँ मालिनि इक आई। देखी रही लषन रघुराई॥
सखी पानि पंकज गहि बोली। अपने उर की आसय खोली॥
कोउ सुंदर जुग राजकिसोरे। आय बाग महँ फूलन तोरे॥
इतनी वयस सिरानि हमारी। अस सोभा नहिं नयन निहारी॥
कहि न सकौं देखन के लायक। नाम लषन लघु, बड़ रघुनायक॥
मालिनि-बचन सुनत सखि काना। देखन हित तिहि मन ललचाना॥

(दोहा)

देखु सखी यहि कुंज में सुंदर जुगल किसोर।
हरयो मोर चित, चोरि चित हरि लेहैं हठि तोर ॥५५६॥

(सवैया)

सीय सखी मृगसायक-नैनि सुनैन उठाय लखी तिहिं ओरैं।
मंजुल बजुल कुंजन में चितचोर उभय अवधेस किसोरैं॥
श्रीरघुराज रुकी सो जकी पलकैं ठमकी ठगिकै दृग ठोरैं।
चंचलासी परी चौंध चखैं मन भूलि गयो तहं मोर औ तोरैं ॥५५७॥
कौन कहै कछु कौन सुनै पुनि जोहनही ते मनो जिय जीवत।
अंग जहाँ के तहां हीं रहे सब दीठी की सूजो मनो छबि सीवति॥
श्रीरघुराज बिलोकतही अभिलाषन इंदु उन्यारीसी ऊवति!
ठाढ़ी महासुख बाढ़ी अली वह छैल छली मुख पानिप पीवति॥५५८

श्री की जथा श्री अहै सिय मेरी तथा यह साँचो शृंगार शृंगारो।
कीरति की जिमि कीरति जानकी त्यों जस को जस याहि निहारो॥
वा छवि की छवि या सुख को सुख जोरी भली विरची करतारो॥
या उनके सम वा इनके सम श्रीरघुराज न और विचारो॥५५९॥

(बरवै)

नयना बानन मारेउ राजकुमार।
कैसे जाउँ सिया जहँ गौरि-अगार॥५६०॥
मालिनि तिहि कर कर करि चली लिवाइ।
कहुँ बिहँसति कहुँ हुलसति कहुँ बिलखाइ॥५६१॥
यहि बिधि भ्रमत भ्रमत सो मन पछिताति।
आई जहां सहेली अति अकुलाति॥५६२॥

(दोहा)

तासु रूप निरखी सखी, अति बिबरन तनु स्वेद।
पकरि पानि पूछन लगी, भयो काह तुहिं खेद॥५६३॥

(सवैया)

एरी अली तुहिं कैसो भयो नहिं पूछेहु पै कछु उत्तर देती।
आनँद भीजी सनेह में सीझी चितै कछु पाछे उसासन लेती॥
श्रीरघुराज कहै कहँ रीझी भई तनु छीझी अजौ दसा एती।
काह लखी अरु काह चखी सखी वेगि बताउ दुराउ न हेती॥

(दोहा)

सखी सखिन के वचन सुनि, लखी पाछिले ओर।
मन पियूष फल सो चखी, कही गिरा रस बोर॥५६५॥

(कवित्त)

पूछती कहा है उतै कौतुक महा है नहिं जात सो कहा है अब जौन लखि पाई री ॥ विधि के सँवारे राजकुँवर पधारे प्यारे विश्वमनहारे धारे विश्व सुंदराई री ॥ साँवरो सलोनो दूजो द्युति को दिमागवारो दृग ते टरै न टारो मति अकुलाई री ॥ कहै ना सिराई रघुराज देखे बनि आई आजुलौं न देखी जौन आजु देखि आई री ॥ ५६६ ॥ नीलमनि मंजुताई, नीरद की स्यामताई, अतसी कुसुम कोमलाई हठि आई है। केसर सुगंधताई, विज्जु दीपताई सोन जुही नहिं पाई पट पोत पियराई है ॥ भौंहन कमान कसि प्रीति खरसान चोखे नैन-वान मारे फूटि गाँसी अटकाई है। रघुराज कैसो राजकुँवर अनोखो अरी हौं तौ इतै घायल ह्वै घूमि घूमि आई है ॥ ५६७ ॥

(दोहा)

ऐसे सुनि सजनी-बचन देखि दसा पुनि तासु।
उदित इंदु अभिलाष हिय कियो हुलास प्रकासु ॥५६८॥

[चौपाई]

सिय समीप इक सखी सिधारी। बीजमंत्र सम दियो उचारी॥
सिय सुनि सखी बचन सुख पाई। मंद मंद मन महँ मुसक्याई॥
पूजि गौरि मिथिलेस-दुलारी। मंदिर ते बाहर पगु धारी॥
कहत भई मिथिलेसकुमारी। कहु कौतुक तू कौन निहारी॥
सो सखि सिय छवि नखसिख हेरी।सुधि करि राजकुँवर छबिढेरी।
बहुरि बाल बोली बर बानी। बुधि बर बदति विसेषि ५

(दोहा)

घनो कुंज लोनी लता फूले फूल अपार।
लखे कुसुम तोरत तहाँ सुंदर जुगल कुमार ॥ ५७२ ॥

(सवैया)

साँवरो सुंदर एक मनोहर दूसरो गौर किसोर सुखारी।
का कहिये मिथिलेसलली वह मूरति पै मन है बलिहारी॥
श्रीरघुराज बनै नहिं भाषत राखत ही में बनै छवि प्यारी।
नैन बिना रसना, रसना बिन नैन कहौ किमि जाय उचारी॥
सुनिकै विमला बतियाँ सिगरी हरषीं सु सखी निरखौ सिय को।
उतकंठित वेस बिलोकन को कब आनंद ओघ भरों जिय को॥
रघुराज सखीन समाज निहारति को कहै सीय गुनो हिय को।
अवलोकन की अभिलाष उठी पिय छोड़ि उतै हठि होइय को॥

(दोहा)

पुनि नारद के बचन की सुधि आई तिहि काल।
दुसह बिरह दारुन व्यथा जान्यो मिटिहैं हाल ॥५७५॥
जनकलली सजनीन की जानि उदित अभिलाख।
पाय मोद मुसक्यानि मन गहि तमाल की साख ॥५७६॥
पल्लव डार बिलोकि कछु कुंज विलोकन ब्याज।
चली चारि पद और तिहिं चितवत सखिन समाज ॥५७७॥

(चौपाई)

.. करति सखिन सों बातैं। लषन लाल लालसा अघातैं॥
प्रगटति नहिं भाऊ।खग मृग निरखति करति दुराऊ॥

मंद मंद गमनति सुकुमारी। चतुर सखी सब संग सिधारी॥
उतै सुन्यो नूपुर धुनि जबहीं। लख्यो लषन लाखन सखि तबहीं॥
बन बिहरन आवैं सखि वृंदा। मानहु उये अनेकन चंदा॥
लषन-बचन सुनि सहज सुभायक। लताभवन ते कढ़ि रघुनायक॥
सिय मन की गति गुनि रघुनाथा। खड़े लषन कंधहि धरि हाथा॥
हेरत हती उतै सिय रामै। इत रघुपति सिय लोक ललामै॥

(सवैया)

दोहुन की रही प्रीति सनातन दोहू तहां पलकैं दृग त्यागे।
ह्वैगो वियोग कछू दिन दोहुन देवन-कारज में अनुरागे॥
वे प्रगटे अवधेस के मंदिर वो मिथिलेस किये बड़भागे।
दोहुन के दृग दोहुन में,परि दोहुन की छबि पीवन लागे॥५८२॥
कौन कहै सिय नेह की नीति प्रतीति त्यों प्रीति की पूरनताई।
श्रीरघुनायक-आनन इंदु में नैन लगाइ चकोर लजाई॥
श्रीरघुराज सुकोटिन बार निछावरि चातक-मेह-मिताई।
मानो लजाइ पराइ गये निमि त्यागि दृगंचल चंचलताई॥५८३॥
पूरब पूरन इंदु उदै लहि ज्यों विकसे बिलसैं कुमुदाली॥
ज्यों पुनि पूषन प्रात प्रकासहि पाइ प्रफुल्लित है कमलाली।
श्रीरघुराज को आनन त्यों ललनानि के आनन में करी लाली।
देखैं जकी लसी रूप को माधुरी चित्र की पूतरी सी सब आली॥

(दोहा)

जनकलली अनिमिष चितै स्यामल राजकुमार।
धरयो ध्यान मीलित दृगनि ठाढ़ी गहि तरु-डार॥५८५॥

(सवैया)

देर भई गहि साख तमाल की ठाढ़ो अहै पग पीर न जोवै।
ध्यान धरे गिरिजा बपु को मिथिलेसलली तु वृथा छन खोवै॥
पूजन कीजै बहोरि उतै चलि माँगियो जो मन में कछु होवै॥
देखिले साँवरो राजकुमार खरो रघुराज महा मुद मोवै॥

(दोहा)

सखी वचन सुनि सकुचि सिय दीन्ह्यो दृगन उघारि।
सन्मुख ठाढ़े कुँवर लखि करी मनहि बलिहारि॥५८७॥

(सोरठा)

मन महँ करति बिचार परी प्रेम परबस सिया।
चलति नयन जलधार चंद्रकला बोली बचन॥५८८॥
वचन सयुक्ति बनाय सीतहि सरस सुनाइकै।
मधुर अली इत आय सुनै कछुक चाहति कहन॥५८९॥

(सवैया)

ह्वैगो बिलंब बड़ो इनही अब अंब गये बिन कोप करैगी।
पूजन बाकी अहै जगदंब को लंब भये रवि बेला टरैगी॥
श्रीरघुराज निहारि लई मन की उपजी नहिं फेर फिरैगी।
आउब कालिह यही बेरियाँ इत गौरि-कृपा सब पूरी परैगी॥

(दोहा)

अस कहि सखि मुसक्याय मृदु नयन नचाय नचाय।
सियहि चितै चितई सखिन राजकुँवर दरसाय॥५९१॥

चंद्रकला के बचन सुनि मातु-भीति उर आनि।
चली पलटि पग जानकी गूढ़ गिरा जिय जानि ॥५६२॥

(सवैया)

देखै बहोरि बहोरि कुरंगन त्योंही बिहंगन भृंगन सीता।
ता मिसि राजकुमार बिलोकति होत अघाउ न चित्त पुनीता॥
लालच लागी बिलोकन को इत त्यों उत है जननी ते सभीता।
खेलत चंग से चित्त चली ज्यों बंधो रघुराज के प्रेम के फीता॥५६३॥

(चौपाई)

गौरि-गेह गवनी जब सीता। प्रभु कह लषनहिं बचन पुनीता॥
लखी लला मिथिलेसकुमारी। हम तो अस नहिं सुछबि निहारी॥
काल्हि स्वयंवर होवनहारा। धौं केहि देइ सुजस करतारा॥
सुनत लषन बोले मृदु बानी। रीति हमारि नाथ असि जानी॥
जहां रहत कोऊ रघुबंसी। तहं न होत दूसरो प्रसंसी॥
लषनवचन सुनि मृदु मुसकाई। राम कह्यो बेला बड़ि आई॥
तोरि प्रसून चुके भरि दोना। चलहु काल्हि होई जो होना॥
अस कहि चले गुरू पहँ रामा। हिय बरनत सिय छबि अभिरामा॥

(दोहा)

गुरु समीप सुम-दोन दोउ, धरि पद किये प्रनाम।
कौसिक कह्यो बिलंब करि, किमि आये इत राम ॥५६४॥

(कवित्त)

धरि धनुबान जोरि पानि बानि बोले राम सरल स्वभाव छल छंद
ना छुआन है। गये मिथिलेस फूलवाटिका में फूल-हेत फूलन के

लेत लख्यो कौतुक महान है ॥ भनै रघुराज आई जनकदुलारी तहां पूजन के काज गौरी सहित इसान है। सखिन-समाज देख्यौं विभव दराज आज ऐसो ना उमा को ना रमा को सुन्यो कान है ५९९

(दोहा)

सकल जानि मुनि जोगवल, रामहि दियो असीस।
होइ मनोरथ पूर तव, कृपा करहि जगदीस ॥६००॥
विश्वामित्र विलोकि तहँ, अलसाने कछु नैन।
कह्यौ लाल कीजै सयन, वैठन अवसर है न ॥६०१॥
सुनि मुनि-सासन बंधु दोउ, किये सयन सुख पाय।
स्वपन्योहूं में सिय सुरति, विसरै नहि विसराय ॥६०२॥
उतै सीय गै गौरि-गृह, राजकुँवर धरि ध्यान।
जोरि पानि पंकज करी, नति वति वेद विधान ॥६०३॥
सुनत जानकी के बचन, प्रगट भई तब गौरि।
करि प्रनाम मन हँसि कह्यो, देविन की सिरमौरि ॥६०४॥

(चौपाई)

सकल कामना पूरन होई। जो मन माहँ मिलिहि बर सोई ॥
अस कहि दीनी माल भवानी। जनु पूजी ठकुराइनि जानी ॥
मुख प्रसन्न सिय को सखि देखी। कारज-सिद्धि सत्य मन लेखी ॥
चढ़ी नालकी सीय सुहाई। मंद मंद गवनी सुख छाई ॥
बाजन बाजि उठे यक बारा। बोलहि सखी नकीब अपारा ॥
चलीं हजारन संग सुकुमारी। कहैं जयति मिथिलेस-दुलारी ॥
यहि बिधि गौरि पूजि करि नेहू। गई जानकी जननी-गेहू ॥

सीतहि देखि जनक-महरानी। बोली सबै सखिन सों बानी॥
बड़ि बिलंब कर कारन कहहू। सिय-संग सब सयान सखि अहहू॥
देखत रही सिया फुलवाई। फेरि सरोवर माहँ नहाई॥
पूजी गौर वेद-बिधि करिकै। आवत जननि बेर भइ धरिकै॥
रानी कह्यो 'जाउ सँग माहीं। करवाओ भोजन सिय काहीं॥

धनुषयज्ञ

(दोहा)

राम लषन कौशिक सहित, कियो रैन सुख सयन।
मनहि भय न उर चयन भरि, मीलित मंजुल नयन॥८११॥
चारि दंड जब रहि गई, रजनी अति अभिराम।
ब्रह्म मुहूरत आइगो, जगे लषन जुत राम॥८१२॥

[चौपाई]

पहिरि बसन आये निज बासा। धारयो बिमल बिभूषन बासा॥
कह्यो लषन सों प्रभु मुसुकाई। आजु स्वयंबर लखब सिधाई॥
सानुकूल जापर बिधि होई। रंगभूमि पैहै जस सोई॥
अस कहि गवने गुरू समीपा। पुरुष सिंह सुंदर कुलदीपा॥
उतै उठे मिथिलेस प्रभाता। कियो बिचार बुद्धि अवदाता॥
आजु सुखद सुभ जोग सुहावन। सतानंद कहँ चहिय बुलावन॥
सतानंद कहँ पठयो धावन। ल्यायो तुरत पुरोहित पावन॥
करि प्रनाम बोले मिथिलेसू। बोलि पठावहु सकल नरेसू॥
रंगभूमि महँ सकल प्रकारा। करहु स्वयंबर कर संभारा॥

सुनि मिथिलेस निदेस मुनीसा। एवमस्तु कहि दियो असीसा॥
उठि तहँते सचिवन वुलवायो । जनक राज कर हुकुम सुनायो ॥
सचिव सपदि सब कियो विधाना। सतानंद सासन परमाना ॥
सकल नृपन सासन पठवाये । रंगभूमि सुंदर सजवाये ॥
देस देस के सकल महीपा । सजे समाज सहित कुलदीपा॥

(छंद भुजंगप्रयात)

चढ़े मत्त मातंग पै भूप केते । मनो आजुही स्वर्ग को जीति लेते॥
महा सानवारे वड़ी सैनवारे। चले आवते झूमते वीजवारे ॥
कोऊ पंथ भूमै तुरंगं नचावैं। सुनारीन के वृंद सोभा दिखावैं ॥
कोऊ पालकी पै महीपै सवारे। धनेसै लजावैं सुअँगै सुधारे ॥
प्रतीहार वोलैं छरी पानि धारे। छजैं छत्र चौंरैं चलैं श्रोर चारे ॥
भई भीर भारी पुरी चारि ओरा। वजैं वेस वाजे मच्यो मंजु सोरा॥

(चौपाई)

मंत्री सचिव मुसाहिव धाये । लगे सबन वैठावन चाये ॥
रहीं मंच अवली जो आगे। वैठाये राजन वड़भागे ॥
तिन पाछे मंचावलि माहीं । वैठाये सब सज्जन काहीं ॥
तृतिय मंच अवली जो भाई। पौर जानपद दिय वैठाई ॥
रंगभूमि यहि विधि जब भरिगै। राम दरस लालस हिय अरिगै ॥
यहि विधि रामसमाज विराजी ।सचिवप्रधान सुमतिकृतकाजी॥
देखि स्वयंवर सब संभारा। जाय जनक सों वचन उचारा॥
नाथ सभा महं धारिय पाऊ । आये सकल भूप भरि चाऊ ॥
सुनि विदेह पन पट धारे। रंगभूमि कहं सपदि सिधारे ॥

सासन भेज दियो रनिवासा। बैठि झरोखन लखैं तमासा॥
मंत्रिन जुत मिथिला महराजा। गयो रंगमहि सहित समाजा॥
सतानंद उत चलि मतिधामा। विश्वामित्रहि कियो प्रनामा॥
सतानंद तब वचन सुनायो। तुमहिं विदेह नरेस बुलायो॥
कोसलनाथ-कुमार समेता। रंगभूमि कहँ चलहु सचेता॥
सतानंद की सुनि असि बानी। कौसिक मंजुल गिरा बखानी॥
आप चलहु हम आवत पाछे। लै दोउ राजकुमारन आछे॥
राम लषन सों कह मुसक्याई। बैठहु इतै अबै दोउ भाई॥
जब लगि नहिं मिथिलेस कुमारा। तुमहिं बुलावन कहँ पगु धारा॥
उचित न तब लगि जाब तुम्हारा। तुम समान नहिं राजकुमारा॥
प्रथम जात हम जहाँ विदेहू। जब बुलवैहैं तब चलि देहू॥
अस कहि मुनिसमाज तहं राखी। चल्यो बिदेह दरस अभिलाषी॥
पहुँच्यो रंगभूमि के द्वारा। प्रतीहार तब जाय पुकारा॥
महाराज कौशिक मुनि आये। राजकुमारन नहिं लै आये॥
कियो जाय नृप दंडप्रनामा। दिय मुनीस आसिष तपधामा॥

(दोहा)

कौशिक को बैठाय तिहि कियो बिविध सत्कार।
पूछ्यो कारन कौन नहिं आये राजकुमार॥८३५॥

(चौपाई)

मुनि मुसक्याय कही तब बानी। अहो विदेह बड़े विज्ञानी॥
सतानंद मुनि गये बुलावन। आये तुव हम सदन सुहावन॥
वै तो अवध-अधीस-दुलारे। आवहिं किमि बिन गये कुमारे॥

लक्ष्मीनिधि तिन जाय बुलावन। आवहिं राजकुँअर मनभावन॥
सुनि विदेह बोले हरषाई। भलो सिखापन दिय ऋषिराई॥
पुनि बोल्यो लक्ष्मीनिधि काहीं। आयो कुँवर तुरंत तहांहीं॥
कह्यो विदेह जाहु तुम ताता। आनहु अवध कुँअर अन्नदाता॥
जहँ अवधेस कुमार उदारा। आयो लक्ष्मीनिधि सुकुमारा॥
पूँछि परस्पर निन कुसलाई। लक्ष्मीनिधि बोल्यो सिर नाई॥
रंगभूमि आये सब राजा। भगिनि स्वयंवर होत दराजा॥
आप पधारहु पिता बुलाये। हय गय रथ बाहन पठवाये॥
प्रभु कह जबते गुरु सँग लागे। हय गय रथ बाहन सब त्यागे॥
कौशिक सिष्य कह्यो पुनि आई। राजकुँवर बोल्यो मुनिराई॥
गुरु सासन सुनि दोउ रघुराजा। चले सहित सब मुनिन समाजा॥
विश्वामित्रहि उतै विदेहू। कह्यो नाय सिर सहित सनेहू॥
यह कोदंड विरंचि करतारा। दीन्ह्यो हरकहँ जोग विचारा॥

(दोहा)

पूर्व पुरुष यक मम भये देवरात महराज।
धरवायो हर तिन भवन सोइ धनुष गुनि काज॥ ६४४॥

(चौपाई)

जब प्रगटी सीता सुकुमारी। मैं राख्यों निज भवन कुमारी॥
धर्यो धनुष जहँ तहँ इक कालैं। मैं बुलाय भाष्यों सिय बालैं॥
पूजन हेत पधार कुमारी। मैं नहाइ आवनो सिधारी॥
अस कहि मज्जन करि जब आयो। कौतुक देखि महाभ्रम छायो॥
धनु उठाइ बायें कर सीता। धर्यो और थल परम पुनीता॥

मम पूजन हित भूमि पखारी। यह लखि हृदय संक भइ भारी॥
रैन समय जब सयनहि कीन्हा। संकर मोहि स्वप्न अस दीन्हा॥
जो कोइ लेवै धनुष उठाई। साजै गुन खींचै बरिआई॥
जो तोड़ै कोदंड हमारा। सुता दिह्यो तिहि बिनहिं बिचारा॥
स्वप्न देखि जाग्यो मुनिराई। मम महिषी तब कह्यो बुझाई॥
होत स्वयंबर सो अब नाथा। आय आप मुहिं कियो सनाथा॥
इतना कहत जनक नृप केरे। प्रतोहार दूरहि ते टेरे॥
महाराज भूपति सिरताजा। आवत अवध-कुँवर रघुराजा॥
निरखि राम मिथिलेस महीपै। कियो प्रनाम सिधारि समीपै॥

(दोहा)

राजत राजसमाज मधि कोसलराज-किसोर।
सुंदर स्यामल गोर तनु विश्व विलोचन चोर॥ ६५२॥

(छंद हरिगीतिका)

मुनिपदकमल सिरनाय दिय बैठाय दोनों भाय।
पुनि कह्यो कौशिक सों जनक सब रंगभूमि दिखाय॥
करिकै प्रनाम मुनीस को नृप बैठ आसन जाय।
शासन दियो सब सचिवगन भट प्रबल बिपुल बुलाय॥
ल्यावहु सरासन संभु को तर धरहु बिसद बितान।
सीता करै पूजन सबिधि नहि होइ आन बिधान॥६५३॥

(चौपाई)

जय महेस बोले जन जबहीं। चली धनुष-मंजूषा तबहीं॥
महामल्ल जे पंच हजारा। लै गवने जन और अपारा॥

यहि विधि जस तस कै भट भारे । ल्याये रंगभूमि के द्वारे ॥
चली मल्ल जे पाँच हजारे । धरि मंजूषा अनत सिधारे ॥
गाधिसुवन कहँ जनक लिवाई । गयो जहां धनु दियो धराई ॥
विश्वामित्र संग दोउ भाई । चले मत्त गज-गवन लजाई ॥
मुनि जहँ मंजूषा दरसाई । जिहि विधि सुंदर चौक पुराई ॥
हर-कोदंड जानि तपधामा । कियो महामुनि धनुष प्रनामा ॥
भूप विदेह मुदित मन भयऊ । मुनि आसन लिवाय पुनि गयऊ ॥
बैठे ले मुनि अवध-कुमारे । निज आसन विदेह पगु धारे ॥

(छंद)

उठि उठि सबै देखन लगे भाषत परस्पर है न ।
मिथिलाधिराज-लली भली आवत चली चित चैन ॥
नर नारि सिय लखि कहहिं यहि हित यह स्वयंबर होत ॥
अनुरूप सोई भूप जाकर पूर्व पुन्य उदोत ॥ ६५६ ॥

(छंद चौबोला)

चाप समीप गई वैदेही सखिन समाज समेतू ।
राजन लखन व्याज निरख्यो तहँ उभय भानुकुल-केतू ॥
लागी पूजा करन धनुष की मन रघुपति-पद लागा ।
धूप दीप नैवेद्य आदि सब दीन्ह्यो सहित्त विभागा ॥६६०॥
यहि विधि चारि प्रदच्छिन दैकै कियो प्रनाम पुनीता ।
मनहीमन विनवति महेस को समुझि पिता पन सीता ॥
अंतरहित ह्वै कह्यो आय शिव सीता कानन बानी ।
नहि अभिलाष असत्य रावरी लेहु सत्य यह जानी ॥६६१॥

कछु आनँद उर मानि जानकी पूजि धनुष तिहि काला।
चली बहुरि जननी समीप कहँ लै सखिवृंद बिसाला॥
राम लखत सीता की छबि को सीय राम अभिरामै।
उभय दृगंचल भये अचंचल प्रीति पुनीति सुदामै॥ ६६२॥

(दोहा)

अवसर जानि विदेह तहँ वंदीजनन बुलाय।
सतानंद अभिमत सहित सासन दियो सुनाय॥ ६६३॥
राजसमाजहि मध्य में ह्वै वंदीवर जाय।
बोलत भये पुकारि कै दोऊ भुजा उठाय॥ ६६४॥
मौन होउ नरनाह सब करि कोलाहल बंद।
महाराज मिथिलेस को यह प्रन सुनहु स्वछंद॥ ६६५॥

(कवित्त रूप घनाक्षरी)

विदित पुरारी को पिनाक नवखंडन में परम प्रचंड त्यों अखंड ओज पारावार। बड़े बड़े वीर बरिबंड भुजदंडन सों खंड महिमंड जस जान चाहैं पैरि पार॥ आजलों न देखे तीर केते बली बूड़े वीर गुरुता गँभीर नीर पीर पाय मानै हार। बाहुबल विरचि जहाज रघुराज आज पावै पार सोई सरताज भूमि-भरतार॥ ६६६॥ उदित उदंड जो हजार भुजदंडन सों दिग्गजन जीत्यो सैल फोरयो बलि को कुमार। राजत अचल अर्धंग शिव सह तौल्यौ कर में कमल सो निसाचर को सरदार॥ दोऊ महामानी वीर संभु के सरासन को नाय सिर

आसन को गवने गमी लचार। कोटिन कुलिस सों पुरारि को पिनाक आज तोरि रघुराज सिय ब्याहैं बिनहीं बिचार ॥६६७॥

(छंद तोटक)

सुनिकै मिथिलेस महाप्रन को। नृप मोद भरे धनु तोरन को॥
भुजदंड उमेठि उठे तुरितै। धनु कौन गुनै गुरुता गिरि तै॥
तिनमें कोउ मल्ल महीप रह्यो। द्रुत जाय मँजूपहि पानि गह्यो॥
करि जोर महा अति सोर कियो। मनु खोलि सरासन ऐंचि लियो॥
गिरि गो मुँह के भर भूमि तहाँ। चलि बैठ पराय लजाय महा॥
कोउ देखि महीप मंजूप डर्‌यो। नहिं जोय सक्यो लहि लाज फिर्‌यो॥
सिव-भक्त रहे महिनायक जे। भव रूप लखे भवभायक जे॥
हरि के जन जे नृप ज्ञान भरे। महि में सिर दै परणाम करे ६६८

(छंद तोमर)

भे कोपवान महीप। जुरि खड़े धनुष समीप॥
दस सहस भूप बलीन। धनुभंग महँ लवलीन॥
नहिं सकत धनुप निकारि। मंजूप कर पट टारि॥
तहँ भूप दसहु हजार। गे सिमिटि सब इक बार॥
मंजूप खोलन लाग। तनु जोर अतिसय जाग॥
नहिं हिलत सो मंजूप। जिमि मटनि कूरो रूप॥ ६६९॥

(सवैया)

ज्यों ज्यों करैं नरनायक जोर हरैं पुनि आसन बैठहिं आई।
स्वेद भरे मुख हारे हिये बल पौरुष कीरति देइ गमाई॥

त्यों त्यों सबै मिथिलापुर के जन राजन को हँसैं हेरि ठठाई।
श्रीरघुराज मनावैं बिरंचि दलैं सिव के धनु को रघुराई ॥६७०॥

(दोहा)

धनु तोरन जोरन सुगुन रह्यो एकही ओर।
मंजूषा ते खैंचिबो कठिन परो यहि ठोर ॥ ६७१ ॥

(सोरठा)

दोउ बंदी तिहि काल बोले वचन पुकारिकै।
सुनहु विदेह भुवाल राजसमाजहि लाज भय ॥ ६७२ ॥

(छप्पय)

प्रन राउर सब नृपन सुनाये भुजा पसारी।
तमकि तमकि बहु भूप आय कीन्हे बल भारी॥
सके न कोई मंजूषा की पटल उघारी।
खैंचब ऐंचब साजि प्रत्यंचा काह बिचारी॥
अब जस अनुसासन रावरो होई यहि छन तस करैं।
धौं धरो रहै दुर्धर्ष धनु धौं लै तिहि धामहिं धरैं ॥ ६७३ ॥
सुमति बिमति के वचन सुनत मिथिलेस रिसाई।
सिंहासन पर खड़ो भयो नयनन अरुनाई॥
बोल्यो बचन कठोर सोर करि भूरि भयावन।
छत्रवंस छिति छाम जानि मन बहुरि बढ़ावन॥
धरवाय देहु धनु धाम में धाम धाम धुनि आम करि।
अब उर्वीतल उर्वीस कोउ गर्वी होई न गर्व भरि ॥ ६७४ ॥

(सवैया)

पूरब जो जनत्यों जगती में नहीं है कहूं बर वीर प्रतापी ।
छत्रिन की करि छय भृगुनाथ नहीं पुनि छत्रिन को छिति थापी ॥
श्रीरघुराज सुनो सब राज प्रनै करतो नहिं सत्य अलापी ।
क्यों धरतो उपहास सिरै करि पूरन पुन्य कहौं त्यों न पापी ॥६७५॥

लक्ष्मण-कोप

(दोहा)

ते विदेह के वचन सर भू परि रहे लजाय ।
गये न सहि यक लषन सों भभकि उठ्यो फनिराय ॥ ६७६ ॥
अरुन नयन फरकत अधर लषन लखत भुजदंड ।
श्वास लेत भुजगेस सम अमरष उठ्यो उदंड ॥ ६७७ ॥
तहँ विदेह के वचन सर भये लषन हिय पार ।
जोरी पानि पंकज प्रभुहि कीन्ह्यो विनय उदार ॥ ६७८ ॥
सुनहु दिवाकरकुलकमल हौं तिहरो लघु भाय ।
जन्म पाय रघुवंस महँ अस कसकै सहि जाय ॥ ६७९ ॥

(छंद झूलना)

कहत नहिं उचित मिथिलेस यहि देस महँ आपको अक्ष परतक्ष देखैं॥
बदत मुख वीर ते विगत भय वसुमती रतीभर सजत नहिं भूप तेखैं।॥
सुनौं रघुराज हौं रावरो दास नहिं बावरो वेप करि कहौं रेखैं ।
आसु आयसु करहु मिटै उर दुसह दुख लखैं कौतुक नृपति नारि वेखैं॥

(छंद नाराच)

करौ निदेस नाथ नेकु नैन ते निहारिकै। उठाय भूमि फेकिहौं पताल ते उखारिकै। पुरान या पुरारि को पिनाक ना कठोर है॥ उठाय लै चढ़ाय धाय जाउं छोनि छोर है॥ कितेक बात बापुरो पिनाक रामदास को। उठाइवो चढाइवो न नेकु काम आस को॥ अबै न बीर ते बसुंधरा विहीन ह्वै गई। कही वृथा विदेह बात सोचि ना भले लई॥ जबै प्रवीर लछमनै सकोप भो समाज में। सकान भीति मानि भूप बूड़ि सिंधु लाज में॥ प्रकोपवंत देखिकै अनंत को तुरंत ही। भगे विमान गीरवान लै विचारि अंतही॥ विचारि विश्व को विहाल दीन को दयाल जो। कराल कोप को न काल हाल विश्वकाल जो॥ चलाय नैन सैन बंधु को निवारि लेत भो। निवारि देवतानि को मिटाय भीति देत भो॥ ६८१॥

(दोहा)

प्रभु-नयनन की सैन लखि लषन वंदि पदकंज।
भये मौन छवि भौन तहं करि महीप मद गंज॥ ६८२॥

(चौपाई)

विश्वामित्र महामुनि ज्ञानी। बोलत भे अवसर जिय जानी॥
सुनहु विदेह भूप मतिमाना। जो अब तुम कछु वचन बखाना॥
सो अनुचित रघुकुलमनि आगे। इनको बयन बान सम लागे॥
लषन कही सोऊ लरिकाई। बदन बदत कहुं बीर बड़ाई॥

जो अनुसासन होइ तुम्हारैं। धनु समीप अब राम सिधारैं॥
कोसलपाल कुँवर सुकुमारे। सबके पाछे चहत सिधारे॥

(दोहा)

सुनिकै विश्वामित्र के वचन विदेह विचारि।
बोल्यो पदवंदन करत नयन बहावत वारि॥ ६८४॥

(चौपाई)

का कहिये मुनि नहिं कहि जाई। कोमल कुँवर धनुष कठिनाई॥
प्रन परिहरे न होत प्रबोधा। हारि रहे जगती के जोधा॥
जो मम भाग्य विबस रघुराजू। तोरहिं संभु सरासन आजू॥
तौ पुनि इनहिं छोड़ि मम बाला। काके गल मेली जयमाला॥
अस कहि मुनिसों पुनि मिथिलेसू। दीन्ह्यौ बंदिन विदित निदेसू॥
द्वीप द्वीप के सकल महीपा। अब नहिं गवनहि धनुष समीपा॥

(सवैया)

भूपति वैन विचारि मुनीस मनैमन श्रीजगदीस सम्हारी।
मंजुल मंदहि मंदहि वैन कह्यो रघुनंदहि नैन निहारी॥
श्रीरघुराज सुराज समाज में लाज भई सब गे हिय हारी।
लाल उठौ यहि काल तुम्हीं मिथिलेस-कलेस को देहु निवारी॥

(सोरठा)

सुनि कौसिक के वैन-प्रेम लपेटे निपट सुख।
उठे सहज छबि-एन गुरु-पद-पद्म प्रनाम करि॥ ६८६॥

धनुष भंग और जयमाल

(कवित्त)

उतरि चलो है मंद मंद उच्च मंचही ते मंदर ते मानो कढ़ि आयो मृगराज है। माना महामत्त मंद चलत मतंग मग, मूर्तिमान मंड्यो मानो वीर रस-राज है॥ भूमि-भरतारन को तारन सो तेज हरी आवत उदैगिरि ते मानौ दिनराज है। काज करिबे को मन लाज भरी नयनन में राजन समाज मध्य राजैं रघुराज है॥ ६६० ॥

(दोहा)

छटो छबीलो साँवरो कोसल-राज-किसोर।
मत्त मतंगज गवन करि चलो जात धनु-ओर॥ ६६१॥
झांकि झरोखन ते तहाँ जनक-राज-पटरानि।
सखी सयानि बुलाय ढिग बोली विस्मित बानि॥६६२॥

(सवैया)

येहो सखी अवधेस-कुमार बड़ो सुकुमार लगै सुचि लोना।
कौसिला-बारो तथैव हमारो बिलोकि कै कोई करै नहि टोना॥
तू चलिकै रघुलाल के भाल बिसाल में देदे सुनील डिठोना॥
काज कियो मुनि को रघुराज पै मोहि तो लागै मराल सो छोना॥

(दोहा)

सुनि जानकि-जननी-बचन बोली सखी सुजानि।
देवि मोरि बिनती सुनो मन की तजहु गलानि॥ ६६४॥

(सवैया)

हे करुणाकर संभु सुजान करी तुम्हरी अबलौं सेवकाई ॥
आय परयो अब काम सुई परिपूरन कीजिये मोरि सहाई ॥
श्रीरघुराज के पंकज पानि तिहारे सरासन की गुरुताई ।
भूलहु ते पुनि फूलहु ते तिमि तूलहु ते न लहै अधिकाई ६६५

(दोहा)

मनहिं मनावति जानकी गौरी गनेस पुरारि ।
देखि राम-शोभा सुखद यकटक रही निहारि ॥ ६६६ ॥
भरे त्रिलोचन प्रेमजल पुलकावली सरीर ।
निरखि अवनि पुनि पितु जननि पुनि निरखति रघुवीर ६६७
तहं तिहि छन सिय के हिये जो दुख होत महान ।
तौन भानुकुल-भानु सब जानत राम सुजान ॥ ६६८ ॥
सकल महीपन के लखत चाप समीपहि आय ।
अचल नीलमनि शृंगसम ठाढ़े सहज सुभाय ॥ ६६९ ॥
सहज सुभाव दुराव नहिं तेज कोटि दिनराउ ।
कह्यो वचन रघुराउ मृदु सुनहु विनय मुनिराउ ॥ ७०० ॥

(चौपाई)

हे गुरु अस मानस कछु मेरो । करौं यत्न धनु ऐंचन केरो ॥
धनुष उठाय चढ़ावन काहीं । चढ़ति चाप नेसुक चित माहीं ॥
पूछि लेहु मिथिलेस नरेसै । जनन करन कहं देहु निदेसै ॥
सुनि मिथिलेसै कह-मुसक्याई । तुव निदेस चाहत रघुराई ॥

नृप कह भली कही रघुनाथा। खैंचन चाप लगावहिं हाथा॥
बोले बिश्वामित्र पुकारी। गहहु राम धनु पटल उघारी॥

(दोहा)

संमत सहित बिदेह को सुनि गुरु-आयसु राम।
गुरु समेत मुनिजनन को किय करकमल प्रणाम॥७०४॥

(कवित्त)

सहज सुभाय कर कमठ लगाय मनजूषा को उघारि दीन्यों झमकि झड़ाक दै। ताते ऐंचि संभु को सरासन प्रयास नहिं साजत प्रत्यंचा कोन कड़के कड़ाक दै॥ रघुराज कौतुक सो ऐंच्यो चाप कानन लौं चंचलासी चौंध परी चखन चड़ाक दै। अवधकिसोर बाहु-जोर को न थोरो सह्यो टूटिगो त्रिनेत्र-धनु तड़कि तड़ाक दै॥७०५॥

(दोहा)

टूटत हरकोदंड के भयो भयावन सोर।
मनहुँ सहस पविपात यक वार भयो तिहि ठोर॥७०६॥

(कवित्त)

चैांकि उठ्यो चारिमुख चितवत चारो ओर चंद्रचूड़ चेत्यो चित चखन उचायकै। गगन ते गिरे गीरवान जे बिमानन में छोनिक को छुवत अस बचे अकुलायकै॥ रंगभूमि भूपति-समाज नरनारि जेते एकै बार गिरिगे प्रचंड सोर पायकै। रघुराज लषन बिदेह मुनि ठाढ़े रहे राम जब तूट्यो संभु-चाप को चढ़ायकै॥७०७॥

(छंद हरिगीतिका)

धनु-भंग कीन्ह्यो रंगभूमि समाज मधि रघुवीर ।
रव भयो घोर अघात बहु निर्घात सम प्रद पीर ॥
देखे परे पुहुमी पिनाक द्विखंड तेज अपार ।
तिनके निकट ठाढ़े सहज अवधेस-राजकुमार ॥७०८॥
तिमि सकल पुरजन भये ठाढ़े किये जय जयकार ।
मिथिलेस सुकृत सराहि पुनि जय कहहिं अवधकुमार ॥
गावन लगीं पुरनारि मंगल गीत चारिहु ओर ।
तिहि समय बढ़्यो उछाह अति जनु भुवन लागत थोर ७०९

(छंद गीतिका)

तोरयो सरासन-संभु को जब अवधराजकिसोर ।
भूपति चमूपति लगत इमि चुप बैठ मानहुँ चोर ॥
उड़िगै वदन की लालिमा फिफरी परी अधरानि ।
इक एक देखत कहत नहिं मनु भई सरवस हानि॥७१०॥
मुद के महोदधि मगन भे मिथिलेस गद्गद कंठ ।
को कहै तिनको हिय हरष मानहुँ लहे वैकुंठ ॥
मिथिलेस तब चलि गाधिसुत के चरन कीन प्रनाम ।
अस कह्यो तुम इत ल्याइ रामहि कियो पूरन काम॥७११॥
सो संभुधनु भंज्यो सहज यह साँवरो रघुलाल ।
अब होय [illegible] स तो मेलै सुता जयमाल ॥
तब महामुनि [illegible] बोले पुण्य राउर भूरि ।
सिवचाप तृन फल फूल सम क्यों सकैं राम न तूरि॥७१२॥

अब देहु आयसु जानकी जयमाल मेलै जाय।
पुनि अवधपुर ते आसुही लीजै बरात बुलाय॥
सुनि बचन कौसिक के विमल नृप सतानंदहि आनि।
जयमाल-हित सासन दियो अवसर सुखद जिय जानि॥

(दोहा)

सतानंद आनंद भरि गये तुरत रनिवासु।
कह्यो जानकीजननि सों अब कीजे अस आसु॥ ७१४॥
सजि शृँगार गावत मधुर संग सहस्रन बाल।
सियहि पठावहु राम के मेलै गल जयमाल॥ ७१५॥

(चौपाई)

चली जानकी लै जयमाला। पहिरावन को दसरथ-लाला॥
सोहहिं सुंदरि संग हजारन। सुरदारन सम किये शृँगारन॥
महा भीर सब राज-समाज्ञा। खैरभैर मचि रह्यो दराजा॥
कुमतिकुपतिसंमतिकरिलीन्हें। सियहिनत्यागवविनछुधकीन्हें॥
अस सुधि पाय सुनैना रानी। सायुध पठई सखिन सयानी॥
बल्लम कुंत कटार कृपानी। कसे नारि कम्मर मरदानी॥
डरपे कुमति कुपति अविवेकी। टरिगे टारि टेंक जो टेकी॥
बाहिर जाय जूथ सब बाँधे। रन हित आयुध काँधन काँधे॥
सुनत जनक भूपन उत्कर्षा। कियो हर्ष महँ परम अमर्षा॥
चतुरंगिनी सैन्य सजवाई। दियो द्वार महँ ठाढ़ कराई॥
इतै सखीन समाज पुनीता। आई रंगभूमि मँह सीता॥
मानहु संग सक्ति-समुदाई। कढ़ि कमला छीरधि ते आई॥

(दोहा)

राम-रूप नख सिख निरखि अनिमिष नयन लगाय।
रही ठमकि मन अचल करि देह दसा बिसराय ॥७२२॥

(सवैया)

दोऊ निमेषन नेवर जानिकै नयनन ते करि दीन्हीं बिदाई।
प्रीति के पास में दोऊ फँसे पदकंज दोऊ के गहे थिरताई॥
लाज को काज अकाज भयो रघुराज उछाह को भै अधिकाई।
राम को भूलि गयो धनु-भंग सिया पहिरावन माल भुलाई॥७२३॥
अंगुली,सो गहि अंगुली कोमल मंजु अली मुख सों मुसक्याई।
मंजुल बानी कही सुखसानी सुनेसुक नयनन सैन चलाई॥
आई इतै पहिरावन को जयमाल बिसाल रसाल तुराई।
सो पहिराय चलो रघुराज सदा निरख्यो यह सुंदरताई॥७२४॥
मंजुल जुक्ति भरे सखी बैन सुने सिय नेसुक नैन नचाई।
नेसुकही सखि ओर लखी मुसक्याइकै मंदहि मंद लजाई॥
मंदहि मंद उभै कर सों रघुराज चितै जयमाल उठाई।
बासवचाप के बीच मनो चपला चमकै घनस्याम निराई॥७२५॥
आली गिरा सुनिकै रससाली चहै पहिरावन को जयमालै।
सीय बिचारै मनै मनही में परी परिपूरन प्रेम के जालै॥
कोमल श्रीरघुराज के अंग कठोर महा कुसुमानि की मालै।
हाय कहूँ गड़ि जाय गरे पछिताय रही हिय पाय कसालै॥७२६॥

(सोरठा)

तहँ बिलंब जिय आनि मंद मंद बोले लषन ।
अंब अनुग्रह-खानि बितत मुहूरत अति सुखद ॥७२७॥
सिय सुनि देवर-बैन सकुचि रची रति राम के ।
लखि लषनै भरि नैन द्रुत जयमाल उठाय कर ॥७२८॥
दई प्रभुहि पहिराय बिबिध रंग जयमाल गल ।
सो छबि कही न जाय मर्कत गिरि मनु धनु उयो॥७२९॥

(दोहा)

राम गले जयमाल लखि भे सब लोग निहाल ।
माच्यो जयजयकार तहं बार बार तिहि काल ॥७३०॥

(छन्द हरिगीतिका)

मानी महीपति तुरत तमके तेग चमके पानि में ।
नहि जके आपुस महं बके सिय तके दीठि लुभानि में ॥
हमरे सुअच्छ प्रत्यच्छ देखत कौन कुँवरि बिवाहिहैं ।
लच्छन बिपच्छ बिपच्छ करि रनसिंधुको अवगाहिहैं॥७३१॥

(चौपाई)

नृपन-बचन सुनि लषन रिसाने । फरकि उठे भुज नयन ललाने ॥
दंतन दरत अधर लै श्वासू । बोलि सकत नहिं रघुपति-त्रासू ॥
खरभर होत सबी डरपानी। राम लषन लखि सिय मुसक्यानी ।।
सायुध सखी खड़ी बढ़ि आगे । कहहिं भूप का करत अभागे॥
प्रथम हनब हमहीं हथियारन । समर कौन करि सकै निवारन॥
प्रगटत लछमन कोप कराला । राम कह्यो हँसि बचन बिसाला॥

अजा महिष खर लखि पंचानन। सुन्यो न कोप करत कहुं कानन॥
राम-बचन सुनि लषन लजाने। लखन लगे महि मृदु मुसुक्याने॥
गगन गिरा भइ राजन काहीं। निज निज भवन भूप सब जाहीं॥
जो कुचालि करिहैं यहि ठोरा। हनिहैं तिन्हैं जच्छ बरजोरा॥
मिट्यो कोलाहल गे जब भूपा। माच्यो मंगल सोर अनूपा॥
मनहीमन पद बंदन करिकै। साँवलि मूरति हिय,मह धरिकै॥
चली सीय जननी ढिग काहीं। गावत मंगल सखी सुहाहीं॥
तिहि अवसर बिदेह तहं आये। बिश्वामित्र चरन सिर नाये॥
जोरि कमल कर कह्यो बिदेहू। तुव प्रसाद मिटिगो संदेहू॥
अब आगे जस सासन देहू। करौं तौन विधि बिन संदेहू॥
सुनत बिदेह बचन सुखदाई। बोले बिहँसि बचन मुनिराई॥
जानहु सकल रीति मिथिलेसू। का हमसों अब लेहु निदेसू॥
तदपि उचित जस मोहि दिखाई। पूछे ते अब देत सुनाई॥
पठवहु चारि चार के हाथा। सुनत होइ रघुवंस सनाथा॥
इतै करहु सब ब्याह तयारी। तुम समान दोउ भूपति भारी॥
लै बरात आवैं नरनाहा। करैं उछाहित राम बिवाहा॥

(दोहा)

करहु जाय मिथिलेस अब जथा वंस व्यवहार।
जथा वेदविधि लोकविधि होइ सुखी संसार॥७४३॥
राम-लषन-संयुत इतै ऋषि सुखसिंधु नहाय।
कीन्ह्यो वास निवास चलि भये अस्त दिनराय॥७४४॥

विवाह की तैयारी

(दोहा)

विश्वामित्र-निदेस लहि जनक जाय दरवार।
बोलि महाजन मंत्रि मुनि सभ्य सुहृद सरदार ॥७४५॥

(चौपाई)

सतानंद तिहि अवसर आये। उठि भूपति आसन बैठाये॥
भूपति करि सबको सत्कारा। सतानंद सों वचन उचारा॥
कोसलपुर पठवहु अब चारा। लिखि पत्रिका चरित यह सारा॥
लै बरात कोसल-महराजा। आवहिं करन पुत्र कर काजा॥
कीरति विभव प्रताप बड़ाई। दसरथ की नहिं लोक लुकाई॥
भुवन-विदित निमिकुल-मर्यादा। प्रगट सबन मम रोष प्रसादा॥
सुनि आयसु मंत्रिन कहँ देहू। करहिं काज सब बिन संदेहू॥
उत वशिष्ट इत आप सुजाना। सकल भाँति हो उभय समाना॥
सतानंद बोले तब बानी। धर्मधुरंधर भूप विज्ञानी॥
तुव प्रताप सपरी सब काजा। जस दिगंत फैली महराजा॥
अस कहि सतानंद सुख छायो। राजकाज मंदिर महँ आयो॥
विश्वकर्म आवाहन कियऊ। मुनि-तप-बल प्रगटत सो भयऊ॥
राम सिया ब्याहन के जोगू। मंडप रचहु दिव्य सब भोगू॥
पुनि सब मंत्रिन तुरत बुलाई। विश्वकर्म आधीन कराई॥
राज रजाय सिलिपवर धाये। अवध प्रयंत सुपंथ बनाये॥
जोजन जोजन महँ हित बासा। बिरचे बिबिध विलास निवासा॥

कमला तीर सघन अमराई। जहँ बसंतऋतु रहत सदाई॥
कीन तहां जनवास विचारा। विरचे थल थल विविध अगारा॥
जब दै सतानंद को सासन। बैठे विमल विदेह सिंहासन॥
सुभगाक्षर लेखक विद्वाना। राजप्रसस्ति जाहि सब ज्ञाना॥
तबहि महीप समीप बुलायो। कनक विचित्र पत्र मँगवायो॥
सावधान ह्वै थिर मति करिकै। लिखहु पत्र ललिताक्षर भरिकै॥
अक्षर लिपि प्रसस्ति अरु अर्था। होइ हँसी नहिं देखन व्यर्था॥
निमिकुल-कमल-दिवाकर-बैना। सुनि पंडित पायो अति चैना॥
कह्यो जोरि कर जथा निदेसू। लिखिहौं तिहि विधि तजि अंदेसू॥
कोसलपाल जदपि बड़ राजा। पै इत नहिं कछु न्यून समाजा॥

(दोहा)

अस कहि लाग्यो लिखन सो दसरथ भूपति पत्र।
कनक कलित कागज ललित करि मानस एकत्र॥ ७५९॥

पत्र-प्रेषण

(सोरठा)

यहि विधि पत्र लिखाय चतुर चारि चारन दियो।
तरल तुरंग चढ़ाय पठयो अवध विदेह नृप॥ ७६०॥

(छंद चौबोला)

लग्यो काम जहँ जहँ मग सोधन तहँ तहँ किये पुकारा।
करहु सोभ्रता सकल सिलिपवर सासन जनक भुवारा॥

यहि विधि देखत कहत चार ते जात तुरंग धवाये।
दिवस द्वैक महँ चलत दिवस निसि कोसलपुर नियराये॥७६१॥
करि प्रणाम धावन घोरन को अतिसय चपल धवाई।
सरजू सलिल पियायो वाजिन पहुँचि अवध अमराई॥
पहुँचि अवध उपवन विदेह के धावन सरजु नहाए।
दै चंदन करिकै रविवंदन पहिरे वसन सुहाए॥७६२॥
करिकै कछु भोजन मनमोजन करि वाजिन स्रम दूरी।
साजु साजि पुनि चढ़े तुरंगन चले मोदभरि भूरी॥
अवधनगर कीन्हे प्रवेस ते मिथिलापति के धावन।
जात त्वरात चले जद्यपि ते निरखत नगर सुहावन॥७६३॥
बाकी रह्यो जाम भरि वासर तब अजनंदन भूपा।
वैठ्यो आय सभा सिंहासन भूषन वसन अनूपा॥
पुरजन परिजन सज्जन सिगरे वैठ राजदरबारे।
सुहृद सखा सरदार सचिव सब जगतीपतिहि जुहारे॥७६४॥
तहँ सुयज्ञ जावालि कश्यपहु मार्कंडेय पुराने।
वामदेव अरु मुनि वशिष्ठ तहँ आये सभा सुजाने॥
उठि भूपति प्रणाम तिन कीन्हे वर आसन बैठाए।
जोरि पानि पंकज विनीत ह्वै सादर वचन सुनाए॥७६५॥
आज सकुन वहु लखे नाथ हम जानि परै फल नाहीं।
चढ़े स्वपन महँ स्वेत सैल पर देखे इंदु नहाँहीं॥
कछुक काल लगि मुनि विचारि तहँ भाष्यो अवधभुवाले।
लै चीठी अतिसय मन मीठी खवरि कही कोउ हाले॥७६६॥

यहि विधि करत वशिष्ठ भूप के सभा सुखित मर्यादा।
आये चारि चार मिथिला ते राजद्वार मर्यादा ॥
दसरथ द्वारपाल देखे तिन छरी विदेह निसानी।
सादर कुसल पूछि मिथिला की बैठाए सनमानी ॥७६७॥
तुरत जाय अवधेस सभा महँ ऐसे बचन सुनाए।
धावन चारि पत्र लै आये श्रीमिथिलेस पठाये ॥
सुनि मिथिलेस पत्र की आवनि लहि नृप मोद महाई।
कह्यो द्वारपालहिं विदेह के ल्यावहु दूत लिवाई ॥७६८॥
द्वारपाल धाए तुरंत तहँ कहे जाय तिन पाहीं।
भूप-सिरोमनि तुमहि बुलायो चलिय सभा सुख माहीं।
सभा-द्वार पहुँचे जब धावन दसरथ-सभा निहारे।
सिंहासनासीन कोसलपति सुनासीर मद गारे ॥७६९॥
कनक मुद्र कछु रत्न लिये कर जथा राज मर्यादा।
चारौं चतुर चार चलि सन्मुख भरे भूरि अहलादा ॥
पुलकित तनु करिकै प्रणाम सब दंड सरिस महि माहीं।
दीन्हे नजरि निछावरि कीन्हें कोसलनायक काहीं ॥७७०॥
जोरि पानि पंकज पुनि बोले अतिसय मंजुल बानी।
महाराज-मिथिलाधिराज इत पठए हमहिं बिग्यानी ॥
कह्यो कुसल पूछन को बहु विधि अपनी कुसल सुनावन।
दीन्ह्यो बहुरि विचित्र पत्र यह रघुकुल-मोद बढ़ावन॥७७१॥
अस कहि चतुर चार लै खत कर धर्यो चरन के आगे।
ठाढ़े रहे मौन चारौ चर अवलोकन अनुरागे ॥

लै विदेह को छिप्र पत्र कर दसरथ सीस लगाये।
मानहुं मिले विदेह आय दृत अस आनँद उर छाये ॥७७३॥
दूत गहे पुनि पद वशिष्ठ के बोले वचन सुखारे।
कियो दंड सम प्रणत आपको स्वामी जनक हमारे॥
दियो असीस मुनीस मोद भरि पूछो जनक भलाई।
दूत कह्यो मुनि कृपा रावरी सब विधि ते कुसलाई ॥७७४॥

(दोहा)

अजनंदन पूछयो बहुरि ये हो दूत सुजान।
तुम जानो कछु खबरि मुनि कौसिक किहि सुस्थान॥
सुनत दूत भूपति वचन कहे वचन मुसक्याय।
खत बाँचे मिथिलेस का सिगरो परी जनाय ॥ ७७६ ॥

(चौपाई)

दूत वचन सुनि अवध भुआला। लग्यो पत्र बाँचन तिहि काला॥
सकल पत्रिका जब नृप बाँची। जानो राम लषन सुधि साँची॥
विधिसुत पानि पत्रिका दीन्हीं। जोरि कंज कर विनती कीन्हीं॥
यह सब नाथ तुम्हारी दाया। रंगभूमि रघुपति जस पाया॥
लै खत पुलकि मुनीसहु बाँचे। लहि सुखसिंधु राम रति राँचे॥
प्रेममग्न कछु बोलि न आया। जस तसकै बोले मुनिराया॥
कालिह सुदिन सुंदर सुभ जोगा। सजन बरातहि देहु नियोगा॥
दसरथ कह्यो न मैं कछु जानौं। आप रजाय सिद्ध सब मानौं॥
खेलत रह सरजू के तीरा। जुगल बंधु लै बालक भीरा॥
एक सखा तब खबरि जनायो। चार पत्र पुर ते लै आयो॥

सुनत खबरि धाए दोउ भाई। राजसमाज पिता ढिग आई॥
पिता विदेह-पत्र किमि आयो। सुनन हेतु हमरो चित चायो॥

(दोहा)

सुनत कुमारन के बचन दीन्ह्यो पत्र मँगाय।
कह्यो जाय रनिवास में दीजे लाल सुनाय॥७८३॥
करि भूपति दूतन बिदा कियो सभा बरखास।
भरत सत्रुहन संग लै गए आपु रनिवास॥७८४॥
ब्रह्म मुहूरत जानि कै उठ्यो सु कोसलपाल।
प्रातकृत्य निरबाहि कै करि मज्जन तत्काल॥७८५॥
अर्घ्यप्रदानादिक कियो रंगनाथ पद बंदि।
पहिरि विभूषन बसन वर बैठ्यो सभा अनंदि॥७८६॥

(छंद चौवोला)

मंत्रिन प्रजा महाजन सुभटन सरदारन कुलवारे।
पौर जानपद सभ्य सुजानन कोसलपाल हँकारे॥
आये सकल सभा मंदिर महँ दशरथ राज जुहारे।
सहित समाजन जथा जोग्य तिन प्रतीहार बैठारे॥७८७॥
तब सुमंत को पठै तुरंतहि गुरु वशिष्ठ बुलवायो।
राम काज को काज जानि तहँ मुनिवर हरबर आयो॥
पद अरविंदन वंदन करिकै कनकासन बैठायो।
आज जनकपुर चलन चाय चित चारु निदेस सुनायो॥७८८॥
अहै मुहूरत सुभ गोधूली चलन बरात हुलासा।
ताते आज तीर सरजू के होय सुपास निवासा॥

यहि विधि सासन दै सुमंत को उठन लगे महराजा।
आये चारि विदेह दुत तहँ त्वरा-करावन काजा ॥७८९॥
दूतन सों पुनि कह्यो अवधपति गोधूली सुभ वेला।
चली बरात जाय सरजू तट रहिहै अब नहिं झेला॥
जाहु दूत दीजै विदेह को आसुहि खबरि जनाई।
चौथे दिवस दरस करिहैं हम मिथिलापुर महँ आई॥७९०॥
सुनिकै दूत अकूत मोद लहि चले तुरत तिरहूता।
गए दानमंदिर दसरथ इत बोल्यो बिप्रन पूता॥
हय गय भूमि कनकपट भूषन धेनु धाम धन वेसा।
किये दरिद्र हीन जग जाचक राम लषन उद्देसा ॥७९१॥

(दोहा)

खैरभैर माच्यो अवध सुंदर सजी बरात।
गोधूली वेला सुभग आई अति अवदात ॥७९२॥

बरात का चलना

(छंद चौबोला)

उठ्यो चक्रवर्ती आसन तें मंद मंद पगु धारयो।
पढ़त स्वस्त्ययन विप्रमंडली स्वर-जुत वेदन चारयो॥
कनककलस धरि सीस सहस्रन आगे सधवा नारी।
करहिं मंगलामुखो गान बहु मंगल सुरन सवाँरी ॥७९३॥
नारी बरसि बरसि लाजा सुम गावहिं मंगल गीता॥
बिज्जु-छटासी चढ़ीं अटा में कनकलता-छबि जीता॥

गुरु वशिष्ठ आगू पगु धारे पाछे कौसलभूपा ।
सोहत मनहुँ देवगुरु-संजुत देव-अधीस अनूपा ॥७६४॥
यहि विधि चारु चक्रवर्ती नृप चारु चौक पगु धारा ।
भरत सत्रुहन सजे खड़े तहँ सुंदर जुगल कुमारा ॥
प्रथम वशिष्ठ चढ़ाये स्यंदन दसस्यंदन नृपराऊ ।
लगी तोप तड़पन तिहि अवसर परयो निसानन घाऊ॥७६५॥
भयो सवार भूप निज रथ में मनिगन अमित लुटाई ।
आठ आठ घोड़े रथ जोड़े हीरन साज सजाई ॥
भरत सत्रुसूदन सुमंत को कह्यो बुलाय नरेसा ।
सैन चलावहु जौन भाँति हम प्रथमहि दियो निदेसा॥७६६॥
करि अभिवंदन दिगस्यंदन-पद तीनहुँ गए तुरंता ।
रिपुहन हयगन, भरत नागगन, रथगन रह्यो सुमंता ॥
चली बरात अवधपुर ते तब करि दुंदुभी धुकारे ।
नौबत झरत चली नागन महँ रव करनाल अपारे ॥७६७॥
यहि विधि चल्यो तुरंगम मंडल सुन्दर सवारन पाछे ।
राखे अभिलाषैं अपने मन राम लखब कब आछे ॥
वाजीमंडल के पीछे पुनि मंडल चल्यो गयंदा ।
मनहुँ पवन पुरवाई पावन उदय श्याम घन वृंदा ॥७६८॥
शत्रुंजय गजेंद्र गजमंडल मधि में भ्राजत भारी ।
राजकुमार सवार भरत तिहि राजत जन-मनहारी ॥
गजमंडल के पाछे सोहत रथमंडल नहिं दूरे ।
बरन बरन बाजिन की राजी राजि रही मगरूरे ॥७६९॥

पुनि रनधीर भीर प्यादन की सायुध चली अपारा।
चमकहिं तेग अनी कुंतन की सिंधु तरंग अकारा॥
रथमंडल पीछे पुनि सोहत परिकर भूपति केरो।
कनकदंड कर जड़ित हजारन रत्नन होत उजेरो॥८००॥
हाटक के छोटे सोंटे कर पंचानन आनन के।
धरे कंध सोहत अति सुंदर अवध जनन ज्वानन के॥
सोहत वल्लभ विविध प्रकारन छरी हजारन हाथा।
पीत वरन पहिरे पट भूपन चले जात प्रभु साथा॥८०१॥
जुग स्यंदन सवार सोहत तहँ दिगस्यंदन मुनिराई।
मनहु देवनायक सँग सोहत वाचस्पति सुखछाई॥
चारि चमर चहुँओर विराजैं छत्र छपाकर छाजै।
अंसुमान इव आतपत्र जुग बितद् विजन बहु भ्राजै॥८०२॥
कोसलपति पीछे पुनि गमनत राजत राज निपादा।
लीन्हें भीर निपाद भटन की हय चढ़ि विगत विपादा॥
यहि विधि चली वरात जनकपुर अवध नगर ते भारी।
कुसल कहहिं लखि राम लपन को पूजी आस हमारी॥८०३॥

(छंद गीतिका)

बाजन अनेकन बाजहीं दस दिसन छाय अवाज।
तंबूर ढोलहु ढक्क डिंडिम पनव पटह दराज॥
मंजीर मुरज उपंग वेनु मृदंग सलिल तरंग।
बाजत विसाल कहाल त्यों करनाल तालन संग॥८०४॥
बंदी विदूपक बदत बहु विधि सुजस जुक्ति समेत।

यह भानुकुल कीरति उदय जो ख्याति पंथ सपेत ॥
जब कढ़ी कोसल नगर ते मैदान माहि बरात ।
तब भयो देवन भोर मानहुँ सिंधु छितिप दिखात ॥८०५॥

(छंद कामरूप)

'अब आज अधिक न जात बनत मुकाम सरजू तीर ।
यह पहिल बास सुपास सब कहँ जाइ जुरि संग भीर ॥'
अस कहि बिदा करि सचिव कहँ पुनि कह्यो गुरु पहँ भूप ।
'यह साहिबी मन ल्याइबी निज कृपा फल अनुरूप ॥८०६॥
देखहु सकुन सब होत सुंदर सुभ जनावत जात ।
दिसि बाम चारा नीलकंठ विहंग लेत दिखात ॥
फरकहिं भृकुटि भुज नयन दच्छिन दिसत अधिक अनंद ।
अचरज न कछु जहँ आप मंगल रूप करुनाकंद' ॥८०७॥
अवधेस के सुनि बैन लहि अति चैन मृदु मुसक्याय ।
पुलकित सजल दृग कंठ गद्गद कहत भे मुनिराय ॥
'धनि धरा में अवधेस तुम जिहि राम लषन कुमार ।
भल करहिं अपने ते अमर मंगल प्रमोद अपार ॥८०८॥
जस आप तस मिथिलेस जस मिथिलेस तस पुनि आप ।
नहिं तृतिय आज समान कोउ यह सत्य मम संलाप ॥'
मुनि भूप के अस करत संभाषन खड़े मग माह ।
आये बहोरि बिसेप सरजू तीर सहित उमाह ॥८०९॥
डेरा सुमंत दिवाय सबको सहित सुथल सुपास ।
भोजन सकल पहुँचाय सब कहँ जाय जाय निवास ॥

उज्वालि लालन दीपिका निज नयन सब कहं देखि।
आयो महीपतिमनि निकट विनती करी सुख लेखि ॥८१०॥

(दोहा)

महाराज सबको भयो सरजू तीर सुपास।
नाथ पधारो सिविर कहँ कीजै रैन निवास ॥८११॥

(छंद गीतिका)

सुनि सचिव बचन अनंददायक सहित गुरु महिपाल।
करि भरथ भरतानुजहि आगे गयो सिविर विसाल॥
सब सैन्य डेरा परे सरजू तीर तीरहि भीर।
जुग योजनहिं लैां संधि नहिं कढ़ि जाय मारी तीर ॥८१२॥
यहि भाँति सुखमा निसि सिरानी रही बाकी जाम।
बाजी नृपति की दुंदुभी द्रुत कूच-सूचक आम॥
लागे बदन बंदी विबिध बिरुदावली नृपद्वार।
मन जानि आगम भानु को उठि बैठ भूभरतार ॥८१३॥
सब प्रातकृत्य निबाहि मज्जन कियो सज्जन संग।
लहि काल संध्योपासनादिक ठानि सुमिरन रंग॥
तिहि काल सचिव विदेह के कीन्हें सुवंदन आय।
करि वचन रचन विसेषि बिनती दियो नृपहि सुनाय ॥८१४॥
अवधेस हमहि निदेस अस मिथिलेस दीन बुलाय।
जब ते चलहिं कोसल नगर ते कोसलेस त्वराय॥
तब ते सुभोजन पान सामग्री दियो तुम जाय।
जो लगै खर्च बरात को सो लिह्यो सकल उठाय ॥८१५॥

सुनि सचिव वचन विचारि भूप विदेह को व्यवहार।
मिथिलेस केर निदेस जस तस हमहुँ को स्वीकार॥
अस कहि वशिष्ठ चढ़ाय स्यंदन चढ्यो स्यंदन आप।
बाजत भये तिहि समय बाजन विविध सुरन कलाप॥८१६॥
पूरब कियो जिहि भाँति बरनन तीनि रीति बरात।
गमनी सुमिथिला पंथ गहि करि धूरि धुंध अघात॥
मानहु मही निज कुँवरि ब्याह बिचारि अति सुखमानि।
मिसि रेनु के मिथिलेश को विधि को निमंत्रन जानि॥८१७॥

(छंद हरि गीतिका)

रघुवंसकुल की जब बरात गई सुगंडक तीर में।
करि पान सुधा समान मेटे प्यास निर्मल नीर में॥
आये वशिष्ठ समेत रघुकुलकेतु जब तिहि घास में।
तब विनय कीन विदेह सेवक राजमनि मुनि पास में॥८१८॥
मिथिलाधिपति रचवाय राख्यो आप उतरन मंदिरैं।
उतरी तहाँ चलि अवधपति जनु रच्यो निज कर इंदिरैं॥
सुनि भूप मुदित पधारि कीन निवास विमल अवास में॥
सैनिक सकल सरदार राजकुमार बसैं सुपास में॥८१६॥
जिहि वस्तु की रहि चाह जाको मुखन ते न बखानहीं।
दीन्हें बरातिन पूरि निकटहु दूरि सबन समानहीं॥
सब करहिं जनक बखान पंथ महान लखि सनमान को।
सबको भयो अस भान कीन पयान निजहि मकान को॥
संध्या उपासन कियो साँझहि गंडकी तट जायकै।

बैठो बहुरि अवधेस आलै सभा सुखद लगायकै ॥
पुनि कह्यो सचिव सुमंत काल्हि कहाँ अराम मुकाम है।
नृप कह्यो जहँ जहँ जनक सेवक कहहिं तहँ बिस्राम है॥८२०॥
सुनिकै सभासद अभिलषित निज निज अयन गमनन भये।
भूपति सभा बरखास करि किय सयन अति आनँदमये॥
बीती त्रियामा जाम त्रय बाकी रह्यो जब जाम है।
बाजे नगारे कूच के जनु जलद जागन काम है॥८२१॥

(छंद चौबोला)

उतै दूत जे गये अवधपुर लै विदेह की पाती।
जोरि पानि कीन्हें पदवंदन आय तीसरी राती॥
दूत बिलोकि विदेह विनोदित कहे कुसल सब आये।
कहहु कुसल कोसल-भुआल की कब ऐहैं सुख छाये॥८२२॥
दूतन कही खबरि तहँ की सब नृप रनिवास उराऊ।
प्रीति रीति पुनि लै बरात को बरन्यो चलनि त्वराऊ॥
पुहुमीपति यहि पुरहि पहुँचिहैं परसों सहित बराता।
कही प्रणाम आपको बहु विधि दशरथ चिरत्रिख्याता॥८२३॥
प्रथम बास सरजू तट हैहै दूसर गंडकि तीरा।
तृतीय बास इतते जुग जोजन परौं मिलन मति धीरा॥
आवन सुनत अयोध्याधिप की प्रेम मगन मिथिलेसू।
अगुवानी साजन के कारन सचिवन दियो निदेसू॥८२४॥
इतै बरात चली रघुकुल की रामदरस अभिलाषी।
लषन राम को लखब काल्हि हम चले परस्पर भाषी॥

मिथिलादेस प्रवेस कियो नृप सँग वरात लै भारी।
तयते हँसि हँसि हुलसि हुलसि जन देत माधुरी गारी॥
मंगल गान करत जुवती जुरि होहिं पंथ महँ ठाढ़ी।
सदल दीप धरि कलस सीस पर वर देखन रति वाढ़ी॥
अतिहि त्वरात प्रयात वरात गई जब कमला तीरा।
तहँते जनकनगर जुग जोजन जनक सचिव तहँ धीरा॥८२६॥
जोरि पानि बोल्यो सुमंत सों इत सब भाँति सुपासा।
अब मिथिलापुर है जुग जोजन करै वरात निवासा॥
जाय सुमंत कह्यो भूपति सों नृप कीन्ह्यो स्वीकारा।
कमला तीर परे सब डेरा वन रसाल मनहारा॥८२७॥
करि भोजन सुख सयन अवधनृप उठ्यो रहे दिन जामा।
सभा मध्य मंडित धरनीपति भयो सुपूरन कामा॥
सजन सैन्य हित दिय निदेस नृप गमन दुंदुभी वाजे।
सैनिक सकल बाजि गज स्यंदन अतिहि अनंदन साजे॥८२८॥

(दोहा)

मिथिलापुर हल्ला परयो ऐहै आजु वरात।
अगवानी हित जनक नृप साजी सैन विख्यात॥८२९॥

(छंद त्रिभंगी)

मिथिलेस मतंगा सजि सब अंगा परम उतंगा चलत भये।
निमिकुल सरदारा करि शृंगारा भये सवारा मोदमये॥
अति चंचल वाजी बनि बनि राजी तुरकी ताजी सोहि रहे।
राजस अति सादी उर अहलादी धृति मर्यादी वाग गहे॥८३०॥

पैदरन कतारा सुभग शृंगारा देव अकारा छवि छाये।
तनु वसन सुरंगा भरे उमंगा जुरि इकसंगा तहँ आये॥
मिथिलापुरवासी आनँदरासी सजि सजि खासी सिर पागै।
कंचुक तनु काँधे कम्मर बाँधे उर सुख धाँधे अनुरागै॥८३१॥
कोसल-महराजू सहित समाजू आवत आजू सुखसानी।
इतते सजि साजू निमिकुलराजू गमनत काजू अगवानी॥
तापर मिथिलेसा चढ्यो सुवेसा मनहुँ सुवेसा सोहि रह्यो।
लक्ष्मीनिधि प्यारो राजकुमारो तुरंग सवारो गैल गह्यो॥८३२॥
वर सतानंद मुनि चढ़ि स्यंदन पुनि चल्यो संग गुनि गाढ़ सुखै।
मुनि याज्ञवल्क्य वर धर्मधुरंधर औरहु तपधर मुदित सुखै॥
पुर ते छवि भारी कढ़ी सवारी भै घहरारी चाकन की।
बहु बजे सुहावन बाजन पावन निज धुनि छावत नाकन की॥८३३॥
दस सुतर सवारे जनक हकारे वचन उचारे तुम आवो।
मम अरज सुनावो नृप द्रुत आवो विमल विहावो सुख छावो॥
द्रुत धावन धाये नृपदल आये वचन सुनाये दशरथ को।
कहि जनक प्रणामा दरसन कामा चलियहि यामा गहि पथ को॥
ठाढ़े सुखमानी हित अगवानी आँखि लुभानी दरसन को।
लै विसद बराता आवहु ताता अब घन आता हरपन को॥
सुनि मैथिल वैना भरि उर चैना सजल सुनैना अवध-धनी।
कह वचन तुरंता सुनहु सुमंता नहिं विलवंता चलै अनी॥८३५॥

(दोहा)

करहु सैन्य को शीघ्र ही द्वुतिया चंद्र अकार।

हम अरु गुरु मधि में रहव अरु जुग राजकुमार ॥८३६॥
सासन पाय सुमंत तहं तैसहि सैन्य बनाय।
मिथिला ओरहि सीघ्र गति दियो बरात चलाय ॥८३७॥

(छंद चौबोला)

जोजन अर्ध गई जब सैना द्वितिया चंद्र अकारा।
देखा देखी उभय सैन्य की होत भई तिहि बारा॥
जैसो व्यूह बनाय अवधपति चले मिलन के काजा।
तैसो व्यूह बनाय चल्यो उतते मिथिला महाराजा ॥८३८॥
इतते महा महोदधि जावत उत रत्नाकर आयो।
मानहु मिलत उमड़ि सिंधु जुग कोलाहल छिति छायो॥
जबते भई सैन्य की देखादेखी दूरहि तेरे ।
तबते भये मंदगति दोउ दल इक एकन के हेरे ॥८३९॥
द्वितिया चंद सरिस दोऊ दल ताते प्रथम सिधारी।
मिले कोन सों कोन चारिहूं तब मंडल भो भारी॥
भूमंडल सम सजी सैन्य मिलि निमिकुल रघुकुलवारी।
इत कोसलपति मिथिलापति को को बड़ छोट उचारी ॥८४०॥
किये परस्पर अभिवंदन सब जथा जोग व्यवहारा।
मुदित बराती जथा घराती पूँछि कुसल बहु बारा॥
प्रतीहार कहि फरक फरक तहँ किये कछुक मैदाना।
इतते कोसलपाल गयो तहँ उत मिथिलेस महाना ॥८४१॥
गुरु वशिष्ठ अरु सतानंद मुनि भरत सत्रुहन दोऊ।
चढ़्यो तुरंत कुँअर लक्ष्मीनिधि आय गयो तहँ सोऊ॥

दसरथ जनक नयन जुरिगे जब दोउ अभिवंदन कीन्हे।
दोऊ पंकज पानि पसारि मिलाय लूटि सुख लीन्हे ॥८४२॥
कियो प्रणाम विदेह वशिष्ठहि पूछ्यो कुसल सुखारी।
सतानंद को वंदे दसरथ छ्वै पग पानि पसारी॥
भरत कुँअर रिपुसूदन संजुत जनकहि किए प्रणामा।
लक्ष्मीनिधि कोसलपति वंदे लै अपने मुख नामा ॥८४३॥

(चौपाई)

पूछि परसपर सब कुसलाई। उभय भूप मुद लये महाई॥
कह्यो विदेह बहुरि कर जोरे। तुम्हरी कुसल कुसल अब मोरे॥
तुम सम भूप न होवनहारे। राम लषन अस जासु कुमारे॥
सुनि मिथिलापति-बचन सुखारे। कह दसरथ दृग बहत पनारे॥
जनकराज तुम हौ सब लायक। कस न कहौ अस बचन सुहायक॥
कहँ मिथिलेस बसे दोउ भाई। कौन हेत ल्याए न लिवाई॥
अस कहि दोउ नृप स्यंदन फेरे। बैरख फिरे दोउ दल केरे॥
नगर निकट ह्वै चली बराता। लखन हेतु पुरबासिन ब्राता॥
जनक नगर महँ फैली बाता। जनवासे कहँ जाति बराता॥
गए निवासहि लषन नहाई। प्रभु को दीन्हों खबरि जनाई॥
अस सुनि गे मुनि पहँ दोउ भाई। कहे बचन मृदु बिनय सुनाई॥
सुनियत नाथ पिता पगु धारे। दर्सन लोभी नयन हमारे॥

(दोहा)

कहे बचन कौसिक बिहँसि, चलिहैं हमहुँ बिसेषि।
अर्जुन कोउ तुव पितु सरिस, लिख्यो लोक त्रय लेषि ॥८५०॥

(चौपाई)

करत बराती हास विलासा। आये सकल सुखद जनवासा॥
कनककलस कोपर बड़ थारी। कूंड कुंभ मंजूषा झारी॥
भरि भरि भोजन पान प्रकारा। सुधा सरिस पकवान अपारा॥
जथा जोग जस जौन बराती। अति उत्तम नृप कहँ सब जाती॥
सतानंद अरु सचिव लिवाई। कोसलपालहि नजर कराई॥
तिन आगे चिउरा दधि राखे। बोले वचन जनक जस भाखे॥
जोरि पानि जुग नावत सीसा। जनक कह्यो सुनु अवध-अधीसा॥
दधि चिउरा उपहार हमारा। लेहु कृपा करि अवध-भुआरा॥

(दोहा)

भोजन काल विचारिकै उठन चह्यौ महिपाल।
हल्ला परयो बरात में यकवारहि तिहि काल॥८५॥
रामलषन लै संग में दसरथ-दरसन हेत।
आवत विस्वामित्र अब तुरत गाधिकुलकेत॥ ८६॥

(चौपाई)

भई भीर दसरथ के द्वारे। निकसत जन करि जोर निकारे॥
भरत सत्रुहन अति अतुराई। आय गए सुनि राम अवाई॥
देखहिं रघुकुल राजकुमारा। राम दरस लालसा अपारा॥
गुरु वशिष्ठ अरु कौसलपाला। सहित निषाद भरत रिपुसाला॥
उतते आये गाधि-कुमारे। सहित जुगल दसरथ-दुलारे॥
इतते करि वशिष्ठ मुनि आगे। राजसमाज गई अनुरागे॥
विश्वामित्र वशिष्ठहि देखी। कियो प्रणाम महामुद लेखी॥

तिहि अवसर आये दोउ भ्राता। गहे दौरि गुरुपद-जलजाता॥
निरखि गाधिसुत कोशलराऊ। गिरि गहि रह्यो गाढ़ जुग पाऊ।
राम लषन पुनि दोउ सुखसाने। पिता-चरन पंकज लपटाने॥
लिय उर ललकि लगाय भुआला। तुलै न ब्रह्म मोद तिहि काला।
भरत शत्रुहन पुनि दोउ भाई। परे चरन रघुपति के जाई॥

(दोहा)

यहि विधि सबसों मिलि तहाँ पितु मुनि-बंधु-समेत॥
जाय वितान तरे मुदित बैठे कृपानिकेत॥ ८६३॥
उठ्यो भूप भो जन करन संजुत चारि कुमार।
चले राजबंशी सकल संग करन ज्यवनार॥८६४॥

(छंद चौबोला)

यहि विधि भोजन करत सुतन जुत बरत बचन सुखसाने॥
करि आचमन उठे अवनीपति आनँद माहिं अघाने॥
धोय चरन कर पहिरि बसन कछु सयनसदन नृप गयऊ।
इतै राम लै बंधु सखा सब बैठि प्रमोदित भयऊ॥८६५॥
पूछन लागे कथा सखा सब भरतलाल करि आगे।
कहन लगे प्रभु चरित कियो जस सहज लाज रसपागे
हँसि बोल्यो कोउ राम बिवाहहु काहे जनक-कुमारी।
जहँ चाहहु तहँ तुम पयान ते लेहु प्रगट करि नारी॥८६६॥
यहि विधि हास बिलास करत प्रभु सखन-संग जुत भाई।
धावन चलि तब खबरि जनायो मिथिलाराज-अवाई॥
परिचर बोलि कह्यो कोशलपति रामहिं ल्याउ लिवाई।

आवत सभा हेतु मिथिलापति आवैं चारिउ भाई ॥८६७॥
जुगल सिंहासन मनिन जटित तहँ सभा मध्य धरवाए।
तैसहि जुगल सिंहासन सन्मुख धरवाए छबि छाए ॥
तिनते लघु पुनि पंच सिंहासन सन्मुख सुभग सुहाए।
निमिबंसिन रघुबंसिन आसन जथा जोग्य लगवाए ॥८६८॥
सादर लै सुमंत बैठावत जथा राज-मरजादा।
सचिव मुसाहिब नृप सरदारन ददत भूप धनिवादा ॥
जुरं सभाजित सब रघुकुल के दशरथ के दरबारा।
राज बिभूति बिराजि रही वर राजसमाज अपारा ॥८६९॥
तिहि अवसर आये रघुनंदन सँग सुंदर त्रय भाई।
माथे मुकुट मनिन के गाथे भाथे कंध सुहाई ॥
जगमगात जामा जरकस को कसि कम्मर रतनाली।
डारे ढालन में करवालन ढालन पीठि बिसाली ॥८७०॥
आये सभा-मध्य रघुनायक ठाढ़ी भई समाजा।
किये प्रणाम पिता के पद गहि आशिष दीन्यो राजा ॥
बैठे कनकासन महँ सन्मुख सभा प्रभा महँ पूरी।
धावन धाय आय तिहि अवसर कह्यो जनक नहिं दूरी॥८७१॥
सुनि नकीब को शोर जोर तहँ अवधनाथ सुखमानी।
करि चारिउ कुँवरन को आगे चल्यो लेन अगवानी ॥
उत लक्ष्मीनिधि को आगे करि निमिकुल सहित समाजा।
मिलन हेत दशरथ के आयो वर विदेह महराजा ॥ ८७२ ॥
पंच कुमार चले आगे कछु पाछे भूपति दोऊ ॥

सो छवि देखि मगन आनँद महँ दोउ कुल के सब कोऊ।
उभय उच्च सिंहासन में दोउ बैठे भूप समाना।
लघु सिंहासन पंच बिराजे पाँचो कुँवर सुजाना ॥८७३॥
कोशलपति निज पानि पान दिय सहित सनेह विदेहैं।
पुनि निज हाथन अतर लगायो मिथिलापति के देहैं॥
प्रतीहार आयो तिहि अवसर मुख जय जीव सुनाई।
विश्वामित्र वशिष्ठ मुनिन की दियो सुनाय अवाई ॥८७४॥
मुनि आगमन सुनत दोउ भूपति चले लेन अगवाई।
करि आगे पाँचो कुमार कहँ द्वार देस लौं जाई॥

लग्न विचार।

लै दोउ मुनिनायक नरनायक सिंहासन बैठारे।
सविधि दुहुँन को पूजि परसि पद कह धनि भाग्य हमारे॥
निमिकुल रघुकुल की समाज लखि दोउ मुनि बैन उचारे।
धनि कोशलपति धनि मिथिलापति को नृप सरिस तुम्हारे॥
कोटिन वर्ष व्यतीत लहे तनु कबहुँ न अस मुद लेखे।
जथा दराज समाज आज हम सम समधी दृग देखे ॥८७६॥
कहहु विवाह उछाह लखब कब अब सब भव अभिलाषी।
दोउ नृप कह जब लग्न सोधिय तब ह्वैहै शिव साषी॥
का पूछहु हमसे दोउ मुनिवर यह सब हाथ तुम्हारे।
निमिकुल रघुकुल तुव अधीन अब नहिं सिर भार हमारे॥८७७॥
कह्यो वशिष्ठ कालिह कोशलपति जनकनिवास सिधैहैं।

तहँ हम कौशिक शतानंद मिलि लगन विचारि धतैंहैं ॥
यही कियो सिद्धांत उभय नृप सुखी भए सब लोगू।
माँगि विदेह विदा दशरथ सों चल्यो भवन बिन सोगू ॥८७८॥

(दोहा)

संध्या करि सिगरे तहाँ किये बिआरी जाय।
रैन सयन कीन्हें सुखी पितु सुत चारिहु भाय॥ ८७९ ॥

(छंद चौबोला)

गए विदेह गेह दशरथ के सने सनेह सुखारी।
कियो सैन भरि चैन रैन महँ संध्यादिक निरधारी ॥
ब्रह्म मुहूरत उठ्यो महीपति ब्रह्म निरूपन कीन्ह्यो।
प्रातकृत्य करि कीन्ह्यो मज्जन सज्जन सँग मन दीन्ह्यो ॥८८०॥
शतानंद अरु सचिव सुदावन धावत पठै बुलायो।
पुनि वशिष्ठ अरु विश्वामित्र बुलावन दूत पठायो ॥
शतानंद सों कह्यो जनक तब आसुहि दूत पठाओ।
साँकाशी नगरी को वासी कुशध्वज को बुलवाओ॥८८१॥
सुनि विदेह के वचन पुरोहित चारन चारि बुलायो।
वेगवंत दै चारि तुरंगम सासन सब्रादि सुनायो ॥
तरल तुरंग दूत चढ़ि धाए गए पुरी संकासी।
करि वंदन कुशकेतु चरन गहि कहे वचन सुखरासी ॥८८२॥
सुनि मिथिलेश-निदेस सीस धरि लै सिगरो रनिवासा।
सैन साजि चतुरंग चल्यो चढ़ि स्यंदन परम प्रकासा ॥
शीरध्वज महराज सभा महँ वीर कुशध्वज आयो।

शतानंद पदवंदन कीन्ह्यो जनक चरन सिर नायो ॥ ८८३ ॥
उठि अनुजहि मिलि दै आशिष बहु निज आसन गहि पानी।
शीरध्वज महराज कुशध्वज वैठायो मुद मानी।
कुशल प्रश्न पुनि पूछि नेह भरि पाछिल कथा वखानी।
आई अवध वरात जौन विधि लियो जथा अगवानी॥८८४॥
रनिवासहि रनिवास पठायो मुदित भए दोउ भाई।
तिहि अवसर इक प्रतीहार कह कौशिक केरि अवाई॥
मिथिलाधिप दोउ वंधु चले द्रुत शतानंद करि आगे।
कौशिक पद पंकज गहि प्रनमें कर पंकज अनुरागे॥८८५॥
शतानंद पुनि गाधिनंद कहँ वंदे वृद्ध विचारी।
तिहि औसर वशिष्ठ मुनि आये जनकनिवास सुखारी॥
सब मिलि वंदि वशिष्ठ ब्रह्मसुत ल्याए सभा मँझारी।
कनकासन आसीन किए नृप जुगल महा तपधारी॥८८६॥
सोधि शुद्ध शुभलग्न व्याह की विश्वामित्र वशिष्ठै।
करिकै संमत शतानंद को लिखहु होइ जो इष्टै॥
इतै चक्रवर्ती प्रभात उठि करि नारायण-ध्याना।
प्रातकृत्य करि मज्जन कीन्ह्यों दै सज्जन द्विज दाना॥८८७॥
आयो सचिव सुदावन द्वारे द्वारप खबरि जनायो।
जानि विदेह मुख्य मंत्री नृप आसुहि पास वुलायो॥
अभिवादन करिकै अमात्य वर कह्यो वचन कर जोरी।
नाथ विदेह विनय कीन्ह्यो अस दरसन की रुचि मोरी॥८८८॥
कोशलनाथ हुलसि हँसि वोल्यो देखन निमिकुलराजै।

हमरेहु अति बाढ़ी अभिलाषा काज अवसि उत आजे॥
चढ़ि स्यंदन गमन्यो दशस्यंदन अजनंदन महराजा।
बाजे बाजन विविध सुहावन लस्यों निसान दराजा॥८८९॥
सुनत विदेह अवधपति-आगम उठ्यो समाज समेतू॥
विश्वामित्र वशिष्ठ आदि लै गमन्यो निमिकुल-केतू।
द्वार देस ते लियो भूप कहँ कियो प्रणाम विदेहू।
कर गहि चल्यो लिवाय सभागृह सादर सन्यो सनेहू॥८९०॥
दै आसन दहिने सिंहासन पूछि सकुल कुसलाई।
बैठ्यो लहि निदेस निज आसन मिथिलापति मुद पाई॥
अतर पान मँगवाय सचिव कर बीरो खोलि खवायो।
लै सुगंध सब अंग लगायो किय सत्कार सुहायो॥८९१॥
तिहि अवसर लक्ष्मीनिधि आयो सिर नायो नृप काहीं।
लियो भूप बैठाय प्रीति भरि अपने अंकहि माहीं॥
सानंदन कुशध्वज किय वंदन मिले अवधपति ताहीं।
जनक-अनुज सत्कार कियो पुनि सब रघुवंसिन काहीं॥८९२॥
अवधनाथ बोल्यो बिदेह सों जानि समय सुखदाई।
बसुधा महँ है विदित पुरोधा रघुकुल को मुनिराई॥
नाम वशिष्ठ विरंचि-पुत्र यह त्रयकालज्ञ सुजाना।
परमपूज्य इक्ष्वाकुवंस को इनते गुरु नहिं आना॥८९३॥
विश्वामित्र विनोदित भाष्यो साखोच्चार समै है।
कहैं भानुकुल को वशिष्ठ मुनि दूजो कौन बतैहै॥
विश्वामित्र सहित ऋषि सम्मत गुनि करतार-कुमारा।

कह्यो जनक सों सुनौ भूप अब भानुबंस-बिस्तारा ॥८६४॥
सुनि मिथिलेश वशिष्ठ वचन बर पुलकित दृग जल छायो।
जोरि पानि पंकज वशिष्ठ के पद पंकज सिर नायो ॥
परंपरा जो अहै बंस की निमिकुल की मुनिराई।
शतानंद को चहिय सुनावन ऐसो अवसर पाई ॥ ८६५ ॥
सो लै गनकन लग्न सुआवत कैसे ताहि बुलाऊं।
ताते राजसमाज मध्य मुनि मैंहीं निज मुख गाऊं ॥
सुनि वशिष्ठ तहँ लगे सराहन निमिकुल की बड़ि महिमा।
सुनु महीप मिथिलेश तोहिं सम को महीप है महि मा॥८६६॥

दोहा।

यतनो कहत महीप के, तिहि अवसर सुख छाय।
शतानंद लै गनकगन, कह्यौ जनक सों आय ॥८६७॥

(छंद चौबोला)

होय विवाह उत्तरा फाल्गुनि यह संमत सब केरो।
सुनत अवधपति अरु मिथिलापति मान्यो मोद घनेरो ॥
कियो विदेह बिनय दशरथ सों पितर श्राद्ध करि लीजै।
पुनि गोदान कराय कुमारन ब्याह बिधान करीजै ॥८६८॥
अति हर्षित इक्ष्वाकुबंसमनि सुनि विदेह की बानी।
कह्यो जनक सों वचन पुलकि तनु देहु बिदा बिज्ञानी ॥
देन लग्यो जब बिदा जनक नृप दशरथ के सुखछाई।
अवसर जानि कह्यौ कौशिक तब बचन हिये हरषाई ॥८६९॥
निमिकुल रघुकुल दोउ अति पावन महिमा कही न जाई

नहि समान दोउ कुल के दूसर परै प्रत्यच्छ दिखाई॥
यह समान संबंध धर्मजुत दोउ कुल दोउ अनुरूपा।
राम लषन सिय और उर्मिला ब्याह उचित अति भूपा॥६००॥
ताते मोर विचार होत अस कुशध्वज-जुगल-कुमारी।
होय विवाह भरत रिपुहन को अनुमति यही हमारी॥
राम-जानकी लषन-उर्मिला जिहि दिन होइ उछाहै।
ता दिन दोउ कुशकेतु-कुमारी भरत शत्रुहन ब्याहै॥६०१॥
दूलह चारि चारि दुलहिन, नृप! निरखि जनकपुरवासी।
रघुकुल निमिकुल धन्य होइगो हमहुँ लहब सुखरासी॥
सुनत जनक पुलकित तनु हर्षित भरि आनँद जल नयना।
नाय चरन सिर जोरि कंज-कर कह कौशिक सों बयना॥६०२॥

दोहा।

होय एकही संग मुनि, चारि कुमारन ब्याह।
सोधि साधि सुघरी सफल, लखो अथाह उछाह॥६०३॥

(छंद चौबोला)

मिथिलापति के कहत वचन अस सभा-मध्य इक बारा।
परिजन पुरजन गुरुजन सज्जन कीन्हें जयजयकारा॥
तिहि अवसर विरंचि पठवायो नारद मुनि तहँ आये।
उठी समाज देवऋषि देखत जुगल भूप सुख पाये॥६०४॥
दशरथ जनक परे चरनन में नारद आसिष दीन्हें।
षोडस विधि कीन्हें नृप पूजन अतिथि अनूपम चीन्हें॥
विश्वामित्र वशिष्ठ मिले दोउ मुनिजन कीन्ह प्रणामा।

सिंहासन बैठाय देवऋषि दोउ बोले मतिधामा ॥६०५॥
तुव दरसन ते आजु भए मुनि सुफल सुनयन हमारे।
तब नारद मुनि मोद भरे मन ऐसे बचन उचारे॥
बिधि-निदेस तुम सों सब कहि अब राम दरस हित जैहैं।
चारिहु बंधुन को दरसन करि महामोद नृप पैहैं॥६०६॥
अस कहि हरषि बरषि नयनन जल चल्यो देवऋषि आसू।
जहाँ सहित बंधुन रघुनंदन वर बरात जनवासू॥
यहि विधि तिहि समाज महँ आनँद छाय रह्यो मिति नाहीं।
हुलसि अवधपति जोरि कंजकर कह्यो जनक नृप काहीं॥
राज-समाज रावरे कर ते लहे परम सत्कारा।
देहु रजाय जाहिं जनवासे बरनत सुजस तुम्हारा॥
विश्वामित्र वशिष्ठ कह्यो तब तुम अस तुमहिं विदेहू।
हम सब को अपने बस कीन्ह्यो पास पसारि सनेहू॥६०८॥
कोशलनाथ संग जनवासे हमहूँ करब पयाना।
करवैहैं चारिहु कुमारन विविध सविधि गोदाना॥
मुनिवर-बचन बचन दशरथ के सुनि मिथिलेश सुजाना।
भन्यो प्रेमवस कहौं कौन बिधि इत ते राउर जाना॥६०९॥
जस अभिलषित होय कीजै तस कारज अवसि विचारे।
उठ्यो अवधपति लै समाज सब उभय मुनीस सिधारे॥

नांदी-मुख श्राद्ध

जनवासे आये कोशलपति बैठे मंदिर माहीं।

विश्वामित्र वशिष्ठ बोलि तहँ विनय करी तिन पाहीं ॥
गुरु वशिष्ठ अरु गाधितनय तब बिधिवत श्राद्ध कराए।
भोजन समय जानि कोशलपति चारिउ कुँवर बुलाए ॥
चारिहु कुँवर सहित भोजन करि बैठे नृप पर्यंका।
राम लषन रिपुसूदन भरतहु को बैठायो निज अंका ॥६११॥
इतनेही में प्रतीहार तहँ आसुही खबरि जनायो।
मिथिलाधिप व्यवहार पठायो सुमति सचिव लै आयो ॥
उठ्यो हरषि देखन कोशलपति सहित कुमार सिधारा।
एक एक वस्तुन के लागे पूरन प्रथित पहारा ॥६१२॥
ऋद्धि सिद्धि निधि करि आकरषन जगदीश्वरी सुसीता।
पठै दियो सिगरे जनवासे पूरन करन पुनीता ॥
सयन काल गुनि भूप कुमारन निज निज भवन पठाई।
महामोद महँ मग्न महीपति सयन किये गृह जाई ॥६१३॥

(दोहा)

दशरथ इतै प्रभात को नित्यनेम निरवाहि।
बैठ्यो सभा सुरेस सम बोलयो कुलगुरु काहि ॥६१४॥
मार्कंडेयादिक मुनिन लियो तुरंत बुलाइ।
विश्वामित्रहि बोलि पुनि बोल्यो कोशलराइ ॥ ६१५॥

(चौपाई)

तैल चढ़ावन आदिक चारा। करवाई जस होइ बिचारा ॥
पुनि करवाइ मुनी गोदाना। मंगल मंडित वेद बिधाना ॥
निनृप वचन परम अह्लादी। विश्वामित्र वशिष्ठहु आदी ॥

लगे करावन पावन चारा। बोलि चारिहु राजकुमारा॥
नवल पीतपट भूषन नाना। विप्रकुमारी करि परिधाना॥
लै हरिद्र दूर्बा तिहि बेला। प्रभु कहँ लगीं चढ़ावन तेला॥

(छंद चौबोला)

सिर कंधन जानुनी पगन महँ फेरहिं पानि कुमारी।
मनहुँ पूजि ससि नीलरत्नगिरि उतरहिं कुमुद सुखारी॥
विश्वामित्र वशिष्ठ राम को दिए तेल चढ़वाई।
भए अनंदित सकल बराती बहु धन दियो लुटाई॥६१६॥
चारि कुमारन को भूपति पुनि अपने निकट बुलाए।
गुरु वशिष्ठ गोदान करन को सविधि अरंभ कराए॥
धेनु-दान करवाय कुमारन इक सिंहासन माहीं।
बैठ्यो लै पुत्रन कोशलपति बरनि जाय सुख नाहीं॥६२०॥
तिहि अवसर धावन द्वै आये कहैं जोरि जुग पानी।
केकय महाराज को नंदन नाम युधाजित जानी॥
आवत काशमीर-नृपनंदन आगे हमहिं पठाए।
खबरि देन हित रामराजमनि हम आये अतुराए॥६२१॥
सुनि आगमन युधाजित को तब कोशलपति हरषाए।
तिहि अगवानी करन भरत रिपुसूदन को पठवाए॥
कछुक दूर ते भरत जाय निज मातुल को लै आये।
जोहि युधाजित अवधनाथ को बार बार सिर नाये॥६२२॥
उठ्यो भूप सादर ताको मिलि दै आसन अनुरूपा।
कह्यो युधाजित सों कुसली हैं कुलजुत केकयभूपा॥

राम लषन अरु भरत शत्रुहन मातुल किए प्रनामा।
मिले युधाजित दै आशिष बहु सिद्धि होय मनकामा ॥६२३॥
दियो युधाजित को डेरा नृप भरत महल महँ जाई।
सकल भाँति सोपति भूपति किय करि सत्कार बड़ाई ॥
साँझ समय पुनि सहित कुमारन नृप बैठ्यो दरबारा।
मंत्री सचिव सुभट सरदारहु कवि द्विजगन पगु धारा ॥६२४॥
गौतमतनय कह्यो भूपति सों विनती कियो विदेहू।
बीते चारि दंड जामिनि के ब्याह लग्न गुनि लेहू ॥
गोधूली वेला महँ ह्वैहै काल्हि द्वार को चारा।
महाराज लै चारि कुमारन करैं पवित्र अगारा ॥६२५॥
सुनत चक्रवर्ती अवनीपति मन अभिलषित सुवानी।
गद्गद कंठ सुमिरि वैकुंठपति कह्यो जोरि जुग पानी ॥
नहछू काल्हि कराय महामुनि सुंदर साजि बराता।
धेनुधूलि बेला महँ आउब कहहु जाय मुनि बाता ॥६२६॥
दोउ ब्रह्मर्षि वशिष्ठ गाधिसुत सहित जनक पहँ जाहू।
वेद-विधान साज सब साजहु अस भाषैं मुनिनाहू ॥
मुनिवर जाय जनक मंदिर महँ पाय परम सत्कारा।
साजे सकल ब्याह-सामग्री अस विधि वेद उचारा ॥६२७॥

विवाहोत्सव

फैलि गई यह बात चहूँकित रनिवासे जनवासे।
ह्वैहै काल्हि विवाह राम को सुनि सब भए हुलासे ॥

नहिं जनवासे नहिं रनिवासे नहिं पुर के कोउ सोए।
करत तयारी महासुखारी जागतही रवि जोए ॥१२८॥
बात कहत इव राति सिरानी लाग्यो होन प्रभाता।
द्वारदेस महँ गावन लागे बंदी बिरुद विख्याता ॥
भूपति उठि उछाहवस आतुर प्रातकृत्य सब करिकै।
दै दै दान बुलाय द्विजन को सुतन बोलि सुख भरिकै ॥१२९॥
बुलवायो वशिष्ठ कौशिक को सचिव सुमंत तुरंता।
दियो निदेस बरात सजावन सुमिरि चरन श्रीकंता ॥
धावन धाय पुकारन लागे जस सुमंत कहि दीने।
आवन लगे बराती सजि सजि शक्र सरिस सुखभीने ॥१३०॥

(चौपाई)

समय पाय मिथिलापुर केरी। आईं नाउनि सजी घनेरी ॥
अवध भूप पहँ खबरि जनाई। नहछू करन हेतु हम आई ॥
सज्जन वचन सुनत तिहि काला। मज्जन कीन चारि रघुलाला॥
जुगल पीतपट अंबर धारे। बैठे कनक पटन छबिवारे ॥
नखकरतनि नख परस सुहाये। मनु ढिग विधुन विधुन्तुद आये॥
कनक थार भरि नीर उरायनि। लागी देन महाउर नायनि ॥
देति महाउर चित्र बिचित्रा। जुग पद पंकज विश्व पवित्रा ॥
गुरु वशिष्ठ नहछू कर चारा। करवायो जस वंस प्रचारा ॥
पुनि बोल्यो दशरथ नृपराई। ब्याह बसन पहिरावहु जाई ॥
यहि बिधि करि नहछू कर चारा। सजन भवन गे राजकुमारा ॥

(छंद गीतिका)

उत भूप पहिरयो पीतपट दीन्ह्यों मुकुट पुखराज को।
पुखराज के उर हार जामा जरकसी सुखसाज को ॥
देखन हितै चारिहु सुदूलह इंद्र सम आवत भयो।
दूलह सजे देखत दृगन सुख दून नृप पावत भयो ॥६३६॥
तब कह्यो बचन वशिष्ठ यहि छन भूप परछन कीजिए।
दूलह चढ़ाय तुरंग महँ पुनि गमन सासन दीजिए ॥
तब तुरत तरल तुरंग चारि सवाँरि साज मनीन की।
अनुपम सुछवि मुहरो लगाम ललाम दुमची जीन की॥६३७॥
साजे तुरंग निहारि चारि वशिष्ठ दूलह चारिहूँ।
करवाय तिनहिं सवार छवि लखि मुनि तनहु मन वारिहूँ॥
लै पानि दधि अच्छत सकुन दीन्ह्यो त्रिकुटि टिकुली भली।
मानहु मयंक निसंक कीन्ह्यों अंक निज सुत बुध बली॥६३८॥
पुनि दियो दधि अच्छतन बिंदु विसाल भाल भुआल है।
लाग्यो उतारन आरती तिहि काल होत निहाल है ॥
जिहि नाम शत्रुंजय महासिंधुर नरेश मँगाय कै।
तापर अरोहन कियो आसुहि अम्बु अंबक छाय कै॥६३९॥

(दोहा)

होत सवार भुआल के, परयो निसानन घाव।
गुरु कैाशिक को उरगल गज, लिय चढ़ाय तहँ राव ॥६४०॥

(छंद चैाबोला)

फिरयो जनकपुर के दिसि तुंग ब्योम फहरातो।

बाजन बाजत बिबिध भाँति के चली हुचाय बराता ॥
सोहत तारा से सुकुमारा चहुँकित राजकुमारा।
चारिहु बंधु मध्य पूरन बिधु सजे सकल शृंगारा ॥६४१॥
फहरि रहे अति लंब पताके सूर्यमुखी चहुँ ओरा।
मनु सरितासर बिमल बिराजित सहित बिहँग तिहि ठौरा॥
उड़ति धूरि मनु कुसुम धूरि बहु सुरभि चहूँकित छाई।
आयो सैन्य साजि जनु ऋतुपति दशरथ नाम धराई ॥६४२॥
चारिहु बंधु तुरंगन सोहत अंग अनंग लजावन।
यक जोरी मूरति मर्कत सी जुगल पदिक छबि छावन ॥
जात नचावत कछुक चलावत पुनि झमकावत बाजी।
बाहन-जुत शिवसुवन लजावत भावत सखन समाजी॥६४३॥
राम बंधु जुग बीच बिराजित चहुँकित सखा सुहाए।
तिन पाछे शत्रुंजय गज पर अवधनाथ अति भाए ॥
चढ़े मतंग महीप उभय दिसि गुरु अरु कौशिक राजैं।
जनु ऐरावत चढ़यो पुरंदर शुक्र बृहस्पति भ्राजैं ॥६४४॥
जस जस झमकत नचत रचत गति राम बाजि अभिरामा॥
तस तस दिल डरपत दशरथ को छूटै न पग कहुँ ठांमा॥
अहैं बरोबर बयस सखा सब लहि समान सन्माना।
भूषन बसन समान सुहावन को समान तिन आना ॥६४५॥
बृद्ध बृद्ध रघुबंसी कुल के पीछे सिखवत जाहीं।
करहु न चंचलता बहु लालन अवध नगर यह नाहीं ॥
बृद्धन बचन सुनत सकुचत अति दूलह भूप-दुलारे।

मंदहि मंद चलावत बाजिन देते सबा इलारे ॥१३६॥
खबर राजमंदिर महँ पहुँचो आवत चली बराता।
कह्यो विदेह बोलि लक्ष्मीनिधि जाहु लेन तुम ताता॥
जनककुमार सुनत चढ़ि बाजी चल्यो लेन अगवानी।
धरे पुरट घट सिर सधवा तिय चलीं सहस छविखानी॥

(दोहा)

अगवानी आई निकट, रुकिगै सकल बरात।
लक्ष्मीनिधि बंदन कियो नृप पूँछी कुसलात॥१३७॥
सुत विदेह को नेह बस अवधनाथ हरषाय।
पानि पकरि निज नाग पै लीन्ह्यो चरक चढ़ाय॥१४१॥
अगवानी को चार करि गमनी चारु बरात।
राजकुँवर दुहुँ ओर के बाजि नचावत जात॥१५०॥

(छंद गीतिका)

रघुनाथ रूप निहारि तहँ त्रिपुरारि कहत बिचारिकै।
द्विविहौ दिसै दूलह दृगनि नहि पाँच नयन उघारिकै॥
अति अंग कोमल कठिन दृग कहुँ जाय जो ढिग गरमहू।
धरिहौं कहाँ वह अजस मिटिहै जन्म जन्म न सरमहू॥१५१॥
विधि जानि शिव अनुमान बिहँसे आठ अपने नयन सों।
अभिराम राम स्वरूप पेखत नहीं तृपा दृग चैन सों॥
षटमुख कह्यो तब हरषि विधि सों आज हम तुमसों बड़े।
पितु-पूत मिलि डेवढ़ द्विगुन सुख लहे नयनन को खड़े॥१५२॥
यहि विधि बिनोदित वचन मंजुल सुर परस्पर भाखहीं।

सबते अधिक सुख शक्र तिहिते दून शेषहि राखहीं ॥
गमनत बरात सुहात यहि विधि निकट सहरपनाह के।
आई जबै पुरलोग सब देखत भरे सु उमाह के ॥ ६५३॥
घर घर बजत बाजन विविध मिथिलापुरी ध्वनिमय भई।
देते बरातिन नारि नर करि युक्ति गारी रसमई ॥
यहि भाँति देखत नगर हास विलास बहु विधि करतई ॥
मिथिलेश-मंदिर जाय द्वार बरात सब ठाढ़ी भई ॥६५४॥

(दोहा)

जनक-महल के द्वार को चौक महा बिस्तार।
भरत भीर जस जस मनो तस तस बढ़त अपार ॥६५५॥

(चौपाई)

जनक-राजमहिषी छबिखानी। साजि सुआसिनि अति हरषानी॥
रचि आरती कनक मनि थारा। पठई जहाँ द्वार को चारा ॥
उज्ज्वालित आरती अपारा। लीन्हे पानि पुरट के थारा॥
खड़ीं सुआसिनि किहे कतारा। कनक कुंभ सिर सजत अपारा॥
परत पाँवड़े पाँयन मंदा। करि आगे दूलह सानंदा॥
राम भरत लक्ष्मण रिपुशाला। तिन पाछे दशरथ महिपाला॥
चलयो द्वार को चार करावन। जनु विधि लोकपाल-जुत पावन॥
यहि विधि अंतहपुर के द्वारे। लै दूलह नरनाथ पधारे॥
शतानंद तहँ अवसर जानी। बुलवायो जनकहि मुद मानी॥
उत आयो मिथिला को राजा। इत सुत-जुत कोशल-महराजा॥

मिले बरोबरि भूपति दोऊ। जयजयकार किये सब कोऊ॥
तहँ वशिष्ठ दूलह यक ओरे। बैठाये आसन इक ठौरे॥

(दोहा)

शीरध्वज निमिकुलकमल, कुशध्वज ताको भ्रात।
भवन ओर बैठत भये, इक आसन अवदात॥१६२॥

(चौपाई)

लगीं गवाच्छन में सुखसानी। दूलह देखि सुनैना रानी॥
सिद्धि नाम लक्ष्मीनिधि-रमनी। जनक-पतोहु छमा छबि छमनी॥
मंजुल बाजत बंजन अपारा। गाय रहीं सुर नर-मुनि-दारा॥
राग्यो होन द्वार कर चारा। कियो वेद-विधि मुनिन उचारा॥
पूजन भयो जौन तिहि देशू। लिय प्रत्यच्छ ह्वै गौरि गणेशू॥
तिहि अवसर लक्ष्मीनिधि आयो। सारा ज़ोरी चार करायो॥
लक्ष्मीनिधि पुनि पानि पसारी। मिल्यो मुदित तहँ दूलह चारी॥
यहि विधि भयो द्वार कर चारा। भरयो भुवन आनंद अपारा॥
शतानंद तब बचन उचारा। सुनु वशिष्ठ गुरु गाधिकुमारा॥
आयो अब लग्नहु कर काला। मंडप तर बर चलहिं उताला॥

(दोहा)

तहँ वशिष्ठ बोल्यो हरषि सुनहु राज सिरताज।
दूलह सहित पधारिये, मंडप तर सुख काज॥१६८॥
शतानंद चितौनी करत, लगन गई अब आय।
ब्याह चार के हेतु अब, चलहिं राम-भ्रात भाय॥१६९॥

(चौपाई)

सुनि दशरथ वशिष्ठ की बानी। सुमिरि गनेस महेस भवानी ॥
शतानंद गुरु गाधिकुमारा। करि आगे मुनि और उदारा ॥
पुनि आगे करि दूलह चारी। अंतहपुर कहँ चल्यो सुखारी ॥
गये खास रनिवास दुआरा। जहँ ते नहिं पुनि पुरुष प्रचारा॥
गे ड्योढ़ी अंतहपुर केरी। सजीं नारि तहँ खड़ी घनेरी ॥
तहँ रनिवास पौरि अधिकारी। जोरि पानि जयजीव उचारी॥
करत प्रवेस नेग सो माँग्यो। दिय मनिमाल राव अनुराग्यो॥
आये राम जये रनिवासा। अंतहपुर महँ भयो हुलासा ॥
धाई दूलह देखन नारी। देखि देखि जातीं बलिहारी ॥
राउ मुनिन दूलह-जुन भाये। मनिमंडित मंडप तर आये ॥
कनक खंभ कलसा बिलसाहीं। मनहुँ भानु सितभानु सुहाहीं॥
कनक वेदिका विमल बिराजै। कनकाचल कंदर लखि लाजै ॥
पुरट पालिका अगनित भारी। लसै जवाँकुर की हरियारी ॥
लसत अमोले कनक करोले। भरे सुरभि जल धरे अतोले ॥
कनक थार कोपर रतनाली। धूप दीप भोजन मनिमाली ॥
बिछे पवित्र दर्भ महि माहीं। तहँ रत्नासन चारि सुहाहीं॥

(दोहा)

दिपति दिव्य दीपावली, तारावली प्रमान।
रत्न विहंग बिराजहीं, छवि सुर वृच्छ समान ॥६७८॥

(चौपाई)

तहाँ जनक कोशल महराजे। सिंहासन दिय बैठन काजे ॥

निज निज आसन बैठ कुमारा। मंडप तर निज निज अनुहारा॥
तहँ कुशकेतु जनक दोउ भाई। बैठाये सिगरे मुनिराई॥
शतानंद आनंद बढ़ाई। कह वशिष्ठ कौशिकहि सुनाई॥
गणपार्चन कराय अब दीजै। वेदी थापित पावक कीजै॥
मैं अब गवनहुँ जहाँ कुमारी। करिहौं चढ़न चढ़ाव तयारी॥
अस कहि सीता निकट सिधारयो। रानि सुनैना वचन उचारयो॥
चारिहु भगिनि केर सुखदानी। चढ़ै चढ़ाउ आसु महरानी॥
रानि सुनैना सुनि सुख पाई। भगिनि सहित सीतहि नहवाई॥
नहछू चार मातु करवाई। भूषन बसन विमल पहिराई॥
पुरट पीठ पुनि भगिनि समेतू। बैठाईं सिय सजनि निकेतू॥
शतानंद सों पुनि कह रानी। चुक्यो चार इतको मुनि ज्ञानी॥

(दोहा)

शतानंद आनंद भरि, कह्यो सुनैनहि जाय।
तहां जानकी जान की, गई घरी अब आय॥६८५॥

(चौपाई)

सुनत सखी लै सिय तहँ गमनी। मंगल गीत गाय गजगमनी॥
जबहिं सीय मंडप तर आई। उठ्यो अनंदित कोशलराई॥
उठि सुर मुनि मन महँ तिहि ठामा। जगदंबा कहँ कीन्ह प्रणामा॥
सिय-स्रुत तीनिहु बहिनि सुहाई। दिय संमुख मुनिवर बैठाई॥
कुँवरिन पीछे बैठ विदेहू। सहित अनुज कुशकेतु सनेहू॥
रानी तहाँ सुनैना आई। तिमि कुशध्वज-रमनी छवि छाई॥
निज निज पति दाहिनि दिसि बैठीं। मानहुँ मोद महोदधि पैठीं॥

जामिनि जाम जाति जिय जानी। बोल्यो बचन वशिष्ठ विज्ञानी॥
सुनहु विदेह लग्न अब आई। कन्यादान देहु सुख छाई॥
जनक तनक अब होइ न देरी। पाणिग्रहण यहि लग्न निवेरी॥
सुनत विदेह नेह भरि भारी। धरी कनक मनि मंडित थारी॥
तिहि महँ भरयो सुगंधित नीरा। लीन्ह्यो निज कर कुस मतिधीरा॥
कुंकुम रंगित तंदुल धरिकै। लै जानकी अंक मुद भरिकै॥
रानि सुनैना गाँठिहि जोरी। सो ढारति जल प्रीति न थोरी॥

(दोहा)

पढ़ि सुमंत्र यहि भाँति ते, छोड़ि दियो जल धार।
सुरपुर नरपुर नागपुर, माच्यो जयजयकार॥६६३॥

(चौपाई)

लगे बजावन बाज बराती। गाय उठीं तिय जुरी जमाती॥
यहि विधि पाणिग्रहण तिहि काला। करत भये सिय को रघुलाला॥
तब उर्मिला अंक बैठाई। लै कुस अच्छत निमिकुलराई॥
पढ़िकै मंत्र सुता कर कंजू। धरि लछमन कर पंकज मंजू॥
सलिल सुनैना कर ढरवाई। दई लषन उर्मिला सुहाई॥
दई भरत मांडवी कुमारी। जनक अनुज कुशकेतु सुवारी॥
पढ़ि सुमंत्र संकलप समेतू। दिय श्रुतिकीरति कहँ कुशकेतू॥
श्रुतिकीरति रिपुदमन लजाई। बैठे निज आसन महँ जाई॥

(दोहा)

यहि विधि चारिहु बरन को, चारिहु बधुन सुहाय।
पाणिग्रहण करवाय करि, प्रमुदित निमिकुलराय॥६६४॥

दुलहिनि दुलह को तहाँ, गाँठि जोरि बैठाय।
जुत कुटुंब सानुज जनक, लगे पखारन पाँय ॥९९९॥

(कवित्त)

पद्मराग जटित सुठान रूप थार धरि, सलिल सुगंध भरि जनक सुनैना है। पद अरविंद रघुनंद के अनंद भरे, धोवत करन द्वंद्व नीर भरे नैना है॥ जौन पद-जल विधि धार्यो है कमंडलु मैं, शंभु जटामंडल अखंडल सचैना है। स्वर्ग मैं मँदाकिनी पताल भोगवती नाम रघुराज भागीरथी भू मैं शान-देना है ॥१०००॥

(छंद गीतिका)

निज भाग्य धन्य विचारि सुर मुनि राम पायँ पखारिकै।
सिर नाय अस्तुति करत बहु विधि मधुर वचन उचारिकै॥
भाँवरि विलोकन हेत सब उमँगे अमित अभिलाप ते।
सीतारमन सीता-सहित निरखत पलक परमाप ते ॥ १ ॥
तब शतानंदहि कह्यो रघुकुलगुरु गिरा सुखछामिनी।
अब भाँवरी करवाइये पुनि अधिक बीतति जामिनी॥
सुनि शतानंद सहर्ष करवावन लगे वर भाँवरी।
ठाढ़े भये रघुवंसमनि तिमि जनक भूपति डावरी ॥२॥
वेदी विभावसु जनक भूपहि मध्य करि मग रोहनै।
लागे फिरन फेरी फलित फटिकै फरस मनमोहनै॥
जबलौं परी त्रय भाँवरी तबलौं सिया आगू चली।
पुनि चारि भाँवरि देत भे श्रीराम आगू छवि भली ॥३॥

यहि भाँति सप्तपदी कराय कुमार गौतम को सुखी।
वेदी निकट ठाढ़ो कराये राम सीता ससिमुखी॥
लाजा परोसन लाल लक्ष्मीनिधि करायो करन सों।
कीन्हें निछावर सकल जन बर बधू रतनाभरन सों॥४॥
जिहि भाँति रघुपति भाँवरो लाजा परोसनहूँ भये।
तिहि भाँति तीनहुँ बंधु भाँवरि-चार विधिवत ह्वै गये।
तब जाय रघुपति निकट लक्ष्मीनिधि कह्यो मुसक्यायकै
दीजै हमारो नेग जो हम कहहिं अब चित चाय कै॥५॥

(दोहा)

जनक-कुँवर बोल्यो हरषि यही नेग मुहिं देहु।
पद अरविंद मरंद को, मन मलिंद करि लेहु॥६॥
एवमस्तु कहि राम तहँ, निज गल की मनिमाल।
द्रुत उतारि पहिराय दिय, सालहि कियो निहाल॥७॥

(चौपाई।)

अवसर जानि सहित निज भ्राता। उठ्यो विदेह विनोद अघाता॥
कोशलपति को पूजन कीन्ह्यो। हय गय वसन विभूषन दीन्ह्यो॥
स्यंदन सिविका साजि अनेका। भाजन विविध भाँति सविवेका
बोल्यो पुनि विदेह कर जोरी। परिचारिका दारिका मोरी॥
भाग्य विवस तुम्हरे घर आहीं। तजि खेलन जानैं कछु नाहीं॥
इतते सुख उत विभव महाना। पै सिसु भाव कछू नहिं ज्ञाना॥
रहीं कुमारी प्रानपियारी। भईं सकल सुतबधू तिहारी॥
प्रेममयी मिथिलाधिप बानी। सुनि बोल्यो दशरथ मतिखानी

पुत्रबधू पुनि आप कुमारी । को इनते अब मोहिं पियारी ।
नयन पूतरी सरिस कुमारो। बसिहैं सदन सदा सुख भारी ॥

(दोहा)

राजन देहु रजाय अब, जनवासे कहँ जाऊँ ॥
निसा असन कुँवरन सहित,करन हेत चलि लाऊँ ॥१३॥

(चौपाई)

कह्यो विदेह आप पगु धारो । बाकी कछु कुहबर कर चारो ॥
चार कराय सुतन पठवैहौं । अब नहि कछू विलंब लगैहौं ॥
बालक नींद विवस अलसाने । किमि करिहैं बिलंब जिय जाने॥
सुनि मिथिलेश वचन अवधेशा। उठ्यो प्रमोदित सुमिरि गणेशा॥
मिलि मिथिलेशहि बारहि बारा ।करि प्रणाम मुनिजनन उदारा॥
विश्वामित्र वशिष्ठ समेतू । चल्यो भूप जनवास निकेतू ॥
इत भूपति जनवासे आयो । शतानंद उत बचन सुनायो ॥
सखी करावहु सब यहि बारा । सेंदुर सीस बहोरन चारा ॥

(दोहा)

सखी सयानी जाय तब, कह्यो वचन रस पूर ।
करहु लाल निज पानि सों, सियहि सीस सिंदूर ॥१८॥

(सवैया)

स्यामल पानि पसारि सिया-सिर सेंदुर देन लगे रघुराई ।
ता छन की सुखमा लखिकै सखि सों उपमा सखि एक सुनाई ॥
श्रीरघुराज बिलोकु नई मृदु, माँग सों देवनदी दुति भाई ।
आरती धार लिहे जमुना मिलि,साँची शृँगारी त्रिवेनी बनाई॥१६॥

(सोरठा)

यहि बिधि करि तहँ राम, सिय सिर सेँदुरआभरन।
तिमि अयबंधु ललाम, बधुन सीस सेँदुर भरे ॥२०॥

(दोहा)

गौतमसुत वर-करन सोँ, देव विसर्जन कर्म।
करवायो विधिवत सकल लोक रीति कुलधर्म ॥२१॥

(चौपाई)

बोली तहाँ सुनैना रानी। बोलि सखीजन सुखी सयानी ॥
लै दुलहिन दूलह कहँ जावो। हिलमिलि कुहबर-चार करावो ॥
तहँ लक्ष्मीनिधि की बर नारी। सिद्धि नाम तुरतै पगु धारी ॥
राम पानि गहि चली लिवाई। जोरे गाँठि चारिहू भाई ॥
गाय गाय बर मंगलगाना। चार करायो सहित विधाना ॥
वेद रीति कुलरीति निवाही। कहैं न बर जनवासे जाही ॥
तहँ रनिवास हास रस माचा। सबही कर अतिसय मन राचा ॥
जानि तहाँ अति काल सुनैनो। आय जनक रानी कह बैना ॥
जनवासे अब कुँवर पठैयो। कालिह कलेऊ हेत बुलैयो ॥
सासु बचन सुनि सिद्धि सुखारी। कही गिरा रामहिं मनहारी॥

(दोहा)

अब जइये जनवास को, लाल होत अतिकाल।
कालिह कलेऊ के समय, देहौं उतरु रसाल ॥२७॥

(छंद कामरूप)

सुनि सिद्धि के अस वचन सुंदर रचन पाय हुलास।

चारिहु कुँवर प्रमुदित उठे करि विविध हासविलास ॥
दिय छोरि गाँठी सिद्धि सुंदरि वधुन की सकुचाय ।
चारिहु कुँवर दोऊ सासु को सहुलास सीस नवाय ॥२८॥
गवने हरत मन दृगन फेरत मनहुँ सखिन हुलास ।
छलि छीनि चारहु छैल तिहि छन जात हैं जनवास ॥
यहि भाँति चारिहु बंधु द्वारे आयगे सुख छाय ।
तिहि काल मिथिलापाल संजुत लाभ आयो धाय ॥२९॥
मिलि राम वारहिंवार भरतहि लषन अरु रिपुसाल ।
कर जोरि सब माँगे बिदा सिर नाय दशरथलाल ॥
दिय कोटि आसिष लाय उर पुनि नयन अंबु बहाय ।
नृप कह्यो का करिये कुँवर सुख जाय नहिं कहि जाय॥३०॥
भेंट्यो बहुरि लक्ष्मीनिधिहु प्रभु मिले सहित सनेह ।
चारिहु कुमार सवार भे उत गये गेह विदेह ॥
यहि भाँति चारिहु कुँवर आवत भये वर जनवास ।
देखन बराती सबै ठाढ़ें नहिं समात हुलास ॥३१॥
सिर नाय चले कुमार सब पितु की रजायसु पाय ।
हिलि मिलि किये भोजन रजनि व्यंजन विसेष निकाय ॥
कीन्हें सयन पर्यंक निज निज अरुन आलस नयन ।
सुनिकै कुमारन सयन भूपति कियो चैनहिं सयन ॥३२॥

(दोहा)

सकल बराती जागते, लहे प्रमोद प्रभात ।
वंदीजन बिरुदावली, गाय उठे अवदात ॥३३॥

उतै जनक सब साजु भरि, शतानंद के संग।
पठवायो जनवास महँ, हित व्यवहार अभंग ॥३९॥

(चौपाई)

शतानंद लखि उठ्यो महीपा। दै आसन बैठाय समीपा॥
शतानंद बोल्यो मुसक्याई। तुम ब्रह्मण्य धन्य नृपराई॥
यह व्यवहार विदेह पठाये। हम बरात हित इत लै आये॥
उतै सुनैना सखी पठाई। लक्ष्मीनिधि कहँ निकट बुलाई॥
जनवासे अब लाल सिधारो। लै आवहु लिवाय वर चारौ॥
लक्ष्मीनिधि आवत लखि राजा। उठ्यो अनंदित सहित समाजा॥
लक्ष्मीनिधि कह हे महाराजा। भेजहु कुँवर कलेऊ काजा॥
भूप कह्यो लैजाहु कुमारे। का पूछहु मिथिलेश-दुलारे॥
चढ़े कुँवर सब तरल तुरंगा। चले सखा सब सोहत संगा॥
राम जाय मिथिलेश द्वार में। तजे तुरंगन सुख अपार में॥

(दोहा)

मिलि विदेह आशिष दई, लैगे भवन लिवाय।
यथा जोग आसन सखन, सहित राम बैठाय॥ ४०॥

(छंद)

लक्ष्मीनिधि तहँ आसुहि कुँवर लिवायकै।
गये तुरत रनिवास पिता रुख पायकै॥४१॥
रामहिं आवत देखि सुनैना धायकै।
लै बलिहारी चूमि वदन सुख पायकै॥४२॥
मनिमंदिर महँ आसुहि राम लिवायकै।

तीनिहुँ अनुज समेत सखी बैठायकै ॥४३॥
व्यंजन विविध प्रकार थार भरि ल्यायकै ।
सूपकार सुख पाय परोसे आयकै ॥४४॥
सन्मुख बैठी सिद्धि सहित सखियान के।
गारी गावत हेत स्वरूप गुमान के ॥४५॥

(दोहा)

यहि विधि मिथिलापुर जुवति गारी गावत जाहिं ।
मंद मंद भोजन करत, सकल बंधु मुसक्याहिं ॥४६॥

(चौपाई)

मंजु सुरन भरि राग सुहाना । लेतीं तरल तान विधि नाना॥
माच्यो महा मनोहर सोरा । मोहीं सखि लखि राजकिसोरा ॥
यहि विधि भोजन करि अभिरामा। किय आचमन बंधुजुत रामा॥
उठि चामीकर चौकिन जाई । बैठि धोय कर पद सब भाई ॥
कही सिद्धि सों पुनि प्रभु बानी । होती बड़ि बिलंब जिय जानी॥
साँझ समय पितु दरसन हेतू । जैहैं मिथिलाधिप मतिसेतू ॥
ताते हमको देहु रजाई । पेखहिं पितु जनवासे जाई ॥
रामहिं जान जानि तिहि जूना । सुन्यो सुनैना भो दुख दूना ॥
कहि न सकति कछु वचन विचारी । रहहु लाल को जाहु सिधारी
जस तसकै बोली महरानी । करहु लाल भल जो मनमानी ॥
धारिहु बंधु बंदि पद ताके । बाहर आये अति सुख छाके ॥
रघुनंदन बंदन करि भूपै । चढ़ि तुरंग महँ चले अनूपै ॥

निज निवास आये रघुराई। आनँदहू के आनँददाई॥
पितहि प्रनाम कीन सिर नाई। दै आसिष बोल्यो नृपराई।

(दोहा)

सुनहु राम अभिराम अब, करहु जाय आराम।
साँझ समय मिथिला नृपति, ऐहैं हमरे धाम ॥५४॥
सुनि पितु सासन बंधु जुत, करि पुनि पितहि प्रनाम।
गये राम आराम हित, जहँ अभिराम अराम ॥५५॥

(चौपाई)

निसा सिरानि भयो भिनुसारा। पूरब दिनकर किरनि पसारा॥
उठ्यो चक्रवर्ती महराजा। सुमिरि गरुड़गामी छवि छाजा॥
रघुकुलतिलक उठे जुत भाई। पूजन मज्जन करि सुख छाई॥
लक्ष्मीनिधि उत जनक पठाये। देन निमंत्रन के हित आये॥
प्रेम मगन नृप गिरा उचारी। कहियो पितुहि प्रनाम हमारी॥
पुनि कहियो अस सो सुखदाई। जो मोहिं राउर होय रजाई॥
लक्ष्मीनिधि तहँ बंदन करिकै। गयो महल मंडित मुद भरिकै॥
इतै करी अवधेस तयारी। महल पधारन हेतु सुखारी॥
धूरि पूरि नभ भूरि उड़ानी। चली सैन्य नहिं जाय बखानी॥
भई खबर महलन महँ जाई। आवत अवधनाथ नृपराई।
समधी आगम मनहिं विचारी। आगू लेन चल्यो पगु धारी।
किये प्रानम परस्पर दोऊ। बंदे जथा जोग लब कोऊ॥
सभा सदन दशरथ पगु धारे। सिंहासन यक अमल निहारे॥
बैठे तापर भूपति दोई। दहिने दिसि दशरथ मुदमोई।

(दोहा)

राम दरस हित स्वर्ग तजि, चारन सिध गंधर्व ।
विद्याधर अरु अप्सरा, आये मिथिला सर्व ॥६३॥

(चौपाई)

जनक गुनीजन कला निहारी । तजि गुन गर्व रहे हियहारी ॥
अवधनरेसहु करी प्रसंसा । दियो भूरि धन नृप अवतंसा ॥
तिहि अवसर आयो कुशकेतू । उठी सभा जुग भूप समेतू ॥
करि वंदन भूपति सिरताजे । कह्यो वचन पुनि भोजन काजे ॥
रघुकुलतिलक विनय सुनि लीजे । भोजन हेत गवन अब कीजे ॥
सुनि कुशकेतु वचन अवधेशा । चल्यो कुँवर-जुत लै मिथिलेशा ॥
चले संग सब रघुकुलवारे । भोजन करन भवन ज्यवनारे ॥
भोजन मंदिर गये लिवाई । जथाजोग सब कहँ बैठाई ॥
परस्यो ओदन बिविध प्रकारा । मोती भात सुनाज उदारा ॥
बने विविध विधि साक विधाना । विविध रंग नहिं जाय बखाना ॥
विविध भाँति की बनी मिठाई । सरस सवाद सुधा समताई ॥
जिहि विधि परसे दशरथ काहीं । तिहिते न्यून बरातिन नाहीं ॥

(दोहा)

जैसी विधि दशरथ करी तैसी करी विदेह ।
पुनि लागे भोजन करन, दोउ नृप सने सनेह ॥७०॥
तहँ गारी गावन लगीं, मिथिलापुर की नारि ।
बाजन विविध बजायकै, सातहु सुरन सुधारि ॥७१॥

मंद मंद भोजन करत सुनि सुनि गारी राय।
कुँवर उतर कछु देत नहिं, दोउ नृप निकट लजाय ॥७२॥

(चौपाई)

यहि बिधि करि भोजन अवधेशा। करि आचमन तज्यो तिहि देशा॥
अचवन कियो भूप सिरताजा। तहँ आयो मिथिलामहराजा॥
निज कर बीरी नृपहि खवायो। लक्ष्मीनिधि रामहि पुनि ल्यायो॥
माँगी बिदा जान जनवासे। कह्यो वचन तब जनक हुलासे॥
किहि बिधि कहौं जान अवधेशा। जान कहत जिय होत कलेशा॥
कोशलनायक बंदि विदेहू। गमन्यो वरनत जनक सनेहू॥
आजु चतुर्थी कर्म विधाना। ताकर सब साजहु सामाना॥
शतानंद कहँ जनक हुलासे। वर आनन पठयो जनवासे॥
गौतमसुत चलि अवधभुवाले। कह्यो चतुर्थी कर्महि हाले॥
राउ कह्यो मम गुरु पहँ जाहू। तिन सुत कुँवरन कहँ ले जाहू॥
गौतमसुत वशिष्ठ पहँ गयऊ। विश्वामित्रहि आनत भयऊ॥
समाचार सब दियो सुनाई। सम्मत कीन्ह्यो दोउ मुनिराई॥

(दोहा)

तहँ वशिष्ठ चारिहु कुँवर, लीन्हे आसु बुलाय।
रत्नजाल की पालकी, दूलह लिये चढ़ाय ॥६९॥

(चौपाई)

गाधिसुवन अरु आपहु आसू। चढ़े एक रथ सहित हुलासू॥
अगनित परिकर विविध नकीवा। चले संग बोलत जय जीवा॥
यहि बिधि चारिहु कुँवर सुहाये। जनक भूप रनिवासहिं आये

मंडप तर दूलह सब आये। मिली सिद्धि सखि मंडल भाये॥
गौरि गणप पूजन करवाये। पुनि चारिहु वर बधुन बुलाये॥
पुनि बैठाये आसन माहीं। सविधि कराये होम तहाँहीं॥
सफल चार चौथी कर कीन्हें। अंतःपुरवासिन सुख दीन्हें॥
लै रानी सब कुँवरन काहीं। असन करायो भौनहिं माहीं॥
माँगि विदा प्रभु सिबिर सिधारे। सखन बंधुजुत राम नहाये॥
बदलि बसन पितु सभा सिधारे। सुखी भये नृप कुँवर निहारे॥

(दोहा)

रघुपति ब्याह उछाह में, बीते बहु दिन रैन।
जानि परे छन एक सम, पाय महा चित चैन॥८५॥

(चौपाई)

एक समै वशिष्ठ निज धामा। बैठे रहे सुमिरि हिय रामा॥
विश्वामित्र तहाँ चलि आये। उठि वशिष्ठ आसन बैठाये॥
गाधिसुवन कह मंजुल बानी। सुनहु ब्रह्मनंदन मतिखानी॥
बहुत दिवस मिथिला महँ बीते। उभै राज नहिं सुख सों रीते॥
अब हम गमनब सैल हिमालै। कारज सकल सिद्धि यहि कालै॥
सुनत गाधिसुत की वर बानी। बोले ब्रह्मतनय विज्ञानी॥
सत्य कह्यो कौशिक भवदाता। चलब अवध अब उचित बराता॥
कौसल्यादिक जे महरानी। लिखहिं पत्रिका मुहिं हुलसानी॥
ताते शतानंद बुलवाई। हम सब जतन करब मुनिराई॥
उठि वशिष्ठ कहँ मिलि मुनिराई। कौशिक बार बार सिर नाई॥
माँगि विदा दशरथ पहँ आयो। भूपति चलि आगे सिर नायो॥

दै आसन पूछी कुसलाई। गाधिसुवन बोल्यो सुख पाई॥
चलन चहैं अब हिमगिरि काहीं। इहाँ रहे सुघरत तप नाहीं॥
जब करिहौ सुमिरन नृप मोरा। तब देखिहौ मोहिं तिहि ठोरा॥

(दोहा)

नरपति तुम्हरे नेह बस, बनत न हमसों जात।
है न सकत कछु भजन तप, रहत बनत नहिं तात॥६३॥

(चौपाई)

सुनि कौशिक के वचन सुहाये। अवधनरेश अतिहि बिलखाये॥
रामहि बंधुन सहित बुलाई। दीन्हीं मुनि की बिदा सुनाई॥
मुनि कहँ करि प्रणाम बहु बारा। जोरि जलज कर वचन उचारा॥
अवै न जाहु अवध पगु धारो। पुनि गमनब मग जहाँ तुम्हारो॥
मुनि कह अब कीजै सो काजा। जिहि हित प्रगट भयो रघुराजा॥
अस कहि बार बार मिलि रामै। आशिष दियो पूरि मनकामै॥
गयो विदेह गेह मुनिराई। सुनि मिथिलेश गह्यो पद आई॥
माँगी बिदा मुनीस महीपै। जब सुमिरब तब रहब समीपै॥
कौशिक गये बहुरि रनिवासै। जोहि जानकी पाय हुलासै॥
माँगि विदा मुनि दई असीसा। पुनि आयो जहँ जनक महीसा॥
लै इकांत महँ मुनि अस भाख्यो। भूप बरात बहुत दिन राख्यो॥
बिदा करहु अब कोशलनाथै। दूलह दुलहिन करि यक साथै॥
मुनि अब आशिष वचन उचार्‌यो। जनक नयनजल चरनपखार्‌यो॥
चल्यो मुनीस नयन भरि नीरा। गयो महीप महल धरि धीरा॥

(दोहा)

सुमिरत सीतारामपद, दशरथ जनक सनेह ।
ब्याह बरात उछाह सुख, हिमगिरि बरन्यो अछेह ॥१०१॥

अवध प्रत्यागमन

(छंद चौबोला)

विश्वामित्र गये जब हिमगिरि माँगि बिदा दोउ राजे ।
मुनि वशिष्ठ तब लगे बिचारन कौन उचित अब काजे ॥
आयो शतानंद तिहि अवसर मुनि वशिष्ठ ढिग माहीं ।
अति सत्कार सहित दै आसन कुसल पूछि तिन काहीं॥१०२॥
गौतमसुत सों कह्यो वचन पुनि शतानंद तुम ज्ञाता ।
बीत्यो बहुत काल मिथिलापुर निवसे विशद बराता ॥
कौशल्या कैकयी सुमित्रा जे दशरथ महरानी ।
बार बार लिखतीं मुहिं पातीं दुलहिन लखन लुभानी॥१०३॥
ताते जाय जनक समुझावहु करैं कुमारि बिदाई ।
उचित न अब राखब बरात को चलैं अवधनृपराई ॥
सुनि वशिष्ठ के वचन यथोचित शतानंद मुनि भाख्यो ।
कहत सुनत यह वचन दुसह पै उचित बिचारहि राख्यो ॥
हम अब जाय बुझाय जनक को करिहैं बिदा तयारी ।
तुम समुझावहु अवधनाथ को होहि न जात दुखारी ॥
तब मुनि गौतम-सुवन बिदा करि दशरथ निकट सिधार्‌यो ।
बैठि एकांत शांतरस संजुत बैन अचैन उचार्‌यो ॥१०५॥

अवध तजे बीते अनेक दिन मिथिला बसत तुम्हारे।
सुवन-विवाह भये मंगलजुत श्रीपति विघन निवारे॥
भूमि खंड नव को अखंड कारज नरेश तुव हाथा।
ताते अब पगु धारि अवध को कीजै प्रजा सनाथा॥१०८॥
सुनि वशिष्ठ के बचन चक्रवर्ती नरेश मुख गायो।
सकल सत्य जो नाथ कहौ तुम हमरहु मन यह आयो॥
पै विदेह के नेह बिबस नहिं माँगत बनत बिदाई।
प्रीति रीति करि जीत लियो मुहि बिछुरन अति दुखदाई॥
जो विदेह करिकै मन साहस सुता बिदा करि देवैं।
तौ हम पुत्रबधू पुत्रन लै अवध नगर चलि देवैं॥
यतनो कहत भूप के आँखिन आँसुन वहे पनारे।
मुनिवर कह्यो विदेह जोग यहि तुम जिहि भाँति उचारे॥
रीति सनातन ब्याह अंत में होती सुता बिदाई।
मर्यादा ते अधिक रहे इत लहि सत्कार महाई॥
ताते चलहु अवधपुर भूपति अब परछन सुख लूटो।
पुत्रबधू अरु पुत्र राखि घर और काज महँ जूटो॥१०९॥
शतानंद उत जाय जनक पहँ लै इकांत मिथिलेसै।
कह्यो शांत अतिदांत बचनवर सहित ज्ञान उपदेसै॥
मंगलमय सब भयो विघ्न विन ब्याह उछाह अपारा।
करत बरातहि बिते बहुत दिन नित नित नव-सत्कारा॥११०॥
अधिक प्रमानहुँ ते बरात अब राख्यो इत मिथिलेसू।
चलन चहत अब अवध अवधपति सकुचत कहत कलेसू॥

तातै सुदिवस पूछि कुँवारिन बिदा करो महराजा।
अब इतनै अवशिष्ट आपको सकल सजावहु साजा॥११४॥
शतानंद के वचन सुनत नृप राम वियोग बिचारी।
रह्यो दंड द्वै कछुक कह्यो मुख नयन बहावत वारी॥
जस तस कै धरि धीरज नृप उर है आनँद सों छूछो।
कह्यो वचन मुनि करहु जथा मन मोहिं काह अब पूँछो॥
अनुचित कछु न विवाह अंत में होती सुता बिदाई।
नहिं नववधू बसति नैहर में रीति सदा चलि आई॥
कह मिथिलेश करहु जस भावै शतानंद तुम ज्ञाता।
सुनि भूपति के वचन उठ्यो मुनि बोल्यो सचिव विख्याता॥
सचिव सुदावन आदि गये तहँ दिय सासन मुनिराई।
बधुन बिदा को साज सजावहु कालिह सुदिन सुखदाई॥
अंतःपुरहि जाय गौतमसुत बिदा खबरि सुनि गाई।
हहरि उठ्यो रनिवास सकल सुनि जनु सुख दियो गमाई॥

(दोहा)

फैलत फैलत फैलिगै, खबरि नगर चहुँ ओर।
करत कालिह भूपति बिदा, चलन चहत चितचोर॥११५॥

(छंद चौबोला)

जबते शतानंद अंतःपुर सीय बिदा सुख भाषे।
तबते सब रनिवास हुलास निरास बिरंचिहि माषे॥
जाके जौन पियारि वस्तु घर देहि जानकिहि ल्याई।
सरबसु देन चहैं जिन काहित प्रेमबिवस अकुलाई॥११६॥

सीयमातु कुशकेतु-कामिनी सिद्धि समेत बुलाई।
बैठि सिखावहिं ओहि जानकिहि पतिव्रत धर्म बताई॥
दशरथ सरिस श्वसुर जग में नहिं जनक जनक सम पाई।
कंत भानुकुल-कमलदिवाकर तुहि सम द्वितिय न जाई॥११७॥
रह्यो सदा पति को रुख राखत परिहरि सब सुख प्यारी।
पति सासन अनुसार काज सब कीन्ह्यो धर्म बिचारी॥
सासु ससुर को पूजन करियो जनक जननि सम मानी।
नातो जाको जौन होय कुल सो मानेहु जिय जानी॥११८॥
चारिहु भगिनि मिली रहियो नित कबहुँ न होय बिरोधू।
सब सासुन को मान राखियो किह्यो न कबहूँ क्रोधू॥
परदुख दुखी सुखी परसुख सों सबसों हँसि मुख भाख्यो।
जथाजोग सत्कार सबन को करि सनेह सुठि राख्यो॥११९॥

(चौपाई)

इतै राउ सुदिवस जिय जानी। बोलि वशिष्ठहि बोले बानी॥
बिदा करावन कुँवर पठाओ। अवध गवन दुंदुभी बजाओ॥
तहँ वशिष्ठ मुनि अति सुख पाये। राम सहित सब बंधु बुलाये॥
कह्यो बिदेह निवास पधारौ। बधू बिदा करि सुदिन न टारौ॥
मानि राम गुरु पिता रजाई। चले बिदेह महल सब भाई॥
नारी जुरि जुरि देखि उचारैं। बिदा करावन कुँवर पधारैं॥
दौरि दूत तिहि अवसर आये। मिथिलापति कहँ खबरि जनाये॥
आवत राजकुँअर मन भाये। सोहत सखा संग छबि छाये॥
उठे भूप आये चलि आगे। राम दरस कहँ अति अनुरागे॥

आवत देखि विदेह कुमारा। उतरि तुरंगन ते यक बारा॥
किये प्रणाम नाम निज लीन्हें। भूप जथोचित आसिष दीन्हें॥
कुशल प्रश्न पूछ्यो सब भाँती। राम देखि भई सीतल छाती॥

(दोहा)

सुरभि पल तांबूल लै, नृप कीन्ह्यो व्यवहार।
जथा राम तिमि सब सखन, मानि कियो सत्कार॥१२६॥

(छंद गीतिका)

तिहि काल श्रीरघुलाल बचन रसाल कह कर जोरिकै।
नयननि नवाय सुछाय जल मानहुँ सबन चित चोरिकै॥
तुम अवधपति सम मम पिता हम अहैं बालक रावरे।
जो भयो कुछ अपराध तौ प्रभु छमिय गुनि निज डावरे॥१२७॥
अब चलन चाहत अवध को अवधेश संजुत साहनी।
मोहिं बिदा माँगन हित पठायो बत है दिलदाहनी॥
जो नाथ देहु निदेस तौ जननी चरन बंदन करौं।
अब जाय अंतहपुर सपदि निमिकुल निरखि आनँद भरौं॥१२८॥
सुनि प्राणप्यारे के वचन बिलख्यो बिदेह महीप है।
गद्गद गरो कुछ कहि न आवत बचन परम प्रतीप है॥
अँसुवानि ढारत जोरि कर बोल्यो बचन मिथिलेस है।
तुम जाहु अस किमि कहै मुख दृग ओट होत कलेस है॥१२९॥
जस होइ राउर मन प्रसन्न निदेस जस अवधेस को।
सो करहु सुरति न छाँड़ियो निज जानि यह मिथिलेस को॥
सुनिकै बिदेह निदेस सहित सनेह तिन सिर नाइकै।

संजुत सकल बंधुन चले मिथिलेश कुँवर लिवाइकै ॥१३०॥
प्रभु जाय अंतहपुर सबंधुन चरन बंदे सास के।
मिथिलेश-महिषी चूमि मुख बैठाय सहित हुलास के॥
कुशकेतु की महिषी तहाँ चलि रत्न निछावरि करी।
पुनि सिद्धि आई सखिन संजुत रति लजावति रतिभरी॥१३१॥

(चौपाई)

उतै अवधपुर करन पयाने। भूप चक्रवर्ती अतुराने॥
सहित वशिष्ठ सुवृंद समाजा। गमन्यो बिदा होन हित राजा॥
अवधनाथ की जानि अवाई। लियो द्वार ते निमिकुलराई॥
ल्याय सभा मंदिर बैठायो। करि सत्कार बहुरि अस गायो॥
जो सासन करु कोशलराऊ। करौं सीस धरि बिन छलछाऊ॥
तब वशिष्ट बोले मृदु बानी। सुनहु जनक भूपति विज्ञानी॥
करन चहत अब अवध पयाना। चिते बहुत दिन जात न जाना॥
कुँवरि बिदा करि सुदिवस आजू। देहु रजाय सजाय सुसाजू॥
सुनि धरि धीरज भूप विज्ञानी। बोल्यौ बचन जोरि जुग पानी॥
तुम त्रिकाल ज्ञाता मुनिराई। मोरे सिर पर आप रजाई॥
बहुरि विदेह सनेह बढ़ाई। दशरथ सों असि बिनय सुनाई॥
तुम समरथ कोसलपुरराऊ। सीलसिंधु जग प्रगट प्रभाऊ॥
जासु राम अस पुत्र प्रधाना। सकै कौन करि बिरद बखाना॥
सौंपहुँ नाथ कुमारी चारी। पालब लघु सेवकी बिचारी॥

(दोहा)

धोखे अनधोखे कछुक, जौन चूक परि जाय।
छमा करब निज बाल गुनि, मोर मान सुधि ल्याय ॥१३९॥

(चौपाई)

शतानंद तिहि अवसर आये। तिहि वशिष्ठ कहि वचन बुझाये॥
आयो विदा मुहूरत अवहीं। परिछन होइ जनावहु सबहीं॥
सुनत वशिष्ठवचन सहुलासू। गौतमसुवन जाय रनिवासू॥
बोलि सुनैनहि दियो बुझाई। रानि चारि पालकी मँगाई॥
दूलह दुलहिन सपदि चढ़ाई। मंगल गान मनोहर गाई॥
कनक थार आरती उतारी। पढ़ि सुभ मंत्र उतारयो वारी॥
कीन्ह्यो सब विधि परिछनचारा। लियो वहोरि उतारि कुमारा॥
तब सब को करिकै संमाना। जानि सुनैना सिद्धि समाना॥
वैठे सभा जहां दोउ राजा। भ्रातन सहित गये रघुराजा॥
भयो सोकसागर रनिवासा। लागी बहुरि दरस की आसा॥

(दोहा)

आवत लखि रघुराज को, सिगरी उठी समाज।
श्वसुर पिता पद वंदि प्रभु, वैठे सील दराज ॥१४५॥
तिहि अवसर गौतम-सुवन, बोल्यो वचन विचारि।
गमन मुहूरत आइगो, कन्या चलैं सिधारि॥ १४६॥
एवमस्तु दसरथ कह्यो, राम चारिहू भाय।
चले तुरंगन में चढ़े, पिता श्वसुर सिर नाय ॥१४७॥

(छंद चौबोला)

सुनि कुलवधू वृद्ध नृप बानी कही सुनैनै जाई ।
अवसर जानि चार करिबे हित सो बाहर कढ़ि आई ॥
कह्यो विदेह सनेह विवस ह्वै पहुँचैहौं कछु दूरी ।
यह कुल रीति नाथ बरजौ जनि तुव बिछुरनि दुखमूरी ॥१४८
नृप प्रनाम करि चल्यो चढ़यो रथ बाजे विविध नगारे ।
मिथिलापति सों कह वशिष्ठ सब सुदिवस सुभग विचारे ॥
यही मुहूरत महँ कन्या सब चलैं भवन ते राजा ।
द्वितिय मुहूरत नहिं सुभदायक करहु आसुही काजा ॥१४९॥

(दोहा)

सुनि वशिष्ठ के वचन वर, कुशध्वज सहित विदेह ।
लक्ष्मीनिधि को संग लै, गे अंतहपुर गेह ॥ १५० ॥
लीन लाय उर जनक सिय, तनक रह्यो न सम्हार ॥१५१॥
डूबी धीर जहाज जनु, प्रेमहि पारावार ॥

(चौपाई)

जस तसकै धरि धीरज राजा । बोल्यो बिलखत मंद अवाजा ॥
कीन्ह्यो सासु ससुर सेवकाई । पतिव्रत धर्म कबहुँ नहिं जाई ॥
त्यागब हम इत बारहि बारा । किहहु न नेसुक मनहिं खभारा ॥
करिहैं मोते अधिक दुलारा । शान्तिसिरोमनि ससुर तिहारा ॥
इतना कहत गरो भरि आयो । जनक निकरि तब बाहर आयो ॥
मिली सीय कुशकेतुहि जाई । तनु ते धीरज गयो पराई ॥

(दोहा)

जस तस कै धरि धीर कछु, चल्यो बिकल कुशकेत।
लक्ष्मीनिधि के चरन महं, गिरी सीय चिन चेत॥ १५९॥

(चौपाई)

कहि मैया सिय रोवन लागी। को अस जिहि न धीरता भागी॥
कढ़ति न मुख लक्ष्मीनिधि बाता। सीय सनेह सिथिल सब गाता॥
जस तस कै धरि धीर सुनैना। अवसर उचित कहे अस बैना॥
तहँ कुशकेतु भूप की रानी। कहत बुझाय परम प्रिय बानी॥
जनि मानहु दुख मनहिं कुमारी। लेहु सनातन रीति बिचारी॥
यहि विधि कहत प्रबोधहिं बानी। बहत जात नयनन सों पानी॥
होत बिदा सिय धीरज भागा। प्रगट्यो प्रजा परम अनुरागा॥
सिबिका आनि रत्नमय चारी। दिय चढ़ाय चारिहु कुमारी॥
चलत पालकी नगर मंझारी। कीन्हीं प्रजा कुलाहल भारी॥
यहि विधि सिय बरात महं आई। बजे मुरज दुंदुभि सहनाई॥
आवत जानि विदेह महीपा। रुके अवधपति नगर समीपा॥
अवधनाथ तहँ सहित कुमारा। मिले कछुक चलि प्रेम अपारा॥

(दोहा)

रघुनंदन बंदन कियो, जनक लियो उर लाय।
प्रीति रीति तिहि काल की, बरनि कौनि विधि जाय॥१६२
राम बंधु जुत अवधपति, सकल बराती लोग।
जनक सुजस बरनत चले, है गो दुसह वियोग॥ १६३॥

(छंद कामरूप)

यहि भाँति मिथिला नगर ते जब चली अवध बरात।
मंत्री सुमंतहि कह्यो भूपति उर न मोद समात॥
अब चारि चार तुरंत दीजे अवधपुर पठवाय।
बर अवधपुर सब भाँति ते उत देहिं सुभग सजाय॥१६५॥
कोशल नगर के प्रजन घर घर देहु खबरि जनाय।
आवत बरात विदेहपुर ते वर वधून लिवाय॥
तिहि भाँति पुनि रनिवास महँ जाहिर करावहु आसु।
परछन तयारी करहिं भारी सहित विविध हुलासु॥१६५॥
सुनि स्वामि सासन सचिव कीन्ह्यो सपदि सकल विधान।
चढ़िकै तुरंग तुरंत धाये चारि चार प्रधान॥
कोशल नगर घर घर सुचर चर जाय तिमि रनिवास।
दीन्हे जनाय बरात आवत पंथ चारि निवास॥ १६६॥

परशुराम-मिलन

(दोहा)

यहि विधि मिथिला नगर ते गवनी जवै बरात।
इक योजन में भयो तब, मारग में उत्पात॥१६७॥

(छंद कामरूप)

लखि पन्यो पश्चिम दिसि महा तहँ धूरि को धुँधकार।
मूँद्यो दिवाकर भास चहुँदित ह्वै गयो अँधियार॥
लागी चमंकन तड़ित चहुँकित सोर भो अति घोर।

अतिसय भयानक श्याम घनमंडल उठ्यो चहुँ ओर ॥१६८॥
सबके गये दृग मूँदि व्याकुल सैन्य भइ तिहि काल।
यक संग सकल विहंग बिसर उठे बोलि बिहाल ॥
करि सैन्य दच्छिन ओर धावन लगे वहु मृग-माल।
चहु काक गृद्ध उलूक बोलत अशुभ अति तिहि काल ॥१६९॥
सबके हृदय कंपन लगे पशु बहत दृग जलधार।
अति भीति भय डोलन लगी तहँ धरनि बारहिंबार ॥
सैनिक सकल ठाढ़े विकल मुख वचन बोलत हाय।
अब प्रलय जग महँ होन चाहत बचव नाहिं दिखाय ॥१७०॥
तहँ मुनि वशिष्ठादिक महर्षि ससंक हर्ष बिहाय।
लागे पढ़न स्वस्त्ययन मंगल चित्त महँ अकुलाय ॥
उत्पात अति अवलोकि रघुकुल-कमल चारिहु भाय।
आये निकट नरनाथ के मातंग तुंग बढ़ाय ॥१७१॥

(दोहा)

तिहि अवसर तहँ भस्म के, अंधकार के बीच।
देखि परे भृगुपति विकट, सिगरी सैन्य नगीच ॥१७२॥

(छंद भुजंगप्रयात)

जटा जूट जाके लसैं सीस माहीं।
त्रिपुंड्रौ लजे भाल में सर्वदाहीं ॥
अनेकानि रुद्राच्छ की लंब माला।
बँधी त्यों जटा जूट में ज्योतिजाला॥ १७३ ॥
लसै कुंडलो कर्ण रुद्राच्छ केरे।

मुखै तामरे वाल भय होत हेरे ॥
कराले चुलाले दिपैं नयन दोऊ ।
सकैं ना चितै विश्व में वीर कोऊ ॥१७४॥
चढ़ी बंक भ्रू सर्पिणी सी करालैं ।
फरकैं उभय नासिका वेध हालैं ॥
तजै श्वास कोपाधिकै बार बारै ।
मनो ज्वाल के जाल ते विश्व जारै ॥ १७५ ॥
चढ़ी सर्व अंगानि में भस्म भूरी ।
मनो श्टंग कैलास को भास पूरी ॥
लिहे चंड कोदंड दोदंड भारी ।
कसे कंध में तूण द्वै भीतिकारी ॥१७६॥
वृहद् व्याघ्रचर्मावरे पृष्ठ माहीं ।
कसो काल सो खड्ग त्यों लंक पाहीं ॥
महाकोप सों कंपते ओठ दोऊ ।
डरैं देवता दैत्य देवेस सोऊ ॥१७७॥
महाकाल सो कंध में है कुठारा ।
कियो बार बारै सुछत्रिय सँहारा ॥
तहाँ मार्कंडेय आदी ऋषीशा ।
कहे रेणुकानंद हैं विप्र ईशा ॥१७८॥
परयो पेखि प्रत्यच्छ सो पर्शुरामा ।
महाकाल सों भीति भय तीन जामा ॥
महावीर जे शंक मानैं न नेकौ ।

महा भीरु ठाढ़े रहे नाहिं पकौ ॥१७६॥

(दोहा)

आयो यहि विधि परशुधर, महाभयंकर रूप।
कालानल सम तेज तनु, लहे भीति अति भूप ॥१८०॥

(कवित्त)

हैहैराज बाहुन की समिध सरोष करि,
कीन्ह्यों रन यज्ञ स्रुव विरचि कुठार है।
जाकी चाप भीति निज रीति छोड्यो छत्रीकुल,
छिति में छमा की छपा भयो भिनुसार है॥
रघुराज कोशलेश साहनी के आगे खड़ो,
भृगुकुल-कमल-दिवाकर अकार है।
कोपित अपार मानो नयनन सों करै छार,
वीर विकरार बोलै वैन बार बार है॥१८१॥
हौंतो तप तपत महेंद्र सैल वैठो हुतो,
आपुई ते कै लियो तैं कोप को सहार है।
कान में प्रचंड परी वज्रपातही सी आय,
गुरु के कोदंड खंडवे की झनकार है॥
चौंकि उठ्यो चारों ओर चिते चलि दीन्ह्यों चट,
उपज्यो नवीन गुरुद्रोही को हमार है।
कीन्ह्यो जो अकाज छाँड़ि देई सो समाज आज,
कौन रघुराज कोशलेश को कुमार है॥१८२॥

(दोहा)

परशुराम के बचन सुनि, अकुलान्यो अवधेस।
जान्यो अब सब को भयो, नास सत्य यहि देस ॥१८३॥

(चौपाई)

उतर्यो रथ ते दशरथ राजा। लियो बुलाय मुनीस समाजा॥
करि आगे मुनि बृंद महीपा। भूप गयो भृगुनाथ समीपा॥
मुनिजन निरखि परसुधर काहीं। आपुस महँ सिगरे बतराहीं॥
किधौं पितावध सुधि मन करिकै। आयो पुनि अमरष उर भरिकै॥
अस कहि सब मुनि किये प्रनामा। बोले सफल राम हे रामा॥
दशरथ बहु दीनता दिखाई। बार बार चरनन सिर नाई॥

(दोहा)

रे दशरथ मम गुरु-धनुष, निज सुत पानि तुराय।
छमा करावत चूक निज, मीठे बचन बताय ॥१८७॥
भयो अबहुँ नहि मोथरी, मोर उदंड कुठार।
उपज्यो अमरष दून अब, करौं छकुल संहार ॥१८८॥

(चौपाई)

अस सुनि परशुराम की बानी। जान्यो भूप मीच नजिकानी॥
तहाँ तुरंत सुमंतकुमारा। जाय राम सों बचन उचारा॥
कहा करत ठाढ़े सब भाई। आयो एक विप्र अनखाई॥
आपन नाम परशुधर भाषै। बार बार भूपति पर माषै॥
गुरु वशिष्ठ आदिक मुनिराई। बारहिंबार कहैं समुझाई॥
नहिं मानत रोकै दल ठाढ़ो। जानो परत बीर बर गाढ़ो॥

सुनत राम नेसुक मुसकाई। उतरे सिंधुर ते अतुराई॥
लषन भरत रिपुहनहि हँकारी। चले सहज धनु-सायक-धारी॥
पिता समीप ठाढ़ भे जाई। हर्ष विषाद न कछु उर ल्याई॥
तिहि छन रघुपति कियो प्रनामा। तथा बंधु लैलै निज नामा॥
राम रूप छवि राम निहारे। प्रथमहिं मोहि अमर्ष बिसारे॥
पुनि सुधि करि शंकर-अपराधा। कियो राम पर कोप अगाधा॥

(दोहा)

पुनि सम्हारि भृगुनाथ तहँ, ऐसो कियो विचार।
कैान पाप के फल प्रगट, कियो दया संचार॥१६५॥
मारन लायक नहिं भुवन, नरभूपन जग माहिं॥
जो सरनागत होय मम, अभय करौं यहि काहिं॥१६६॥
अस विचार भृगुनाथ करि ले कुटार धनु हाथ॥
बाल्यो बहुरि वशिष्ठ सों, तनय कँपाइत माथ॥१६७॥

(कवित्त)

गुर अपराध सुधि करत अगाध कोप,
ब्रह्मसुत को अगाधि देत बैन भाख्यो है।
ब्रह्मऋषि गाधिसुत दोऊ रहे आप इतै,
शंभुधनु तोरत मैं काहे नहिं माख्यो है॥
कबते विचारयो मोहिं छमामान छोनी मध्य,
भुजबल छोर मेरो छत्री कैान माख्यो है।
मोरि सुधि कै कै विश्वामित्र तो पराय गयो,
आप गुरु-द्रोही ल्याय मेरे आगे राख्यो है॥१६८॥

(सोरठा)

सुनि भृगुपति के बैन मनही मन मुसक्यात मुनि।
अबै ज्ञान यहि है न, वृथा बकत बरबर बचन ॥ १९९ ॥
कह्यो बचन मुसक्याइ, भयो जदपि अपराध बड़।
छमा करहु भृगुराइ, छमा विप्र को चाहिए ॥ २०० ॥

(कवित्त)

नीलमनि शृंग सों निहारि रनधीर राम,
कह्यो भृगुवीर रघुराज तू कहावे है।
तेहीं कोशलेश को सपूत पूत जेठो अहै,
तेहीं जग माहिं मेरो नाम को धरावे है ॥
तेहीं तोरयो शंभुधनु साँची कहै सौंह कैकै,
नातो जमलोक को तुरंत तेहीं जावे है।
धरि दे धनुष छली छोड़ छोड़ छत्री-धर्म,
तेरे अपराध रघुवंस मिटो जावे है ॥ २०१ ॥

(दोहा)

सुनि भृगुपति के बैन अस दशरथ कँप्यो डराइ।
जोरि पानि पीरो बदन अति दीनता दिखाइ ॥ २०२ ॥

(चौपाई)

तस तस अमरष वढ़त राम के। गुनत अमित अपराध राम के ॥
भूप दीनता, भृगुपति क्रोधू। सह्यो न लषन विचारि बिरोधू ॥
फरकि उठे भुजदण्ड प्रचंडा। कह्यो भरत सों बचन उदंडा ॥
का कहिये कछु कहो न जाई। राम पितहि कहँ रहे डराई ॥

विप्र बदत बहु बढ़ि बढ़ि बाता। सुनि सुनि उपजत क्रोध अघाता॥
देहुँ दिखाय बनाय तमासा। पूरहुँ सकल युद्ध की आसा॥

(दोहा)

लषनहि कोपित जानिकै मंद मंद कह राम।
विप्र बचन सहिबो सदा यही सयानो काम॥२०६॥
परशुराम तजि राम को चितै लषन की ओर।
बोले बैन सरोष अति गहे कुठार कठोर॥२०७॥

(कवित्त)

परशुराम—

देखिये वशिष्ठ यह राज को कुमार खोटो मेरी ओर देखत अनैसे नैन करि करि। कबहूँ सुनी न प्रभुताई मोरि कानन में शठ लरिकाई वस रोसै धनु धरि धरि। मोहि उपजावै कोप लोप निज चाहे होन, वेगही बुझावो रघुराज छोह भरि भरि। ना तो कहीं आज मैं समाज में पुकारि मेरे कोप की कृसानु ह्वैहै कीटही सो जरि जरि॥ २०८॥

लक्ष्मण—

जैसो कोप कीजै तैसो दोप नहिं मेरे जानि हानि लाभ का भयो पुरान धनु तोरे ते। छुवतही टूट्यो नहिं जोर पर्यो रामै नेकु, अबै ना नसाय कछु जुरि जाई जोरेते॥ केते तोरि डारे धनु खेलत सिकारन मैं, कबहूँ न। कीन ऐसो कोप और छोरे ते। रघुराज राजन की रीति नहिं जानौ विप्र करौ कहुँ जाय तप जानो कहे थोरे ते॥ २०९॥

परशुराम—

बालक विचारि तेरे बध को बचाय देहुँ ऐसा विप्र ही न जस जानै जड़ मोहि रे। सुने रघुराजसुत छत्रिन निछत्र-कर परम कठोर मोर परशु ले जोहि रे। सोच बस करै काहे मातु पितुहूं को आज जाय जमपुर में बसेरो करै मोहि रे। ना तो कहे देत हौं कुठार कंठ देत बिना हेत सेत मेत काहे कालकौर होहि रे ॥२१०॥

लक्ष्मण—

जानी हम जानी विप्र तू तो वीर मानी बड़ो फरसो उठाय कै दिखावै बारबार है। अबै रघुवंसिन के रन में न देखे मुख फूँकिकै उड़ावन तू चहत पहार है॥ मारि मारि छोटे छत्री बाढ़्यो गर्व गाढ़ो तोहिं भयो भट भेंट नहिं वीर ; बलवार है। जा दिन निछत्र कीन्ह्यो राम छितिमंडल ,तै ता दिन रह्यो न रामचंद्र अवतार है॥ २११ ॥

जप तप योग याम यमहू नियम व्रत ब्रह्मचर्य्य शम दम विप्रधर्म होइ रे। छोड़ि निज धर्म धर्‍यो छत्रिन को धर्म धनु बान फरसो को धरि आयो कोप मोइ रे॥ हौं तो रघुराजसुत ब्राह्मन विचारि बचो, नातो पुनि चीन्ह न परैगो मुख धोइ रे। विप्रवध अघनाल गावैं मोहि बारे -ख डारें रघुवंसी नाहिं कालहूं को जोइ रे॥ २१२ ॥

(दोहा)

शत्रुशाल तब लपन सों कह्यो वचन कर जोरि।
मैं तोपों रन विप्र को यही अरज है मोरि॥ २१३॥

(कवित्त)

बोल्यो भृगुनाथ कौन तू है? शत्रुशाल अहीं;
काको पुत्र है रे? अवधेश को कुमार हौं।
तू है राम? छोटो बंधु हीं तो रामचन्द्र-दास;
का है तेरे मन में? तो युद्ध को तयार हौं।
काहे काल आयो? कहो काल को बुलायो कौन?
मेरे कर काल मैंही काल के अकार हौं।
भाजै रे समाज छोड़ि; कैसे रघुराज भाजै?
डरै नहिं मोहि? कहा जाति को गंवार हौं॥ २१४॥

(दोहा)

सरल वानि बोले भरत, सुनहु विप्र सिरताज।
तुम दोऊ मानहु कह्यो होइ न कछुक अकाज॥ २१५॥
नाथ तुम्हारे वचनहीं हमको वज्र हजार।
वृथा बाँधि आये धनुष सायक खड्ग कुठार॥ २१६॥
कह वशिष्ट भृगुनाथ सुनु कीजे छमा अगाधु।
बाल दोष गुन गहत नहिं ज्ञानवान जे साधु॥ २१७॥
कह्यो राम रघुकुल-गुरू कहि प्रताप बल मोर।
वेगि बुझावहु बालकन टारहु औरै ठौर॥ २१८॥

(कवित्त)

बहुरि लषन बोल्यो सुजस तिहारो विप्र तुमसे अधिक नहि दूसरो कहैया है। कहत अघाने जो न होहु पुनि भाषौ खूब रसना तिहारी कहौ कौन रोकवैया है॥ भाटही सो भाषौ जस गारी जनि दीजै हमैं ना तो नहिं रैहै फेरि कीरति गवैया है। रघुराज आज रघुवंसी कहवाय कोऊ तिलभरि भूमि ते न भभरि भगैया है॥ २१९॥

(दोहा)

लषन बचन सुनि परशुधर धरयो परशु कर घोर।
कह्यो पुकारि उठाय भुज दोष नहीं अब मोर॥२२०॥
धरत परशुधर के परशु शत्रुशाल धनु धारि।
बढ़ि आगे बोल्यो बचन रिस वस सुरति बिसारि॥२२१॥

(सवैया)

दीन्ह्यो वताइ बिचारिकै विप्र लिहे कुलहरा कर साँस न लेहूं।
मारिकै छुद्रन छत्रिन को अबै विप्र भरो तुव दर्प है देहूं॥
गाढ़ो परयो कबहूं नहिं संगर गाढ़ि अबै द्विजदेव हौं गेहूं।
आय जुरे रघुराज सों धोखे बचौगे नहीं शिवलोक बसेहूं॥२२२॥

(दोहा)

इत पाछे करि राम को ठाढ़े तीनहु बंधु।
परशुराम ठाढ़े उतै धरे परसु निज कंधु॥२२३॥
जानि युद्ध जिय होत तहँ भूपहु-ब्रह्मकुमार।
खड़े भये तब बीच में कीन्हें बचन उचार॥२२४॥

मेरे आगे मोर सुत हतो न भृगुकुल-भान।
मोहि मारि पुनि कीजिये जो कुछ तुव अनुमान॥ २२५॥

(सवैया)

बोल्यो वशिष्ठ सुनो भृगुनायक आप तो देह दया उर छाइये।
जो लरिका लरिकाई करे तो छमा करिकै मन ते बिसराइये॥
श्रीरघुराज खड़े सरनागत आसु अभै करिकै अपनाइये।
आप छमा से छमा धरिहैं नहिं बालक बातन में चित लाइये॥२२६॥

दोहा।

सुनि दोउन के वचन मृदु, दै अनाकनी राम।
बोले रघुपति सों वचन, सुनहु राम अभिराम॥२२७॥

चौपाई।

विश्वकर्म जुग धनुष बनाये। अति उत्तम देवन दरसाये॥
तेहि अवसर त्रिपुरासुर घोरा। भयो दैत्य अतिसय बरजोरा॥
दीन्ह्यो देवन महाकलेशा। गये देव सब जहाँ महेशा॥
हर कहँ आरत वचन सुनाये। बचैं तुम्हारे देव बचाये॥
कह शितिकंठ कोदंड न मोरे। हनौं कौन विधि रिपु बरजोरे॥
तब वह धनुष देव सब दीन्हें। जौन राम तुम खंडन कीन्हें॥
दीन्हे द्वितिय विष्णु कहँ चापा। नाम तासु शारंगहि थापा॥
ले पिनाक हर त्रिपुर सँहारे। हरिहु अनेकन दानव मारे॥
आपुस महँ सब सुर बतराहीं। कौन बली दोउ देवन माहीं॥
कहे पितामह सों अस बानी। हरि हर महँ किहि अधिक बखानी॥

जाय शंभु सों कह करतारा। दानव त्रिपुर कहो किहि मारा॥
विष्णु कहैं हम सर है लागे। मरे तबहिं खल त्रिपुर अभागे॥
शंभु कह्यो सर बिना चलाये। काके लग्यो जाय करि घाये॥
विधि पुनि बहुरि विष्णु पहँ आयो। कहै त्रिपुर सों को जय पायो
विष्णु कह्यो हम त्रिपुर बिदारे। मृषा शंभु निज विजय उचारे
यहि विधि विधि उपजाय बिरोधू। चह्यो लड़ावन कियो न शोधू॥
भयो विरोध क्रोध बस दोऊ। हरि हर लरैं लखैं सब कोऊ॥
तबहिं विष्णु कीन्ह्यो हुंकारा। शंभु धनुष जड़ भयो अपारा॥
तब विधि सुर ऋषि कहे हुलासी। सिवते बली बिकुंठविलासी।
रन महँ जड़ता तासु निहारी। भे उदास धनु महँ त्रिपुरारी॥
देवरात सों कह्यो पुरारी। थाती धरहु नरेस हमारी॥
विष्णु सुन्यो शिव धनु दै डारा। भृगुकुल कमल ऋचीक हँकारा
सोई धनुष दियो धरि थाती। मुनि ऋचीक को गुनि रिपुघाती
अहै ऋचीक पितामह मोरा। भो जमदग्नि तासु पुनि छोरा॥
दियो ऋचीक ताहि धनु सोई। त्रिभुवन विजय करन बल जोई
शस्त्र छोड़ि लै पितु संन्यासा। बैठ्यो आश्रम तजि सब आसा॥
बरबस हरयो सहसभुज गाई। मैं हूं आय खबरि जब पाई॥
काट्यो अर्जुन के भुज सीसा। तासु सहस दश पुत्र बलीसा॥
मेरे बैर पिता कहँ मारे। तब हम दसौ हजार सँहारे॥
गयो न सहि पितुवध कर कोपा। यकइस बार कियो नृप लोपा॥

(दोहा)

मैं कश्यप को बोलि पुनि कीन्ह्यों यज्ञ महान।

छिति मंडल दीन्हेंा सकल कश्यप को करि दान ॥२४३॥
पुनि महेन्द्रगिरि को गयो तहँ तप कियो अभंग।
आयो आसुहि कुपित अब सुनि पिनाक कर भंग ॥२४४॥

(कवित्त)

ताते कहैां सत्य राम मेरो नहीं दूजो काम पिता पितामह ते कोदंड यह मेरो है। लीजिये धनुष सर साजिये चढ़ाय गुन होइ जो घमंड भुजदंडबल ढेरो है॥ विक्रम विलोकि रावरे को रघुराज हम शस्त्र लै उछाह सो बिसारि अवसेरो है॥ छोड़ि छल छंद शुद्ध वीरता अनंद पुनि द्वंद्व युद्ध होइगो हमारो अरु तेरो है॥ २४५॥

भरत दरत रद कोप त्यों करत हद बोल्यो भृगुनाथ सों न ऐसो होन पावैगो। राम बंधु ठाढ़े तीन बाँकुरे समर गाढ़े युद्ध के उछाह वाढ़े जासों भल भावैगो॥ तासों युद्ध कीजे निज बल दिखराय दीजै लीजै सील मानि पकै युद्ध ह्वै आवैगो। जियत हमारे तीनो भाइन के रघुराज रामही की सोंह कौन रामसौंह जावैगो ॥ २४६॥

(सवैया)

बोले प्रकोपित है भृगुनंदन, रे रघुनंदन तैं छलछाई।
भाइन को बरजै न डरै, अरजै इत मोसे करै मुसक्याई॥
बाम है तैंहूं यथा तुव बंधु, करै किन आँखिन ओटहि भाई।
नाहिं तौ देत हैां कंठ कुठार बच्यो अबलैां गुनि बालकताई॥२४७॥

(दोहा)

द्वंद्व युद्ध दे मोहिं अब करि प्रसन्न रन माहिं।
जहँ चाहे तहँ जाय पुनि मोर हेतु कछु नाहिं ॥२४८॥
नहिं मैं, नहीं तेरो पिता, नहिं तेरे कोउ बंधु।'
नहिं तेरो गुरु बाचिहै लखै कुठारहिं कंधु ॥२४९॥

(कवित्त)

लेत गुरु नाम राम भौंह भई बाम अति बोल्यो बलधाम अब कहियो सँभारिकै। लषन सों हारो दोष उनको हमारो गुनौ भनै द्विज मानि हम तूं भनै प्रचारि कै॥ टेढ़ो जानि संका मानि चौथ चन्द्रमा को राहु, ग्रसै नहिं धावै पूर्व पूरन निहारिकै। देखियो हमारो विप्र विक्रम विदित विश्व, अबलौं बचायो बूढ़ो बाह्मन विचारि कै॥ २५०॥

(दोहा)

मोहीं गुरुद्रोही कहत, तोहीं कहत न कोय।
काटि दंत गुरु-सुवन को, जसी जगत में होय ॥२५१॥
आये चढ़ि रन करन को, वीर बापुरे मारि।
परयो न गाढ़ो समर कहुँ, अब तो परी निहारि ॥२५२॥

(कवित्त)

ऐसो भापि मापि राम राम हाथही सों चाप सायक छड़ाय अति चटक चढ़ायो है। चंचला सों चमक्यो चहूँधा चौंध भरयो चख भये सब चकित चितै अचर्य आयो है॥ खैंचत में पैंचत में चपल चढ़ावत में बान के लगावत न काहू को

दिखायो है । देखि रघुराज काज भृगुकुल-दिनराज, ठाढ़ोसो थको सो जको वदन सुखायो है॥२५३॥लाज्योहै सरासनमें सायक अनल पुञ्ज, बोले रघुनायक प्रकोपि चोपि बानी है । खड्ग लै कुठार लै विचार जो तुम्हार होय विक्रम दिखाओ जैसी मति हुलसानी है । वीर ते विहीन तू वसुंधरा विचारयो विप्र छिप्र छत्रि बल को विलोकै वीरमानी है ॥ भनै रघुराज आप विश्वामित्रनातो मानि त्यागतो न तीर जो करैया प्रानहानी है २५४

(चौपाई)

धनु सायक साजे रघुवीरा । बोल्यो वचन मंजु रनधीरा ॥
विप्र विचारि बचायों तोहीं । देखत दया लागि अति मोहीं॥
पै यह वैष्णव धनु को सायक । कबहुँ न मोघ होन के लायक ॥
उभय लोक गति तप करि पाई। जौन कहौ सो देहुँ नसाई ॥
इतना कहत वचन तिहि काला। राम रूप तहँ भयो कराला ॥
परशुराम कहँ उपज्यो ज्ञाना । सत्य सत्य रघुपति भगवाना ॥
अस विचारि भय मानि मुनीसा।गिरयो दंड सम करि पद सीसा॥
पुनि उठि जोरि पानि भृगुराई । ठाढ़ो कछु न सकै मुख गाई ॥
पाहि पाहि त्रिभुवन के स्वामी । मैं द्विज दीन सदा अनुगामी ॥
ताते करिकै कृपा कृपाला । हनहु स्वर्ग गति मोरि बिसाला॥

(दोहा)

बसिहौं जाय महेंद्रगिरि जपिहौं तिहरो नाम ।
सुमिरन करिहौं दिवस निसि रामरूप अभिराम२६०॥

(चौपाई)

भृगुपति वचन सुनत रघुनायक। लागी दया तज्यो निज सायक
हनी स्वर्ग-गति भृगुपति केरी। दीन जानि किय कृपा घनेरी॥

(छंद दंडक)

सर्वपर सर्वहत सर्वगत सर्वरत सर्वमत पूज्य आनंदकारी।
अखिलनायक अमल अखिलदायक सुजस अखिलभायक वपुष मोह हारी॥ जयति रघुराज दिनराजकुलकमलरवि विप्रकृत काज धनु वान धारी॥ भूप दशरथ-सुअन सकल भुवनाभरन करन असरन सरन दुअनदारी॥२६२॥

(दोहा)

अस कहि पदपंकज परसि, परम प्रमोदित राम।
गयो महेंद्राचल चटक, सुमिरि राम अभिराम॥ २६३॥

वधू-प्रवेश

(चौपाई)

चली सैन्य कछु बरनि न जाई। मनहुँ उठी पूरब मेघवाई॥
यहि विधि तहँ वरात हुलसानी। आय अवधपुर कहँ नजिकानी॥
योजन भरि महँ परिगो डेरा। जानि काल्हि दिन परछन केरा॥
तुरत सुमंत दूत पठवायो। खबरि नगर रनिवास जनायो॥
प्रातकर्म करि भोजन कीन्हें। अवध प्रवेस करन मन दीन्हें॥
सजो सैन्य सुंदर चतुरंगा। चले बराती भूपति संगा॥

आतुर सजे अवधपुर बासी। दूलह दुलहिन देखन आसी॥
चले लेन आसुहि अगवानी। सकल पुन्य फल आपन जानी॥
कौशल्यादि तीन महरानी। तिनकी पठई सखी सयानी॥
सुंदरि दधि अच्छत के टीको। दीन्हों राम भाल महँ नीको॥
मनु असुरन ते आसु रिसाई। चस्यो शुक्र शशिमंडल आई॥
लषन भरत रिपुहन के भाला। दधि टीको दीन्हों सब बाला॥

(दोहा)

पुनि दुलहिनि पालकि पटन नेसुक नारि उवारि।
दधि टिकुली देती भई मंजुल पानि पसारि॥ २७०॥
आई सुरभीरज समय कियो वशिष्ठ उचार।
पहुँच्यो बिमल बिमान तब अंतहपुर के द्वार॥ २७१॥

(चौपाई)

मध्य चौक महँ धरयो विमानू। उयो साँझ वेला जनु भानू॥
सजीं आरती थार हजारन। ओली भरी रतन सखि वारन॥
सहित पट्टरानिन कुलदीपा। गयो विमान समीप महीपा॥
पढ़हिं स्वस्त्ययन विप्रन नारी। रानिन विधि दरसावहिं सारी॥
गुरु वशिष्ठ कहँ लियो बुलाई। आगे ठाढ़ कियो सिर नाई॥
गुरुपत्नी अरुंधती आई। मनहुँ पतिव्रत मूर्ति सुहाई॥
कौशल्या कैकयी उचारी। गुरुपत्नी पट देहु उघारी॥
तहँ अरुंधती अतिसुख छाई। निज कर सो पट दियो उठाई॥
गाँठ जोरि तीनहु पटरानी। खड़ो भूप गुरु आयसु मानी॥
बारबार आरती उतारति। पूत पतोहू नयन निहारति॥

(दोहा)

पुत्रबधुन जुत पुत्र लै बैठीं बर दरबार।
सुर सुंदरी समाज लै गावहिं नाचि अपार॥ २७७॥

(चौपाई)

उतै वशिष्ट सहित महराजा। गे बाहर जहँ भूपसमाजा॥
नेउतहरी भूपति सब आये। जथाजोग सब कहं बैठाये॥
देन लगे नृप तिनहिं बिदाई। रथ तुरंग मातंग मंगाई॥
बरनत दशरथ सुजस नृपाला। निज निज देशन चले उताला॥
भूप युधाजित दशरथ स्याला। आयो बिदा होन तिहि काला॥
करि सत्कार अवधपति बोले। बनत न अबै आपके डोले॥
बसे युधाजित भवन बहोरी। कह्यो भूपगुरु बिनती मोरी॥
चलहु नाथ मम संग रनिवासा। देहु दुलहिनिन सुंदर बासा॥

(दोहा)

अस कहि भूप वशिष्ठ लै गयो आसु रनिवास।
मच्यो जहां वैकुंठ सम सुन्दर हास विलास॥ २८२॥
वास्तुकर्म करि भवन को गवन कियो गुरु गेह।
भूप कहन लागे कथा जथा विदेह सनेह॥ २८३॥
पुत्रवधू अरु पुत्र मम सबते प्रान पियार।
औंघाते सुत नींद बस चलहु करहु ज्यवनार॥ २८४॥

(चौपाई)

अस कहि उठीं सकल तहँ रानी। पट नवीन चेरी बहु आनी॥

भोजन बसन पहिरि महराजा। कुँवर समेत महा छबि छाजा॥
शुद्ध सतोगुन सुन्दररूपा। भोजनभवन गयो पुनि भूपा॥
भूप संग बैठे सब भाई। होन लगी ज्यवनार सुहाई॥
सिय-कर सों भूपहि परसावैं। श्वशुर हाथ पुनि नेग दिवावैं॥
करि आचमन उठे नरनाहू। धोइ चरन कर गुनि सुख लाहू॥
बैठे पुरट पीठ महँ जाई। तीनिउँ रानिनि लियो बुलाई॥
कह्यो बदन देखन को चारा। करवाओ लागै नहिं वारा॥

(दोहा)

राजकुमारिन चारिहू रानी आसु लिवाय।
बैठाई भूपति निकट कुलतिय वृद्ध बुलाय॥ २८९॥
कह्यो तुरत कैकयसुता बदन दिखाई नेग।
जनकदुलारी को अबहिं देहु महीपति वेग॥ २९०॥

(कवित्त)

बोल्यो रघुराज राजराज सिरताज सुनो कैसे करौं पूरो काज लाज करि हारौंगो। करतो विचार बार बार मैं खसार-ही सों होत है लचार जिय कैसे निरधारौंगो। भूपन व्रसन गेह गाऊं की चलावै कौन, संपति सकल ढूँढि ढूँढि सुख वारौंगो॥ अवध की साहिबी अमरपति साहिबीहू, तूलिहै न नेक जो अनेक दय डारौंगो॥ २९१॥

(चौपाई)

अस कहि पाय परम अहलादा। दियो महीपति आशिर्वादा॥
पुनि बुलाय तीनिहु पटरानी। कह्यो बुझाय महीपति बानी॥

ये नववधू विदेह-दुलारी। नयन पलक सम करि रखवारी॥
पृथक पृथक दुलहिन लै जाई। निज निज भवन देहु बैठाई॥
ते महलन महं राजकुमारी। निवसत भईं लहत सुख भारी॥
भूप सयनहित भवन सिधारे। गावन हित गायक पगु धारे॥
चारि दंड निसि रहिगै,बाकी। लालसिखा धुनि भय-सुख छाकी॥
उठ्यो भूप सुमिरत भगवाना। रघुपति दरसन को ललचाना॥
तिहिं अवसर नृप दूत पठाई। लियो चारिहू कुँवर बुलाई॥
गये पिता ढिग कियो प्रणामा। पितु आशिष दै लहि मुदधामा॥

भरत का काश्मीर गमन

(दोहा)

आनँद मंगल भाँति यहि रहत अवध महँ रोज।
उदित राम अभिराम रवि विकसित प्रजासरोज॥२६७॥

(छंद चौबोला)

एक समय दशरथ नरनायक बैठ्यो सभा मँझारी।
भाइन भृत्यन सचिव महीसुर संजुत सकल सुखारी॥
गुरु वशिष्ठ तिहि अवसर आये उठी समाज निहारी।
भूपति चलि लीन्ह्यों कीन्ह्यों नति,अपनो नाम उचारी॥२६८॥
सिंहासनासीन करि गुरु को विनय कियो अवधेसा।
तुम्हरी कृपा नाथ पायों सुख मिटिगो सकल कलेसा॥
कह्यो वशिष्ठ भूप तेरे सम रवि ते लगि अरु आजू।

भाग्यवान इक्ष्वाकुवंश महँ भयो न कोउ महराजू॥ २९९॥
तिहि अवसर केकयनरेश को कुँवर युधाजित नामा।
आयो राजराज दरबारे अहै भरत को मामा॥
करि प्रणाम दशरथ को तैसे पुनि बंद्यो गुरु काहीं।
पूछि कुशल कोशलनरेश तिहि बैठायो ढिग माहीं॥३००॥
कह्यो युधाजित भागनेय मम कहँ चारिहु कुमारा।
तिनहिं बुलावहु आसु भूपमनि चहौं विसेष निहारा॥
सुनत स्याल के वचन महीपति पठै सुमंत तुरंता।
भ्रातन सहित राम बुलवायो आयो अति बिलसंता॥३०१
बैठायो अपने आगे तिन बंधु कैकयी केरो।
राम वदन निरखत अनिमिष चख आनँद लह्यो घनेरो॥
हुलसि कह्यो कोशलपति सों अस करी विनय मम माता।
लखन चहौं मैं भरत सुतासुत जाय ल्याइयो ताता॥३०२॥
बहुत दिवस बीते इत निवसत अब अस कृपा करीजै।
भरतहि पठै आसु हमरे सँग सासु श्वशुर सुख दीजै॥
सुनत भूपमनि विरहविवस तहँ कढ़ी न मुख कछु बानी।
भेजत बनत न रोकत बनत न भै दुचितई महानी॥३०३॥
जावनहुँ भरत युधाजित के संग केकयदेश सुहावन।
अपने मातामह को मेरी कहियो नति अतिपावन॥
चंचलता तजि रह्यो रीति महँ मातुल कुल महँ प्यारे।
बहुत बुझाय कहौं का तुमको सब गुन सुखद तुम्हारे॥३०४॥
पितुसासन धरि सीस भरत उठि जनक कमलपद बंदे।

कह्यो बचन मातुल के सँग में जैहौं आसु अनंदे ॥
तिहि औसर उठि शत्रुशाल जुग जोरि पानि अस गाया।
मोहूँ को दीजै निदेस पितु तनु तजि रहति न छाया ॥३०५॥
कह्यो भूप गवनहुँ तुमहूँ उत करन भरत सेवकाई।
रहियो सावधान सब कालहि किहेहु न कछु चपलाई॥
पुनि भुआल-मनि बसन विभूषन रथ तुरंग मातंगा।
दियो सभाजि युधाजित को तहँ बर आयुध बहुरंगा ॥३०६॥

(दोहा)

उठि दशरथ निज स्याल को मिल्यो बारहीं बार।
कीन्हीं बिदा निवेस को करि बहु विधि सत्कार ॥ ३०७ ॥
भरत शत्रुहन उठि तुरत पिता चरन सिर नाय।
पुनि रघुकुलमनि के चरन बंद्यो सीस छुआय ॥ ३०८ ॥
जाय भवन निज जननि को कह्यो प्रसंग बुझाय।
माँगि बिदा पुनि कौशला भवन आसुही आय ॥ ३०९ ॥
कहि प्रसंग सिर नायकै लषनमातु कहँ बंदि।
काश्मीर को चलत भे सानुज परम अनंदि ॥ ३१० ॥

(छंद चौबोला)

जबते गये भरत मातुल कुल तबते लछिमन रामा।
करहिं रोज पितु की सेवकाई पूरहिं जन मन कामा ॥
एक समय सब सचिव महाजन सुहृद सहित सरदारा।
बैठ्यो दशरथ भूप सभा महँ गुरु को आसु हँकारा ॥३११॥
गये वशिष्ठ राजमंदिर महँ नृप नति करि बैठायो।

सुहृद सचिव संमत बिचारि मन गुरु को वचन सुनायो ॥
जो आचारज सासन दीजै तौ अस कारज होई ।
करहिं राम सों विनय प्रजा सब निज निज कारज जोई ॥२१२॥
कह्यो वशिष्ठ राम यहि लायक भूपति भली विचारी ।
पुरजन काज करहिं रघुनायक तुव सासन सिर धारी ॥
सुहृद सचिव सज्जन सराहि सब निज निज संमत कीने ।
हुलसि राजमनि बोलि राम कहं सौंपि काज सब दीने ॥२१३॥
प्रभु सासन सिर धारि रघूत्तम करन काज सब लागे ।
प्रतिदिन पितु सों पूंछि पूंछि सब जथा जोग अनुरागे ॥
साँझ समय पितु निकट आय पुनि अपने महल सिधारैं ।
लषन-सखन-जुत लखत नृत्य नित सुनतगान सुखसारैं॥२१४॥

राम के यौवराज्य का विचार ।

(चौपाई)

मातुल सदन सुअवध बिहाई । जबते गए भरत दोउ भाई ॥
तबते भरत-लषन जननी को । सेवन करहिं राम अति नीको ॥
राम सनेह सील सेवकाई । लखि निज सुत सुधि दई भुलाई ॥
कौसल्या ते दून सनेहू । करत कैकयी बिनु संदेहू ॥
देखि रामगुन कोशलराई । नित नित आनंद लहत महाई ॥
कियो विचार मनहिं महराजा । होइँ अवसि रघुपति जुवराजा ॥
राजकाज सौंपहुं सब रामै । मैं अब जाउँ विपिन तप कामै ॥
तब दशरथ सब सचिव बुलाये । प्रथमहि गुरु वशिष्ट तहँ आये ॥

ओरहु सब महर्षि पगु धारे। भूपति करि प्रनाम सत्कारे॥
भरी सभा दशरथ की भारी। बैठायो भूपति सत्कारी॥
जन जगतीपति अवसर जानी। भन्यो वारिधर धुनि इव बानी॥
सुनहु नृपति सब सचिव प्रधाना। होत मोर अब अस अनुमाना॥
लाग्यो आय चौथपन मोरा। जीवन रह्यो बाचि अब थोरा॥
रामहिं सौंपि राज्य कर भारा। भजौं मुकुंद-चरन निसिवारा॥

(दोहा)

भूप पौरजन, सचिवगन, सज्जन लेहु बिचारि।
उचित होइ तौ आसुही संमत करहु सँभारि॥ ३२२॥

(चौपाई)

जब दशरथ अस बचन बखाना। भयो सबन सुनि मोद महाना॥
उठे बोलि सब एकहि बारा। जनु गर्जेउ घन गगन अपारा॥
भूप करहु जुवराज राम को। नहिं विचार अब और काम को॥
सुनत सबन के बचन बिलासा। दशरथ बहुरि बचन परकासा
राम होहिं जुवराज प्रवीने। सुनतहि सब सम्मत करि दीने॥
तब वशिष्ठ अरु सचिव सुमंता। सबकी रुख गुनि कहे तुरंता
भयो न है नहिं होवनहारा। अवधनाथ जस कुँवर तुम्हारा॥
राम सत्य सतपुरुष-सिरोमनि। सत्यबचन पालक धरनी धनि
त्रिभुवन राज्य करन के लायक। महि मंडल न फबत रघुनायक॥
ताते अब नहिं करहु बिलंबा। राउर लाल भुवन-अवलंबा॥
यौवराज्य कीजै अभिषेका। होइ विश्व उपकार अनेका॥
सुनि वशिष्ठ के बचन सुहाये। एकहिं बार सभासद गाये॥

(दोहा)

रामहिं दै जुवराज-पद करहु भूप विश्राम।
हम सब को अब कालिहहीं, होय पूर मनकाम॥ ३२६॥

(चौपाई)

सुनि गुरु वचन भूपमनि हर्षे। बारहिंबार नयन जल वर्षे॥
गद्गद गर बोले मृदु बानी। परम भाग्य आपन हम जानी॥
प्रगट्यो पूरब पुण्य प्रभाऊ। जेठ कुँवर पर सबकर भाऊ॥
अस कहि नृप उठि परम अनंदी। बोल्यो गुरु पद पंकज बंदी॥
प्रजा प्रकृति परिजन सुखभीजे। कहत राम अभिषेक करीजे॥
चैत मास यह परम सुहावन। कालिह पुष्य नच्छत्रहु पावन॥
इतनी सुनत भूप की बानी। जय ध्वनि भै दरबार महानी॥
दिय वशिष्ठ सासन नृप आगे। रहे जोरि कर सब अनुरागे॥
तुम सुमन्त साजहु सब साजू। सुवरन रत्न औषधी आजू॥
करौ नगर उत घोष अनेका। होत भोर रघुपति अभिषेका॥
अस वशिष्ठ मुनि परम प्रवीने। उचित और सासन सब दीने॥
कह्यो भूप सों पुनि मुनि बानी। सासन दियो सचिव सब आनी॥
रहहु सुचित नृप होत प्रभाता। होय राम अभिषेक विख्याता॥
सचिव राम कहँ ल्याउ लिवाई। पेखन चहहुँ भवन सुखदाई॥

(दोहा)

पिता सचिव आवत निरखि, उठ्यो भानुकुलभान।
मर्यादा-पालक प्रबल राम सरिस नहिं आन॥ ३२७॥

(चौपाई)

करि प्रनाम मंत्री कर जोरी। कीन्हीं विनय महा सुखबोरी ॥
चलहु कुँवर महराज बुलायो। आप लिवावन मैं इत आयो ॥
सुनत पिता रजाय रघुराई। चले लषन कर गहि अतुराई ॥
देख्यो पिता सभा रघुराजू। बैठे देस देस के राजू ॥
करहिं सभासद उठि अभिवंदन। पानि उठाय लेत रघुनंदन ॥
पिता समीप लषन रघुनाथा। परसि भूमि जोरे जुग हाथा ॥
आपन आपन नाम सुनाई। किये प्रनाम लषन रघुराई ॥
उठि नरेस उर लियो लगाई। मानहुं गयो मनोरथ पाई ॥
मंडित कनक मनिन सिंहासन। दिय सासन कीजे सुत आसन
परमासन सोभित प्रभु ठयऊ। उदय उदयगिरि रवि जनु भयऊ॥

(दोहा)

होय सुखद जुवराज पद को अभिषेक तुम्हार।
सभ्य पौर मंत्री नृपति गुरुजुन किये विचार ॥ ३४३ ॥

(चौपाई)

सकल गुनाकर जानि उदारा। सौंपहुं तुमहिं राज्यकर भारा ॥
इन्द्रियजित रहियो सब काला। सब सों राखहु विनय विसाला।
आपन राज्य और पर राजू। लै सुधि सकल किह्यो सब काजू।
किह्यो कोप संचित धन भूरी। आयुध सकल रहैं नहिं दूरी ॥
राजनीति राजन को रामा। देवन जथा सुधाप्रद कामा ॥
कालिह सौंपि तुमको सब राजू। मैं करिहौं परमारथ काजू ॥
रघुपति सुनत पिता की बानी। बोले वचन विनय रस सानी॥

दियो तात जिहि भांति रजाई । करिहौं सकल भाँति मन लाई॥
सुनि भूपति प्रसन्न अति भयऊ । जाहु भवन अस सासन दयऊ॥
पितुपद बंदि चले रघुनाथा । गहे पानि लछमन कर हाथा॥
सुहृद सखा जे संग सिधारे । सुने बचन जे नृपति उचारे ॥
कौशल्या के भवन तुरंता । गवन किये मोदित मतिवंता ॥
सकल जथाक्रम खबरि बखाने । राम होहिं जुवराज बिहाने ॥
सभाभवन ते उठ्यो नरेसा । गहि सुमंत कर चल्यो निवेसा॥

(दोहा)

घर घर बाज बजायके प्रजा करहिं सब गान ।
सुखद राम जुवराज पद होईहि होत बिहान ॥ ३५१ ॥

(चौपाई)

निसा सिरानि भयो भिनुसारा । सजत सजावत पुरी अपारा ॥
द्वार द्वार महँ तने बिताना । सुर मंदिर पूजन सबिधाना ॥
तोरन ध्वजा रंभ के खभा । भरे कनक कमनीय सुकुंभा ॥
धनिक धनदसम अवधनिवासी। रचे दुकान मनोहर खासी ।
पुर बाहर जहँ लगि अमराई। दिये निसान उतंग बँधाई ॥
गावहिं मंगल गीत सुहावन । बाज बजावहिं बिबिध उरावन ॥
जुरि जुरि थल थल महँ पुरवासी । रामकथा सब कहहिं हुलासी
चलहु चलहु अब भूपति द्वारे । लखहु राम अभिषेक सुखारे ॥
यही सोर सब पुर महँ छायो । देस मनुजगन देखन धायो ॥
सुर नर मुनि जे जे सुनि पाये । प्रभु अभिषेक बिलोकन धाये ॥

(दोहा)

होत राम जुवराज पद, भरिगो भुवन उछाह।
और सबै मोदित भये दुखो भयो सुरनाह ॥ ३५७ ॥
कैकेयी की दासिका रही मंथरा नाम।
धूम धाम सुनि नगर महँ चली विलोकन काम ॥ ३५८ ॥

राम–वनगमन

(छंद चौबोला)

चढ़ी उतंग चंद्रसाला महँ लखी अजोध्या नगरी।
पूरित फूलन गली बजारहु सींची सौरभ सिगरी ॥
भवन अलंकृत ध्वजा पताके फहरि रहे चहुँ ओरा।
खेरभैर मचि रह्यो नगर महँ सुर पूजन सब ठोरा ॥३५९॥
रघुपति के धात्री ते पूँछो कहा होत पुर माहीं ?
राम-जननि रानी कौशल्या देति वित्त सब काहीं ?
कह्यो राम धात्री न सुने तैं होत राम जुवराजू।
करत कालिह अभिषेक भूपमनि सौंपन सिगरी राजू ॥३६०॥
सुनि पापिनि मंथरा दुखित ह्वै गई कैकयी नेरे।
तिहि जगाय अस कह्यो बैठि कस परै न लखि दृग हेरे ?
केकै देस पठै भरतहि नृप करहिं राम जुवराजू।
ह्वैगो सकल सुहाग भंग तुव भइ चेरी सम आजू ॥ ३६१ ॥
सुनत कैकयी कह व्याकुल ह्वै दे अनुमति कछु मोहीं।
कह मंथरा भूप दीन्ह्यो दुइ बर पूरब जो तोहीं ॥

क्रोधभवन चलि माँगि ठानि हठि देहैं नृप सतिवादी।
चौदह वर्ष वसैं वन रघुपति लहै भरत नृपगादी ॥ ३६२ ॥
सुनि कैकयी क्रोधगृह गवनो आये जब महिपाला।
मरन ठानि मॉग्यो मुख द्वै बर भूपति भये विहाला॥
बोलि राम कहं कह्यो जान वन रघुपति अति सुखमाने।
सीता लखन समेत चले वन हर्ष विषाद न आने ॥३६३॥
शृंगवेर पुर वसे जाय प्रभु मिलिकै सखा निषादै।
उतरि गंग पहुँचे प्रयाग महँ दियो मुनिन अह्लादै ॥
भरद्वाज को मिलि पुनि रघुवर जमुना उतरि अनंदे।
वाल्मीकि के आश्रम आये विनय सहित पद वंदे ॥
वसे विचित्र चित्रकूटहि पुनि पर्नकुटी रचि नीकी।
लह्यो महासुख सहित लषन सिय अवधपुरी भै फीकी ॥
राम बिरह विलपत आधी निसि भूपति तज्यो सरीरा।
केकयपुर ते भरत बुलायो गुरु वशिष्ठ मतिधीरा ॥ ३६५ ॥
समुझायो बहु राज करन को भरत कियो नहिं राजू।
चल्यो चित्रकूटहि मातन लै वसत जहाँ रघुराजू॥
शृंगवेरपुर मिलि निषाद सों पहुँचे भरत प्रयागा।
पाँव पयादे चलत पंथ महँ भरे राम अनुरागा ॥ ३६६ ॥
सत्रुसाल जुत तीर्थराज महं भरद्वाज कहँ देखे।
तिन अनुमति चलि चित्रकूट महं देखि राम मुद लेखे ॥
बहु विधि कियो विनय लैाटन हित जनक भूप तहँ आये।
तेऊ बहुत भाँति समुझायो राम न कछु चित लाये ॥३६७॥

पितुपन पालनहेत कृपानिधि देवन काज बिचारे ।
दै पादुका बिदा करि भरतहि आप विपिन पगु धारे ॥
सानुज भरत नंदिग्रामहि चलि वसे वेप मुनिधारी ।
राम अत्रि अनसुइया आश्रम गये प्रमोद बिसारी ॥ ३६८ ॥

अनसुइया दिय सियहि सिखापन पट भूपन पहिराई ।
मुनि सों विदा माँगि रघुनायक चढ़े सैल सुख पाई ॥
मिल्यो भयंकर तब मारग महं दानव आय बिराधा ।
ताहि मारि महि गाड़ि दीन अति मेटी सुर मुनिबाधा ॥३६९॥

कहुं दस मास कहूं त्रय मासहु सात आठ कहुं मासो ।
चित्रकूट ते मुनि आश्रम लगि कीन्हें राम निवासो ॥
एक समय पुनि बहुरि सुतीछन-आश्रम में प्रभु आये ।
विदा माँगि मुनि ते अगस्त्य के आश्रम गे सुख छाये॥३७०॥

मारग महं अगस्त्य भ्राता सो करि तिहि नाथ सुखारी ।
कुंभज कुटी जाय रघुनंदन प्रनए पानि पसारी ॥
कुंभजोनि शारंग दियो धनु तथा अखंड निषंगा ।
पंचवटी महँ वसन हेतु मुनि दियो निदेस अभंगा ॥३७१॥

खर-दूषण-वध

पंचवटी महं पर्नकुटी रचि बसि सिय जुत दोउ भाई ।
चलित विनोद बिहार करत बहु दिय द्वै वर्ष बिताई ॥
रावन की भगिनी सूपनखा एक समय तहं आई ।
कोटि मदन मद मारक मूरति लखि सो रही लुभाई ॥३७२॥

जाय समीप करन रस बस महँ कही मनोहर बानी।
दियो लषन कहं नाथ इसारा सीता भीता जानी॥
नाककान बिन कियो लषन तिहि काढ़ि कराल कृपानी।
बूची नकटी पंचबटी ते भगी महा भय मानी॥३७३॥
ताके बंधु बली खर दूषन त्रिसिरा लखि भगिनी को।
चौदह सहस निसाचर लै संग आये पंचबटी को॥
राखि गुहा महं लषन सहित सिय समर हेतु सजि रामा।
करि कोदंड घोर टंकोरहि कियो सजुग संग्रामा।३७४॥

(दोहा)

कीन समर अति प्रखर खर अग्निबान तजि राम।
खड़कि खाख खर को कियो पूरे सुर-मुनि-काम॥ ३७५॥
खर दूषन अरु त्रिसिर को जरत धूम दृग जोय॥
रावन आगे लंक महं परी सुपनखा रोय॥ ३७६॥

सीता-हरण और बालि-वध

(छंद चौबोला)

सुनत लंकपति भयो कुपित अति गयो मरीच नगीचा।
कह्यो ताहि सासन करु मेरो तैं मम अन्नहिं सींचा॥
है माया कुरंग संगहि चलु जनस्थान महं आजू।
राजकुँवर दशरथ के आये कीन्ह्यो मोर अकाजू॥३७७॥
अस कहि लै मारीच संग रावन दंडकवन आयो।
इत एकांत जानकी को लै राम बचन मुख गायो॥

याही हित हमहूं अरु तुमहूं लियो मनुज अवतारा।
अब तुम बसहु अग्नि महँ जब लगि हरौं भूमि कर भारा॥३७८॥
प्रभु-निदेस सुनि पावक प्रविसी प्रमुदित जनककुमारी।
छायारूप कुटी महं राख्यो देवन हेतु बिचारी॥
बनि माया कुरंग मारीचहुँ छायासियहि लुभायो।
धरि रघुबर धनुधर धनु सर कर हरवर मृग पर धायो॥३७६॥
जती वेष रावन इत आयो छाया रूप सिया को।
लै हरि चल्यो लंक धरि स्यंदन गीधराज लखि ताको॥
'ठाढ़ो रहु ठाढ़ो रहु' अस कहि मारि खरन रथ टोरयो।
लिय छुड़ाय छायाबपु सिय को दसकंधर मुख मोरयो॥३८०॥
चल्यो गगनपथ छायाबपु लै राख्यो लंकहि जाई।
इतै कपटमृग मारि लषन जुत लौटे द्रुत रघुराई॥
कुटी सूनि लखि हेरत बन बन गवने दच्छिन नाथा।
मनहुँ बिकल अति विलपत पद पद चले लषन प्रभु साथा॥
कछुक दूर आगे चलि रघुपति बिकल बिहंग निहारयो।
कृपानिधान जटायु अंगरज निज जटानि सों झारयो॥
प्रभुपद परसि गीध तनु त्याग्यो निज हाथन करि करनी।
गीधराज कहं दई राम गति वेद पुरानन बरनी॥३८२॥
चले कछुक लखि अजामुखी राक्षसी भयानक रूपा।
कान नाक कुच काटि लषन तिहि कीन्हों बिकल विरूपा॥
पुनि कबंध जोजन भुज पासहि परे लषन रघुराई।
कियो बाहु जुग खंड खड्ग सों दीन्हों साप मिटाई॥३८३॥

सो सबरी सुग्रीव सीय की दीन्हों सुरति बताई।
आये प्रभु पंपासर सानुज सबरी देखन धाई॥
ऐहैं प्रभु यहि हित सबरी फल चीखि चीखि धरि राख्यो।
सबरी कुटी जाय रघुनंदन प्रेमबिबस फल चाख्यो॥३८४॥
दै सबरी को गति कोसलपति चलि पंपासर आगे।
बिप्ररूप मारुतसुत मिलिके कपिपति सों अनुरागे॥
करि अविचल सुग्रीव मित्रता सीत दुखी जिय जानों।
एकहि बान बालिबध कीन्हों सप्तताल करि हानी॥३८५॥
राजा तहँ सुग्रीव बनायो करि अंगद जुवराजू।
वर्षा बसे प्रवर्षन हर्षन वर्ष बितावन काजू॥
पावस की पूरन सोभा लखि ह्वै सरद ऋतु आई।
सुरति दिवावन को सुग्रीवहि दीन्हो लषन पठाई॥३८६॥
गवन्यो सखा समीप सुकंठहु कपि-वाहनी बुलाई।
चारि दिसन छाया सिय हेरन पठयो कपि समुदाई॥
जाम्बवान अंगद हनुमानहु दच्छिन दिसि कहं धाये।
प्यासे प्रविसे स्वयंप्रभा बिल तिहि प्रभु पास पठाये॥३८७॥
तासु प्रभाव गये सागर तट संकित भे सब भाँती।
तहं तिनको सब खबरि बतायो आय गीध संपाती॥

हनूमान का लंका-गमन

दोहा।

जांबवान तब रिच्छपति कीन्हों मनहिं बिचार।

हनूमान कहँ मुद्रिका दीन्हों राजकुमार ॥३८८॥
पवनपूत पूरन प्रबल करिहै अवसि पयान।
अस बिचारि बोल्यो बिलखि कस बैठे हनुमान ॥३८९॥
लिये निसानी देन को सुचित बैठ किहि हेत।
कस न कूद सागर सपदि सिय सुधि ल्यायन देत ॥३९०॥

(कवित्त)

वचन निबेरे रिच्छपति के घनेरे सुनि बाढ़े बीर रंग के उमंग अंग तेरे हैं। नयननि को फेरे औ तरेरे दिसि दच्छिन से भुजन को हेरे त्योंही पूछ को मुरेरे हैं॥ मानि लंक नेरे है निसंक महाबीर टेरे मारि करौं ढेरे भट लंकापति केरे हैं। राम केरे शारँग ते चलैं प्रेरे सायक ज्यों जैहों लंक सुनौगे सवेरे गुन मेरे हैं॥ ३९१॥

(दोहा)

बपु बढ़ाय ऐंड़ाय कपि भयो प्रलय रवि रूप।
कीन्हो सोर कठोर अति प्रलय जलद अनुरूप ॥३९२॥

(कवित्त)

चल्यो लंकनगर को मारुत डगर ह्वैकै मारुत को नंद मारुतै की गति धरि कै। दूजो मार्तंड सों अकास में प्रकास-मान, मार्तंड डरि भाग्यो ग्रसिवो विचारिकै॥ फूलन झरत फूले फूले तरु संग उड़े, चले पहुँचावैं मनो बंधु सोक टारिकै। रघुराज मोद छाये दुंदुभी बजाये देव, जै जै कहि गाये राम-दूत को निहारिकै ॥३९३॥

(दोहा)

नाँघि सिंधु सत जोजनै पार जाय कपिराय।
चल्यो सीय खोजन द्रुतै अति लघु रूप बनाय॥ ३६४॥

(कवित्त)

करत प्रवेस देख्यो लंकपुरी नारी वेस द्वार में हमेस रहै रच्छन के हेत है। बोली कहां जैहै कीस कौन अहै तेरो ईस, कौन तोहि भेज्यो दससीस के निकेत है॥ सुन्यो सुनि ताके बैन ह्यांके प्रगटे बनै न हनी वलऐन मूठो गिरी सो अचेत है। उठि कर जोरि कही कपि सों निहोरि जान्यो ऐहै लंकईस खेत बंधुन समेत है॥ ३६५॥

सी को त्यों असोक बाटिका में जाय देख्यो कपि मेघन के मध्य ससीरेखा सी सुहाई है। मैलते सहित मानो कंचन की लता लोनी अंक लपटानी ज्यों मृनाली दरसाई है॥ हंसहि विहाय बायसीन मध्य मानो हंसी सिंह के वियोग सिंहनी सी बिलखाई है। देखि कपिराई हिय मानि सुचिताई मेटी उवै दुचिताई चढ़ि बैठ्यो तरु जाई है॥

जानकी उतारि दीन्हीं चूड़ामनि हनुमानै, कैकै सो प्रनामै फल खानै मन आन्यो है। कह्यो जो निदेस पाऊँ छुधा को मिटाऊँ खलगन बिलखाऊँ मातु ऐसो ठीक ठान्यो है॥ सुनिकै दियो असीस भावै सोई करौ कीस चीस विसे तोसे नहिं उन्नदन में मान्यो है। सीय पद वंदनकै बाटिका निकंदन को चल्यो वायुनंदन अनंद अति सान्यो है॥३६७॥ नैनन निहारे

सबै वाटिका उजारे हनुमंत को हँकारे बलवारे रखवारे हैं। आयुधनि धारे निज नाथ के प्रचारे ते वे सक अनियारे एकै वारहीं पवारे हैं॥ तिनहि बिसारे गृह खम खचि भारे भारे महावीर रोप धारे मारि तिन्हैं डारे हैं। रघुराज मोद देनवारे राम जै उचारे कूदिकै सिधारे द्वार केसरीदुलारे हैं॥३९८॥

(दोहा)

सुनि दससिर दंतनि दरत किंकर असी हजार।
पठयो निज सम बल प्रबल जहँ रह पवनकुमार॥३९९॥
खंड खंड किय दंड महँ मारुति प्रबल प्रचंड।
पुनि प्रहस्तसुत मंत्रिसुत पठयो समर परिवंड॥४००॥
अग्रगन्य पुनि सैन्य के पंच महा बलवान।
अमरपि पठयो लंकपति धाये मग असमान॥४०१॥
पंच अग्रगंता सयन मारयो पवनकुमार।
पठयो दशकंधर तुरत मानो अक्षकुमार॥४०२॥

(कवित्त)

गयो उड़ि आसमान हनूमान देखि सोऊ कियो है पयान चढ़यो जान जातुधान है। बल को सम्हारि कियो तल को प्रहार कपि घोड़े मरि गिरे चारि टूट्यो आसु जान है॥ दपटि सो तेग धारि झपटि कीसौ प्रचारि पटकि दियो है भूमि गयो ताको प्रान है। निपट निसंक बंक लंक मे अतंक छोड़ि आइ बैठ्यो तोरन तुरंत तेजवान है॥४०३॥

(दोहा)

सुनि कपीस की जीति रन इन्द्रजीत कहँ बोलि।
जग राव्रन रावन तुरत पठयो आसै खोलि ॥४०४॥
अस्त्र सस्त्र निज मोघ लखि इन्द्रजीत अति कोपि।
तज्यो अमोघहि ब्रह्मशर कपि बाँधन चित चोपि ॥४०५॥
मानि ब्रह्मशर कपि प्रबल दिनहूँ देखन लंक।
अपनेहीं सों बँधि गयो कियो न मन कछु संक॥
बाँधि पवनसुत लै चल्यो पिता निकट घननाद।
सुनि रावन आन्यो तुरत सभा पाइ अह्लाद॥

(कवित्त)

देखि लंकनाथ को निसंक कपि बोल्यो बैन छोड़ि धर्म कीन्ह्यो है अधर्म कर्म भारी तू। जनस्थान जाइकै लुकाइकै चुराई सठ लाजहिं बिहाइ हरि ल्याइ परनारी तू॥ भयो जो सो भयो अब जनकसुता को लये प्रभु पाँय आसु परै दंत तृनधारी तू। सकै नहिं राखि बिधि हरिहर राम द्रोही मारि जैहै हठि सीख मानि ले हमारी तू ॥४०८॥

सुनत सकोप दशकंठ कह्यो बीरन सों सुनत कहा हो बेगि कीस बधि डारो रे। उठते भटन बैन बोलत बिभीषन से दूत है अवध्य बैठो सकल गवाँरो रे॥ नीति निरधारी नहिं मारो नाथ दूतै कोपि इनसों उचारो अंगभंग करि डारो रे। मानि लंकराय अतुराय या रजाय दीन्ह्यों पावक लगाय याकी पूँछि प्रिय जारो रे ॥४०९॥

पाइ अनुसासन दसानन को छपाचार बीरन को ल्याये जे हैं जीरन बनाइके॥ लूम में लपेटि ताहि दीन्ह्यो है बढ़ाइ कपि बसन न बाचे कहूं तब ते रिसाइके॥ तेलहि सिचाइ पुनि पावक लगाइ दीन्हें, नगर फिराये सबै बाजन बजाइके। आगि अवलोकि लागि कोपरस पागि घोर, परिघ उठाइ लीन्हों बंधन छुड़ाइके॥ ४१०॥

कोरि कोरि खलन के मुंडन को फोरि फोरि, दौरि दौरि खोरि खोरि खलल मचायो है। करि करि कोप कूदि कूदि केसरीकिशोर कंचन कँगूरन में कालहीं सो आयो है॥ घरन घरन घुसि घुसि घूमि घूमि घोर शोर करि चहूं ओर पावक लगायो है। कोई नहि बल बच्यो लंक हलकंप मच्यो कहा या बिरंचि रच्यो यही रव छायो है॥ ४११॥

बार बार होलिकै सी लंकै खूब जारि जारि, चाय सों प्रचारिकै कै महाघोर किलकारि। दीरघ दिवालन बिदारि खंभऊ उखारि,दोऊ कर धारिधारि अरिन को मारि मारि॥ जस विस्तारिकै खरारि को हिये सम्हारि, पूछ को बुझायो वारिनिधि वारि झारिझारि। बांदिकै सिधारि सिर नाइ सीय सोक टारि, केसरीकुमार पार चल्यो राम जै उचारि॥४१२॥

चढ़िके गिरंदै पाँव मसकि कपिंद कूद्यो, शैल गो पताल वायुलोल आयो पार है। नाद को सुनाइ अंगदादिन को मोद छाइ, बैठो आइ सीस नाइ कीसन मँझार है। जानकी निहारि आयो कह्यो लंक जारि आयो मारि आयो रावन के बीर बेशुमार है।

सुनि हरपाइ सबै जीवन सों पाइ तहां उठि उठि धाइ धाइ भेंटे बार बार हैं ॥ ४१३ ॥

आगे करि हनूमान चले बलवान सबै, आइ मधु कानन में कीन्हें मधुपान हैं। दधिमुख कीस को कहा न माने मोद साने अतिहि अघाने पुनि कीन्हें ते पयान हैं ॥ आये कीसनाथ पास परम हुलास छाये, पौनपूत कियो काज कीन्हें या बखान हैं। मिलिके सुकंठ तिन्ह अति उतकंठित ह्वै गौने तहाँ जहाँ बैठे भानुकुल भान हैं ॥ ४१४ ॥

देखत ही केसरी-किसोर कर जोरि दौरि, परि प्रभु पाँयन में बोल्यो योहीं बैन है। जनकसुता को देखि आयों वाटिका में बैठी, रावरे प्रतापही ते देख्यो खल-ऐन है ॥ चूड़ामनि दैकै कह्यो फटिकसिला की बात, आपही को नाम जपि काटै दिन रैन है। बानन सों मारिये दशानन को चलि नाथ, सीता दुख एक मुख कहत बनै न है ॥ ४१५ ॥

लंका पर चढ़ाई

(दोहा)

पवनसुवन के वचन सुनि, रघुपति कियो विचार।
विजय मुहूरत आज ही, चलौ लगै नहिं वार ॥ ४१६॥

(छंद चौबोला)

अस विचारि पुनि उठि रघुनायक मिले पवनसुत काहीं।
बोले वचन नयन जल ढारत तुहिं सम कोउ जग नाहीं ॥

तोसे कबहुँ उऋन होबे को मोर न होत विचारा।
ह्वै नहिं सकै जन्म भरि मोसों तेरो प्रतिउपकारा ॥ ४१७॥
अस कहि बोलि कह्यो कपिराजहि अब वाहिनी चलायो।
सिंधुतीर फल फूल थलित बन डेरा सैन्य डरायो॥
सुनि प्रभु सासन परम हुलासन सासन सुगल सुनायो।
जयति राम कहि दिसि दच्छिन को कपिवाहिनी चलायो ॥४१८॥
बसत पंथ प्रभु चारि दिवस महँ गये तोयनिधि तीरा।
डेरा करवायो दै सासन कपिदल को रघुबीरा॥
उतै गयउ जबते मारुतसुत जारि निसाचर नगरी।
तबते कहँ नारि सिगरी तहँ बनी बात अब बिगरी ॥४१९॥
रावण मंत्रिन सकल बुलायो करन मंत्र तहँ लाग्यो।
इंद्रजीत आदिक तहँ बैठे कुंभकर्णहूँ जाग्यो॥
देन लगे मंत्री अनुमति अस कपिन भीति नहिं भीजैं।
मर्कट मनुज अहार हमारे लखत बेचारे छीजैं ॥४२०॥
बोल्यो तहां विभीषण बानी सुनहु निशाचरराजा।
काल विवस भाषत सिगरे सठ होई अवसि अकाजा॥
सुनत दशानन सोनित आनन छाय दिसानन शोरा।
बोल्यो वचन अरे कादर तू भयो बंधु कस मोरा ॥४२१॥
परुष वचन सुनि दशकंधर को उठ्यो विभीषण कोपी।
चारि सचिव लै संग गगन ते कह्यो वचन चित चोपी॥
मैं अब जाहुँ जहां रघुकुलमनि दूसर नाहिं दिखाई।
अस कहि चल्यो विभीषण नभपथ सिंधु पार द्रुत आई ॥४२२॥

कह्यो गगन ते आहि आहिं प्रभु मैं रिपुबंधु विख्याता।
होहुँ सरन रावरे कृपानिधि तुम मेरे अब त्राता॥
सुनत राम सब सचिव बुलाये कहहु मंत्र का होई।
निज निज मत तहँ कह्यो विभीषण आवत मैं सब कोई॥४२३॥
बोले प्रभु सब सुनहु मोर मत यामें नहिं संदेहू।
एक बार जो कहत तोर मैं ताहि अभय करि देहूँ॥
अस कहि पठे लषन करुनाकर लियो विभीषण आनी।
लंकराज को राज तिलक करि दियो बंधु सम मानी॥४२४॥
रचहु सेतु सागर महँ लै कपि अति आसुहि दोउ बीरा।
सुनि सासन रघुनायक को तहँ अङ्गदादि रनधीरा॥
तरुन गिरिनगन महा सिलागन ल्याये आसु उखारी।
पांच दिवस महँ सत जोजन लों रचे सेतु अति भारी॥४२५॥
चली सैन्य कछु बरनि जाति नहिं नभ सागर उपमाई।
बानरेस लंकेस उभय दिसि और बीर समुदाई॥
सिंधु पार बानरीबाहिनी पहुँची सैल सुबेला।
डेरा परे लंक परिखा छ्वै अरु छ्वै सागरवेला॥४२६॥

लंका दुर्ग को घेरना

(छंद चौबोला)

इतै राम अरु लषन बैठि सब मंत्रिन तुरत बुलायो।
पवन-सुवन अरु ऋच्छराज दशकंठ-अनुजहू आयो॥

कपिकुलराज वालिनंदन नल नीलादिक उतसाही ।
सब सों कह्यो राम भाषहु अब समय उचित का चाही ॥४२७॥
भन्यो विभीषण आतु सचिव मम आय लंक ते भाख्यो ।
रावनहूँ चारिहु द्वारन रच्छन हित राक्षस राख्यो ॥
सुनत विभीषण वचन अवधपति कियो सैन्य को भागा ।
कह्यो नील सेनापति के तुम जाहु पूर्व बड़भागा ॥४२८॥
दच्छिन दिसि महँ सावधान अति गवनैं वालिकुमारा ।
वैसहिं कपिन सैन्यजुत पश्चिम गवनैं पवनकुमारा ॥
हम लछिमन लंकापति कपिपति रहिहैं उत्तर द्वारा ।
अस कहि चले सैन्य लै रघुपति चढ़े सुवेल पहारा ॥४२९॥
कह्यो लषन सों पुनि रघुनायक होत अमित उत्पाता ।
जानि परत राक्षस वानर को ह्वै है समर निपाता ॥
अस कहि उतरे सैल सुवेलहि सैन्यसहित रघुराई ।
हनुमत अंगदादि वानर सब गये लंक नियराई ॥४३०॥
जिनको जिनको चारिहु द्वारन प्रथम लगायो रामा ।
ते ते कपिवर तीन वाहिनी लै गवने तिन ठामा ॥
घेरि गई लंका चारिहु दिसि पवन कढ़न गति नाहीं ।
कोटिन कोटि ऋच्छ अरु वानर बढ़त क्रमहि क्रम जाहीं ॥४३१॥
यहि विधि लंका के मुर्चा करि मंत्रिन राम बुलाई ।
कियो मंत्र अंगद पठवन को साम करन रघुराई ॥
वालिकुमारहि बोलि कह्यो प्रभु लंक जाहु रनधीरा ।
कहँ लगि कहौं बुझाय चतुर तुम जानत निज पर पीरा ॥४३२॥

रावण-अंगद-संवाद

कूदि गयो कपि एक फलंका लंका के दरवाजा।
लखी निशाचर सभा प्रभा भर राजत रावण राजा॥
बैठ्यो तमकि मध्य कपि कुंजर मार्तंड इव भासा।
कह दशशीश कौन तैं बंदर आयो किमि मम पासा?॥४३३॥
अंगद कह्यो चह्यों तेरो हित मैं आयों इत धाई।
नायक अखिल ब्रह्म-अंडन के परब्रह्म रघुराई॥
लंक राज दीन्ह्यो रघुनायक बोलि विभीषण काहीं।
राम-सरन बिन तोहिं दशानन कतहुँ ठिकाना नाहीं॥४३४॥
मेरे पितु की रही मिताई तोसे स्रवन सुनी मैं।
आयों तोको वेगि बचावन तुव हित हेत गुनी मैं॥
विधि वरदान विवस दर्पित ह्वै किय सुर मुनि अपकारा।
लहन चहत फल तासु आसुही करिले मनहिं विचारा॥४३५॥

(दोहा)

वालिसुवन के वचन सुनि, कह दशवदन रिसाय।४३६॥
को तैं को तेरो पिता, राम लषन को आय?॥

(तोमर छंद)

कानन सुन्यों यक कीस। रह वालि वानर ईस॥
जो वालिसुत तैं होइ। तो दई कुल की खोइ॥४३७॥
कहु कहु कुसल कहँ वालि। सो रह्यो अति बलसालि॥
तब कह्यो वालिकुमार। जिन करहु मनहिं खभार॥४३८॥

दिन दशक बीते जाय । पूँछेहु सकल कुसलाय ॥
जस कुसल राम-विरोध । सोइ करी सकल प्रबोध ॥४३६॥
सुनि बालिसुत के बैन । खल भन्यो सोनित नैन ॥
गुनि दूत देत बचाय । नहिं बसत जमपुर जाय ॥४४०॥
कह बालिसुत तब बैन । तैं सत्य धर्महि ऐन ॥
परनारि चोरी कीन । सुर मुनिन अति दुख दीन ॥४४१॥

[त्रोटक छंद]

दसभाल भन्यो तिहि काल सुनो । जग जाहिर विक्रम मोर गुनो ।
जग रावण हैं दस बीस नहीं । भुज को बल जानत देव सही ॥
तब अंगदहू हँसि बानि कह्यो । कहु लंकहि रावण कौन रह्यो ।
हिरण्याक्षहि कुंडल एक लयो । बलि जीतन सोइ पताल गयो ॥
यक है यह राजहि जीति लियो । हमरे पितु पै यक रोष कियो ।
यक श्वेतहि द्वीप गयो चढ़िकै । सत्कार किये रमनी बढ़िकै ॥

(दोहा)

बोल्यो दशकंधर तमकि, सो रावण तैं जान ।
बिरचि कुसुम निज सीस के, पूज्यो देव इसान ॥४४५॥

(छंद हरिगीतिका)

मुख कहत लगति न लाज लघु नर सुजस करसि बखान ।
तब कह्यो अंगद मंदमति अबलौं न जान अजान ॥
जो कियो छत्र निछत्र यकइस बार भृगुकुल-भानु ।
रघुकुल-कमल बल विपुल देखत गयो गोइ गुमानु ॥४४६॥
बूझेहु न बूझत तैं अबूझ न सूझ निज कल्यान ॥

मारीच खरदूषन त्रिशिर तरु ताल सिंधु महान ॥
वासव-कुमार विराध वाली त्यौं कबंध अमान।
जानत सकल ये रामवान प्रभाव तैं नहिं जान ॥४४७॥
तब कह्यो दशकंधर बिहँसि भल कही महिमा राम।
जल माहँ मरि पापान तरु उतरे कियो का काम॥
तब उठ्यो अंगद तमकि बोल्यो बैन परम कराल।
रावण वचावन तोहिं पठयो मोहिं दीनदयाल ॥४४८॥
उपकार महं अपकार मानत बीस लोचन अंधु।
रिस लगति अस मुख टोरि गवनहुं जहाँ करुनासिंधु ॥
तब कोपि दशकंधर कह्यो अब सुनत हौ भट काह।
पटकौ पुहुमि मर्कट चटक अब होतिअति उर दाह॥४४९॥
सासन सुनत दशवदन को धाये निशाचर वीर।
गहि लियो अंगद को कुपित डोल्यो न कपि रनधीर॥
जब गसि गये कसि भुजन महँ तब तुरत तमकि तरकि।
अंगद गयो मंदिर उपर भट गिरे सकल खरकि ॥४५०॥
टूटे भुजा फूटे वदन मरिगे निशाचार चारि।
अंगद उड़्यो तहँते कहत जय लपन राम खरारि॥
आयो अकास अकास वानर वली वालिकुमार।
प्रभुचरन परसि प्रनाम करि अस कियो वचन उचार॥४५१॥
अब उचित कोसलनाथ अस दीजे तुरंत रजाय।
लंका महल्ला में हुलसि हल्ला करैं कपि धाय॥
सुनि प्रभु हरषि निवसे निसा तिहि सावधान सचैन।

चारिहु दुवारन प्रथम भाषित पटै वानर सैन ॥४५२॥

चारों फाटक का युद्ध

(दोहा)

जूथप जूथप सकल कपि, धाये करि किलकारि।
मानहु एकहि छनहिं महँ, लंका लेत उखारि ॥४५३॥

(तोमर छंद)

धाये सुमर्कट वीर। चहुं ओर ते रनधीर ॥
मुख सकल करत पुकार। जय राम लषन उदार ॥ ४५४ ॥
चढ़ि गये कोट कँगूर। लपटे दिवालन पूर ॥
बहु घुसे नगर मँझार। तहँ पस्रो हाहाकार ॥ ४५५ ॥
सुनि दशवदन अति कोपि। गृह चढ़यो चितवन चोपि ॥
वसुधा भई कपि रूप। संकित निशाचर-भूप ॥ ४५६ ॥
आसुहि सभा महँ आय। दिय भटन हुकुम सुनाय ॥
धावहु धरहु सब जाय। लीजो कपिन कहँ खाय ॥ ४५७ ॥
रावण वचन सुनि कान। बाजे अनेक निसान ॥
निकसे सु चारिहु द्वार। गहि अस्त्र शस्त्र अपार ॥ ४५८ ॥

(छंद भुजंगप्रयात)

चढ़े राक्षसा मत्त मातंग केते। चढ़े हैं तुरंगाहि केते सचेते ॥
इते कीस धाये किये वोर सोरा। सिला वृक्ष सों मारि कैसीसफोरा ॥
उभय सैन्य को सो भयो जुद्ध भारी। न कीसौ टरैं ना टरैं रात्रिचारी ॥
उड़ी धूरि गै पूरि त्यों आसमाने। न देखो परै नयन आगे महाने ॥

तहां राम सौमित्र कोपे अपारा। तजे चाप ते दाप कै बान धारा॥
लगै बान मानो महा वज्रपाता। तुरंगौ मतंगौ सतांगौ निपाता॥
नदी रक्तधारानि की बाढ़ि धाई। मिली सिंधु को लाल रंगै बनाई॥
भये अस्त ताही समय में तमारी। लरै लागि लंकानिवासी सुखारी॥

(चौपाई)

आये राक्षस और अनेकन। जिमि पतंग पावक कहँ पेखन॥
कनकबान तजि तजि रघुनायक। कीन्हे सबन स्वर्ग के लायक॥
हनुमत अंगद हनै निशाचर। आयो मेघनाद जोधाचर॥
कोपि इंद्रजित गयो गगन महँ। अंतर्धान कियो निज तनु कहँ॥
हनै लाग सठ बान हजारन। भये सर्प, करि चले फुकारन॥
लपटे राम लषन के गातन। नागपास प्रभु बँधे सकल तन॥

(दोहा)

हनुमत अंगद आदि भट, प्रभु कहँ लीन्हे घेरि।
आयो तहां विभीषणहु, विकल भयो प्रभु हेरि॥४६६॥

(हाकल छंद)

लंकेश सुरति सँभारिकै। बोल्यो सुबैन विचारिकै॥
यह काल है न विषाद को। पैहौ अवसि अहलाद को॥४६७॥
घननाद उत घर जाइकै। बोल्यो वचन जय पाइकै॥
हम जुगल बंधुन मारिकै। आये समर महि डारिकै॥४६८॥
दशकंठ सुनि सुत-बैन को। पायो अमित उर चैन को॥
गमन्यो रही जहँ जानकी। बोल्यो गिरा अभिमान की॥४६९॥
घननाद करि संग्राम को। मास्यो लषन अरु राम को॥

पुष्पक विमान चढ़ायके। ल्यावहु सियहि दरसायके ॥४७०॥
त्रिजटा विभीषन-कन्यका। सिय दासिका जग धन्यका॥
पुष्पकविमान मँगायके। लै चली सियहि चढ़ायके ॥४७१॥
सिय लख्यो लछिमन राम को। पायो महा दुख धाम को॥
त्रिजटा लगी समुझावने। लीला कियो जगपावने ॥४७२॥
पुष्पकविमानहि फेरिकै। सिय लै चली दल हेरिकै॥
इत समर लीला देखिकै। देवर्षि कारज लेखिकै ॥४७३॥
गरुड़हि पठायो आसुही। अहि को छुड़ावन पासुही॥
खगराज पंख पसारिकै। आयो अतुरता धारिकै ॥४७४॥
देखत गरुड़ अहि भगत भे। दोउ जगतपति द्रुत जगत भे॥
कपि कियो जय जयकार को। लखि निरुज राजकुमार को ॥४७५

(सोरठा)

कीन्ह्यो गरुड़ प्रनाम, दै परदच्छिन परसि पद।
गये आपने धाम, कपिदल अथ जयकार भो ॥ ४७६ ॥

(पद्धटिका छंद)

राक्षसहु जाय रावणहि द्वार। बहु बार बार कीन्हें पुकार॥
आयो उदंड कोउ इक विहंग। जिहि निरखि भभरि भागे भुजंग॥

(चौबोला)

दशकंधर सुनि दरत अधर रद बोल्यो बैन रिसाई।
रोकहु वीर द्वार लंका के सकैं न वानर आई॥
हमहिं जाव सजि समर हेत अब देखब कपि मनुसाई।
कहँ सुग्रीव कहाँ भ्राता मम कहाँ लषन रघुराई॥ ४७७ ॥

डंका दियो दिवाय दशानन लंका महँ चहुँ ओरा ।
निशिचरराज आज रन गवनत सजे वीर सुनि शोरा ॥
राक्षसनाह सनाह पहिरि तनु चल्यो बजाय नगारा ।
महावीर सब चले संग महँ निकस्यो उत्तर द्वारा ॥४७८॥
महा सैन्य आवत लखि रघुपति कह्यो विभीषण पाहीं ॥
सखा कौन आवत निशिचर वर जानि परत कछु नाहीं ॥
कह्यो विभीषण सुनहु नाथ यह आवत रावण राजा ।
यह महेंद्र-बल-दर्प-विदारक जाहि डरत यमराजा ॥४७९॥
उत रावण बोल्यो वीरन सों ताकहु लंका जाई ।
मैं अकेल लरिहौं कपिदल सों मानहु मोरि दुहाई ॥
अस कहि सब मुकराय भटन को धँस्यो कीस दल एका ।
मारत बान दशानन कोपित किय बिन प्रान अनेका ॥४८०॥
भगे कीस सब चले पुकारत रक्षहु रघुकुलनाथा ।
महाबली दल बलीमुखन को नास करत दशमाथा ॥
आरत वचन सुनत करुनाकर मृगपति गति रघुराऊ ।
कह्यो राम लरियो बचाय तनु छली निशाचरराऊ ॥४८१॥

(दोहा)

रामानुज कोदंड लै, बली बाँकुरो वीर ।
ललकारयो दशकंठ को, गिरा मेघ गंभीर ॥ ४८२ ॥

(चौपाई)

रे रावण कपि छुद्रन काहीं । मारे तुहिं जग में जस नाहीं ॥
चलो आउ अब सन्मुख मेरे । दरसावै बल जो कछु तेरे ॥

अस कहि कियो धनुष-टंकोरा। भरो भयंकर भू महँ सोरा॥
सुनि टंकोर सोर अति घोरा। तिरछे चितै लपन की ओरा॥
सिंहनाद करि रावण धायो। निकट आय अस वचन सुनायो॥
अरे बाल धरि दे धनु बाना। भागु भागु रक्षे निज प्राना॥
रामानुज बोल्यो मुसक्याई। बदसि वचन बिन बलहि दिखाई॥
रावण धनुष काटि रनधीरा। हन्यो ललाट माहँ त्रय तीरा॥
चले भाल ते रुधिर पनारे। उठयो बहुरि सारथी हँकारे॥
जीतत नहिं लछिमन ते देखी। ब्रह्मदंड लै शक्ति बिसेखी॥
उठत धूम निकसत मुख ज्वाला। तज्यो लपन पै शक्ति बिसाला॥
लागी लछिमन के उर आई। मूर्छित भयो भरत-लघुभाई॥

(दोहा)

लपन विकल लखि समर महँ, धायो पवनकुमार।
हन्यो जोर भरि मूठि तिहि, गिरिगो खाय पछार॥४८६॥

(चौपाई)

लियो उठाय लपन हनुमाना। फूलहु ते लघु लग्यो महाना॥
पवनसुवन लै लछिमन काहीं। आयो रघुकुल-भानु जहाँहीं॥
प्रभुहि विलोकत शक्ति परानी। गई दशानन निकट महानी॥
निरुज निहारि लपन कहँ कीसा। बोले सब जय जयति अहीसा॥
देखि कुशल लछिमन को रामा। आपुहि करन चले संग्रामा॥
गहि कोदंड प्रचंड अखंडा। दशरथ-सुवन वीर बरिबंडा॥

(दोहा)

दशमुख समर पयान लखि बोल्यो पवनकुमार।

नाथ हमारे कंध चढ़ि जीतहु रिपु यहि बार ॥४६३॥
पवनसुवन के वचन सुनि प्रभु नेसुक मुसक्यान।
चढ़े कपीसहिं कंध पर जथा गरुड़ भगवान ॥४६४॥

(झूलना छंद)

ले चल्यो मारुतनंद श्रीरघुनन्द वेग अमंद।
रघुवंस-पंचानन दशानन देखि भे सानंद ॥
प्रभु किये परम कठोर तहँ सारंग को टंकोर।
केते निसाचर कान फूटे भजि चले चहुं ओर ॥४६५॥
बोल्यो दशानन सों गिरा गंभीर श्रीरघुवीर।
ठाढ़ो रहै ठाढ़ो रहै कहँ जात दै अब पीर ॥
प्रभु के वचन सुनि लजत कोपत लंकपति बहु तीर।
मार्‍यो अनिलसुत को सुरति करि वैर पूरब वीर ॥४६६॥
तिल तिल बिंधे तनु बान पै हनुमान तेज प्रभाउ।
छन छन बढ़त द्विगुणित समर लखि कुपति भे रघुराउ ॥
रघुवंसमनि मंडलाकारहि करि कोदंड प्रचंड।
सर धार समर मँझार छोड़यो बार बार अखंड ॥४६७॥
रघुवीर लै यक तीर रावण के हन्यो उर माहिं ॥
गिरिगो धनुष धरनी व्यथित तनु रही सुधि कछु नाहिं ॥
विषहीन आसी विष जथा जिमि अग्नि ज्वाल विहीन।
मुसक्याय कोसलनाथ भाखो वचन वान प्रवीन ॥४६८॥
अब जाहि लंका रहित संका थाक नेकु निवारि।
चढ़ि रथ सरासन लै बहुरि अड़्यो समर पगु धारि ॥

सुनि राम बैन अचैन रावण भग्यो छूटेके श।
अवधेश-सायक भीति भरि लंका घुस्यो लंकेश ॥४९९॥

(दोहा)

उत लंका महँ लंकपति, सुमिरत रघुपति बान।
भय भरि बोल्यो निशिचरन, अब दिखात नहिं त्रान ॥४५०॥

कुंभकर्ण युद्ध

(चौबोला)

जाहु जगावहु कुंभकरन को सो विसेपि जय पाई।
निसिचर-कुल की वचन हेतु नहिं दीसत और उपाई॥
करि सचाह सोयो नव दिन गत ताहि जगावहु जाई।
चले जगावन कुंभकर्ण को निसिचर अति भय पाई ॥५०॥
चंदन प्रथम लगाये तनु में सींचे सुरभित नीरा।
वीना वेनु मृदंग संखध्वनि कियो निसाचर भीरा॥
दल हजार निसिचर जोधावर लगे जगावन ताको।
एक सहस दुंदुभी बजाये करि नादित लंका को ॥५०२॥
मूसर मुद्गर परिघ गदा लै जोर जोर भरि मारैं।
तऊ न जागत नींद विवस खल गिरि तरु तनु पर डारैं॥
नहिं जाग्यो तब सहस मत्तगज तिहि तनु पर दौराये।
तब जाग्यो कोउ करत परस तनु तज्यो नींद सुख छाये ॥५०३॥
कुंभकर्ण उठि बैठि सेज पर मुख बगारि जमुहाना।

महिप वराह मेष अज सहसन भच्छन कीन्ह्यो नाना ॥
रुधिरकुंभ अरु सुराकुंभ वहु मेद कुंभ करि पाना ।
पूछ्यो रजनीचरन हेतु केहि कीन्हें जगन विधाना ॥५०४॥
किहि कारन भूपति जगवायो है सब विधि कल्याना ।
तब यूपाक्ष जोरि कर बोल्यो कुंभकर्ण नहिं जाना ॥
लै वानरी सैन्य चढ़ि आयो कोसलदेस भुवाला ।
भट प्रहस्त आदिक रन जूझे घेरे लंक विसाला ॥५०५॥
सुनिकै हस्यो ठठाय गुन्यो अस लियो विष्णु अवतारा ।
भयो विनास निसाचर कुल को कृत रावण अपकारा ॥
पुनि प्रभु कर निज वध विचारि मन कुंभकर्ण बलवाना ।
करि मज्जन भूषन पट पहिरयो प्रभुपद दरस लुभाना ॥५०६॥

(दोहा)

कुंभकर्ण उत जायकै, रावण के दरवार ।
अग्रज को वंदन कियो, पूंछि कुसल व्यवहार ॥ ५०७

(छंद चौबोला)

तासों खबरि कही सब रावण कुंभकर्ण तब बोलो ।
निसिचर-कुल छय कियो दसानन भयो दर्प-बस भोला ॥
यहि विधि बातैं कह्यो उचित बहु राजनीति अनुसारा ।
कह्यो बहुरि अब जाहु समर को बंदन लेउ हमारा ॥५०८॥
अस कहि कुंभकर्ण संगर को चल्यो सुद्ध मति कुद्धा ।
एक फलंक लंक दरवाजा आयो नांघि विरुद्धा ॥
भगे बलीमुख महाबली लखि फिरैं न फेरे पर फेरे ।

अंगद अरु हनुमंत धाय कुत बार बार अस टेरे ॥५०९॥
कुल की प्रभु की और धर्म की सुरति छोड़ि कस भागे।
उभय लोक अवहीं बनि जैहैं राम काज महं लागे ॥
अंगद वचन सुनत मर्कट भट जीवन आस विहाई।
धाये कोटि कोटि चहुँ दिसि ते लै तरु गिरि समुदाई ॥५१०॥
कुंभकर्ण तनु चढ़े चटक सब हनि हनि वृक्ष पहारा।
कपिन वृंद धरि धरि निज मूठन लाग्यौ करन अहारा ॥
धायो द्विविद महीधर लै कर कुंभकर्ण कहँ मास्यो।
नहिं पहुँच्यो ताके सिर पर गिरि गिरि महि सैन सँहास्यो ॥५११॥
कुंभकर्ण रणदुर्मद धायो लीन्हें सूल कराला।
महा सैल इत लियो पवनसुत हन्यो दौरि विकराला ॥
मारुति मास्यो महा महीधर लग्यो माथ महँ जाई।
कुंभकर्ण कछु भयो व्यथित तहँ सँभरि कोप अति छाई ॥५१२॥
हन्यो त्रिसूल हनूमत के उर निकरि गई तनु फोरी।
सोनित वमत भयो कदि विह्वल भई मूर्छा थोरी ॥
आवत कुंभकर्ण को लखि तहँ रह्यो कीसपति ठाढ़ो।
कह्यो वचन सुग्रीव भीमबल रन उमंग भरि गाढ़ो ॥५१३॥

(दोहा)

कुंभकर्ण लघु वानरन मारे तुहिं जस नाहिं।
मेरे सन्मुख आयकै दरसावै बल काहिं ॥५१४॥
कीसराज को जानिकै कुंभ कर्ण बलवान।
लै त्रिसूल सन्मुख भयो, कीन्ह्यो वचन वखान ॥५१५॥

(छंद पद्धरी)

सुग्रीव रहौ अब सावधान। हौं कुंभकर्ण नहिं वीर आन॥
अस सुनत कीसपति लै पहार। दसकंठ अनुज पै किय प्रहार॥
गिरि कुंभकर्ण तनु लगि तुरंत। छहराय पस्यो टूके अनंत॥
तब कुंभकर्ण महि रोकि पाँउ। घाल्यो सुकंठ पै सूल घाउ॥
लखि सूल गुन्यो मन हनूमान। राजा बिसेषि बिन भयो प्रान॥
धायो अमंद अंजनीनंद। अति करी लाघवी कपि सुछंद॥
पायो न जान सुग्रीव पाहिं। गहि लियो शूल बीचही माहिं॥
दै जानु शूल टोस्यो प्रवीर। लखि लगी प्रशंसन देवभीर॥
लखि कुंभकर्ण निज शूल भंग। लीन्ह्यौ उखारि गिरिमहासृंग॥
धायो सुकंठ के ओर घोर। मास्यो पहार करि बाहु जोर॥
तहँ कुंभकर्ण धायो प्रचारि। लीन्ह्यो उठाय कपिपति सुरारि॥
तिहि काँख दाबि लै चल्यो लंक। दसकंठ अनुज दुर्मद निसंक॥

(छंद चौबोला)

कुंभकर्ण पहुंच्यो बजार महँ कपिपति गहे प्रवीर।
चढ़ी अटारी निसिचर नारी वर्षहिं चंदन नीर॥
सो सीतलता पाय कीसपति मुरछा तज्यो प्रवीर।
दबे काँख महँ का करिये अब अस बिचारि रनधीर॥५२२॥
कढ़यो कुक्ष ते गयो कंध पर दंतन काट्यो नाक।
काटि कर्ण दोउ करन करज ते फैलायो जस नाक॥
पद नख ते दोउ पार्श्व बिदास्यो पुनि उड़ि चल्यो अकास।
कुंभकर्ण पद पकरि पछास्यो मान्यो प्रान बिनास॥५२३॥

कंदुक इव उड़िगयो गगन पुनि सुमिरत रामप्रताप।
राम समीप आय वानरपति गह्यो चरन बिन ताप॥
नासा कर्ण बिहीन महाभट वहत रुधिर की धार।
करि गलानि मन कुंभकर्ण तहँ कीन्ह्यों मरन विचार॥५२४॥
लौटि चल्यो पुनि समर हेत सठ लै कर मुद्गर घोर।
प्रविस्यो पुनि वानरी वाहिनी लग्यो खान चहुँ ओर॥
सज्यो समर महँ सूर सिरोमनि लै धनु दशरथलाल।
रौद्र अस्त्र कहँ करि प्रयोग प्रभु छोड़े विसिख विसाल॥५२५
जिन वानन में एक वान सों वालि विनास्यो राम।
खर दूषन त्रिसिरा कहँ वेध्यो सप्ततालअभिराम॥
ते सर कुंभकर्ण के तनु महँ व्यथा करत कछु नाहिं।
तजत वानधारा रघुनायक खैंचि खैंचि धनु काहिं॥५२६॥
दियो रामसासन कपि वृंदन चढ़ि तनु देहु गिराय।
धाय वलीमुख चढ़े तासु तनु रह्यो सोउ ठहराय॥
जब जान्यो चढ़ि आये मर्कट दीन्ह्यों देह कँपाय।
कोटि छैक भरि परे भूमि कपि लियो सबन कहँ खाय॥५२७॥
यह अनरथ निहारि रघुनायक धनु सायक कर धारि।
धाये कुंभकर्ण पर कोपित वार वार ललकारि॥
सुनि वानी कोमल रघुपति की जानि राम यहि ठौर।
कुंभकर्ण पुनि कह्यो वैन अस सुनिये राजकिसोर॥५२८॥
देखहु मुद्गर मोर भयावन कपिदल-नासनहार।
रघुनायक विक्रम दरसावहु जो कछु होय तुम्हार॥

अस कहि धायो राम ओर खल प्रभु पवनास्त्र चलाय।
मुद्गर सहित काटि डाख्यो भुज गिख्यो कपीन चपाय ॥५२६॥
तव रावण को अनुज कोप करि धायो ताल उखारि।
ताल सहित काट्यो भुज सोऊ इंद्र अस्त्र प्रभु मारि ॥
चपे निसाचर वानरहूँ वहु दवे मतंग तुरंग।
पुनि दिव्यास्त्र मारि रघुकुलमनि कियो जंघ जुग भंग ॥५३०॥
उड़्यो गगन महँ राहु सरिस सठ प्रभु सर मुख भरि दीन।
इंद्र अस्त्र पुनि योजि राम धनु कियो प्रहार प्रवीन ॥
कुम्भकर्ण को गयो सीस कटि गिरो लंक महँ जाय।
गृह गोपुर प्राकार फोरिकै गिरि सों पस्यो दिखाय ॥५३१॥
भागे जातुधान मारे कपि गवने रावण द्वार।
भरे भीति लखि कपिन जीति रन कीन्हे विकल पुकार ॥
महाराज तुव वंधु विक्रमी करि कोटिन कपि नास।
राम वान लगि गयो ब्रह्मपुर करि जग सुजस प्रकास ॥५३२॥

(दोहा)

कुंभकर्ण को निधन सुनि, लहि दसमुख दुख भूरि।
कीन्ह्यो विविध विलाप तहँ, विजय आस भइ दूरि ॥५३३॥

(छंद चौवोला)

अति दुखित लखि पितु को कह्यो घननाद वचन उदंड।
मेरे जियत नहिं सोच कीजे निरखि मम भुज दंड।
वोल्यो दशानन व्यथित आनन है भरोसो तोर।
जिहि भाँति जीतैं कपिन को सो करो विक्रम घोर ॥५३४॥

(दोहा)

मेघनाद अस कहि चल्यो, सठ निकुंभिला जाय।
कीन्हों पावक होम खल श्याम छाग कटवाय ॥५३५॥
कीन्ह्यों तंत्र विधान ते महाघोर अभिचार।
ब्रह्मअस्त्र अनुभव कियो कारन कीस सँहार ॥५३६॥
दिव्य धनुष अरु दिव्य रथ प्रगट्यो अग्नि कराल।
स्वै स्यंदन में चढ़ि चल्यो धारे धनुष बिसाल ॥५३७॥
बोल्यो रजनीचरन सों करहु घोर घमसान।
आपु सरथ सह सारथी ह्वैगो अंतर्धान ॥५३८॥

(छंद तोटक)

ब्रह्मास्त्र कीन प्रयोग। सर तज्यो जनु अहि भोग॥
वर्षन लग्यो बहु बान। ह्वै गगन अंतर्धान ॥५३९॥
माया कियो अति घोर। अँधियार भो चहुँ ओर॥
नव सप्त पंच कपीन। इक इक सरन बध कीन ॥५४०॥
लै बीर भूधर वृच्छ। धावहिं चहूँकित ऋच्छ॥
देखहिं न मारत जोय। तब फिरहिं अतिभय मोय ॥५४१॥
व्याकुल भये कपिवृंद। गे सरन रघुकुलचंद॥
लै धनुष लछिमन राम। दोउ तजे सर बलधाम ॥५४२॥
नहिं लखि परत घननाद। सुनि परत केहरि नाद॥
जिहि पंथ आवत बान। तिहि पंथ करि अनुमान ॥५४३॥
सर त्यागि दुनौं भाय। घननाद तनु किय घाय॥
तब इंद्रजित बरजोर। ब्रह्मास्त्र छोड़्यो घोर ५॥४४॥

चहुं ओर ते तिहि काल। आवन लगे सरजाल॥
लागे कटन कपि जूथ। गिरिगे वरूथ वरूथ॥५४५॥
बोले लपन सों राम। घननाद यह बलधाम॥
ब्रह्मास्त्र कीन प्रयोग। तिहि मानिबो अब जोग॥५४६॥
जब लगि रहब हम ठाढ़। तब लगि अमर्षहि बाढ़॥
अस कहि सिथिल इव राम। लछिमन सहित बलधाम॥५४७॥
कोउ रह्यो रन नहिं ठाढ़। घननाद सर लगि गाढ़॥
घननाद किय घननाद। पायो परम अहलाद॥५४८॥
लंका गयो जय पाय। दिय पितुहि सकल सुनाय॥
दिनमनि भये तहँ अस्त। कपि सैन्य विकल समस्त॥५४९॥
लंकेस अनुज स्वतंत्र। ब्रह्मास्त्र वारन मंत्र॥
जानत रह्यो यक सोय। ताते गयो नहिं सोय॥५५०॥
उठि तुरत पवनकुमार। अस कीन वचन उचार॥
जो होय प्रान समेत। तिहि खोजिये करि नेत॥५५१॥
दोउ लियो ठीक विचारि। यक लूक लीन्हो बारि॥
खोजन लगे रनभूमि। हनुमत विभीषण घूमि॥५५२॥

(दोहा)

पवनसुवन लंकेसहू खोजत खोजत जाय।
जामवंत को लखत भे सर जर्जरित बनाय॥५५३॥
कह्यो विभीषण ऋच्छपति, जीवत है की नाहिं।
जस तस कै बोल्यो वचन, जामवंत तिहि काहिं॥५५४॥
कहहु तात हनुमान कहुँ, जीवत है की नाहिं।

कह्यो विभीषण वचन तब, करि अचरज मनमाहिं ॥५५५॥
राम लषण को छाड़िकै, अंगद सुगल समेत।
पूछहु पवनकुमार को, ऋक्षराज किहि हेत ॥५५६॥
जांववान बोल्यो वचन, सुनहु विभीषण भ्रात।
जिहि कारन हनुमान को, मैं पूछहुं यह बात ॥५५७॥
जीवत हठि हनुमान के, मरेहु जियत सम कीस।
नहिं जीवत हनुमान के, जियत मरे सम दीस ॥५५८॥
ऋच्छराज के वचन सुनि, गह्यो चरन हनुमान।
कह्यो वचन मैं जियत हौं, देहु सीख मतिमान ॥५५९॥
जांववान हनुमान को, बोल्यो कंठ लगाय।
प्रानदान दल को करहु, औषध पर्वत लाय ॥५६०॥

(कवित्त)

जांववान को वखान सुनि हनुमान वीर, भयो बलवान मेरु मंदर समान है। आसमान पंथ ह्वै पयान हनुमान करि, उठि एंड़ाय उड़यो मानो हरियान है॥ कीन्ह्यो सोर बेप्रमान दीन्हो भीति जातुधान, लीन्ह्यो वीर वेगवान वेग बेप्रमान है। रघुराज सुमिरि कृपानिधान भगवान, अति अतुरान देन हेत प्रानदान है ॥५६१॥ पहुंच्यो कपीस गिरि औषध समीप जाय, हेरै कौन औषध यों मन में विचारि कै। केसरी-किसोर वरिवंड भुज-दंड ठोंकि, चल्यो आसु औषधी को पर्वत उखारिकै ॥ मार्तंड मारग में मार्तंडही सो लस्यो मार्तंडवंसमार्तंड उर धारिकै।

दंड द्वैक माहँ नाकि वेग सों भरत खंडआयो लंक खंड में कपीस किलकारिकै ॥५६२॥

(सोरठा)

गई न आधी रात, आय गयो कपि सैन्य में।
लग्यो औषधी वात, वानर उठे अभंग सब ॥५६३॥
उठे लषन अरु राम, मिले परस्पर हर्षि अति।
कपि पूरो मन काम, कहहिं कौन हनुमान सम ॥५६४॥

(दोहा)

चल्यो तुरत घननाद तहँ, करिकै पावक होम॥
करिहौं महि बिन वानरी, वाढ़ी यह मन जोम ॥५६५॥

(छंद तोटक)

माया करी अनखाय। सियरूप लीन बनाय॥
हनुमान सन्मुख जाय। तिहि हन्यो ताहि दिखाय ॥५६६॥
भे सिथिल हनुमत अंग। घटि गई जुद्ध उमंग॥
प्रभुसों निवेदन कीन। भो रामवदन मलीन ॥५६७॥
वोल्यो लषन अनखाय। नहिं होत धर्म सहाय॥
जो धर्म धरनि उदोत। तौ तुमहिं नहि दुख होत ॥५६८॥

(दोहा)

यहि विधि भाषत बहु वचन लछिमन के तिहि काल।
आय गयो लंकेस तहँ प्रभु लखि भयो बिहाल ॥५६९॥
पूछ्यो का यह होत अब कह्यो लखन बिलखात।
अनरथ कीन्ह्यो इन्द्रजित कही पवनसुत बात ॥५७०॥

करो विभीषण यह मृषा भाष्यो पवनकुमार॥
अस दसमुख करिहै नहीं जानै भेद हमार॥५७१॥
पै अवध्य अब होत हठि महाबली घननाद।
करतो यज्ञ निकुंभिला मानै हारि विषाद॥५७२॥
पठवहु लछिमन आसुही अंगद हनुमत संग।
मैं सब भेद बताइहौं जिमि होई मख-भंग॥५७३॥

(कवित्त)

राम को निदेस सुनि इंद्रजीत-जुद्ध हेत नैन अरविंद नेकु ह्वैगे अरुनारे हैं। फरके प्रचंड दोर्दंड जे अखंड ओज, सायक कोदंड को घमंड सों निहारे हैं॥ उमँग्यो अनंत उत्साह उर आहव को, लौटब न आज बिन इंद्रजित मारे हैं। रघुराज आज चढ्यो चौगुनो चलत चाउ, रामानुज अंग मनो बखतर फारे हैं॥५७४॥

(छंद चौबोला)

अस कहि लषन प्रभुचरन बंदि चल्यो तमकि तुरंत।
हनुमत बिभीषण अंगदादिक चले कपि बलवंत॥
तहँ लख्यो लषन निकुंभिला ठाढ़ी निशाचर सैन।
मनु श्याम मेघ घटा घनी मनु मीच की है ऐन॥५७५॥
तब दियो सासन लषन पवनकुमार को अतुराय।
काजै न सरसन्मुख समर लै कपिन को समुदाय॥
धायो प्रभंजनपूत अंगद सहित खलदल ओर।
मार्यो निशाचर वृन्द फोर्यो गोल कपि बरजोर॥५७६॥

घुसि गये बानर जज्ञसाला किये मख विध्वंस।
नहिं सहि गयो अपचार धाया हंस राक्षसवंस॥
भागे वलीमुख देखि बासवजीत आवत क्रुद्ध।
धायो प्रभंजननंद तासों करन जुद्ध विसुद्ध॥५७७॥
तब लषन धनु टंकोर करि मारे अनंतन बान।
लंकेशसुत पाछे चितै लखि लषन बीर प्रधान॥
बटवृक्ष के तल जानि लषनहिं तासु मुख कुम्हिलान।
जह ते रह्यो सठ होत मारन कपिन अंतर्धान॥५७८॥
धायो प्रभञ्जननंद लीन्हें कन्ध लछमनलाल।
उतते सरुप दशमुख-सुवन आया महा विकराल॥
घननाद लै पुनि तीन सर मारयो लषन तनु माहिं।
ते वेधि बख्तर बिधै तनु पै पीर कीन्हें नाहिं॥५७९॥
दोउ विश्वविदित प्रवीर चोखे दोउ महा रनधीर।
दोउ परम दुर्जय दुराधर्ष सहर्ष वर्षत तीर॥
दोउ सैन्य देखत समर कौतुक लिखित चित्र अकार।
नहिं देखि परत प्रवीर दोउ करि समर सर अँधियार॥५८०॥
रावणअनुज तहँ लग्यो मारन राक्षसान अपार।
साखामृगन बोल्यो वचन निसिचर करहु संहार॥
दोउ करन लागे जुद्ध उद्धत हनि परस्पर बान।
सरजाल दोऊ दुरत दीसत जथा पावस भान॥५८१॥
दोउ निरखि परत अलात चक्र समान ज्वलित कृसान।
जनु चारि ओरहु अनलकन झरझर झरस झहरान॥

धवनी अकाशहु दिशन विदिशन रहे सायक छाय।
दोउ लरत कहुं जुरि जात कहुं बिलगात रोष बढ़ाय ॥५८२॥
तिहि काल तजि सर चारि वेध्यो लषन तासु तुरंग।
तजि भल्ल एक प्रबल्ल काट्यो सूतसिर मधि जंग॥
घननाद अति अविषाद पग सों गह्यो वाजिन वाग।
चालत तुरंगन सरन घालत कपिन अवरज लाग ॥५८३॥

(कवित्त)

प्रबल प्रचंड पुनि लीन्ह्यों वान रामानुज, दुराधर्ष दुसह दुरासद है ईस को। कै दियो प्रयोग त्यों महेंद्र अस्त्र मंत्र पढ़ि, बोल्यो बैन के भरोस राम जगदीस को॥ सत्यसंध धरमधुरंधर जो रघुराज, विक्रम अखंड होय जो पै जानकीस को॥ वान तो हमारौ यहि वार को पवारो काटि डारै विन वारै अव मेघ-नाद-सीस को ॥५८४॥

(दोहा)

अस कहि छोड़यो लषन सर, लग्यो कंठ मँह जाय।
इंद्रजीत के सीस को, दीन्ह्यो काटि गिराय ॥५८५॥

(छंद चौवोला)

भये विसल्य विरुज वानर सब ओज तेज बल भारी।
वारहिंवार सराहत लषनहिं अजय सत्रु संहारी॥
कोउ मंत्री सुनि इंद्रजीत वध रावणसभा सिधारी।
दियो सुनाय निशाचरराजहि गयो आप सुत मारी ॥५८६॥

सुनि रावण ह्वै गयो विमूर्छित तन की सुरति विसारी।
पुनि उठि आँसुन धार बहत दृग बोल्यो गिरा पुकारी॥
अब का जिये जगत महँ सुत बिन लगति देह मम भारा।
हमहीं चलब समर सन्मुख अब देहु दिवाय नगारा॥५८७॥

राम-रावण-युद्ध

दसमुख सासन सुनत निशाचर सजे समर हित सूरा।
बीस लक्ष रथ तीस लक्ष गज पैदर पुहुमी पूरा॥
साठि करोर तुरंग सँवारे सेनापति भट चारी।
चली निशाचर की अनीकिनी परी दिसन अँधियारी॥५८८॥
दसमुख लख्यो वानरी सैना पारावार समाना।
धस्यो धुनत सर पैन अपारन अति उत्पात दिखाना॥
मारन लाग्यो महा करालन वानन सो दसभाला।
दशमुख सन्मुख समर प्रखर सर सहै को वीर विसाला॥५८९॥

(चौपाई)

लषन निरखि रन रावण आवत। बढ़यो जुद्धहित बान चलावत॥
तजी लषन सायक बर धारा। मूँद्यो रिपुरथ लगी न वारा॥
लषन बान वारन करि रावन। आयो जहाँ जगतपति पावन॥
करन लगे दोउ युद्ध भयावन। जग अभिराम राम अरु रावन॥
उभय विसारद अस्त्र अनंता। उभय धीर संगर बलवंता॥
रघुनायक सायक पुनि पाँचा। मार्यो रावण भाल नराचा॥
तनक विकल ह्वै उठ्यो दसानन। छोड़यो असुर अस्त्र पंचानन॥

तब गंधर्व अस्त्र प्रभु त्यागा। मयकृत अस्त्र खोज नहिं लागा॥
तिहि अवसर रामानुज कोपी। मार्‌यो सात वान चित चोपी॥
इक सर काट्यो ध्वजा पताका। पुनि काट्यो सारथि सिर ताका॥
देखि विभीषण रावण कोपा। चाह्यो करन बंधु कर लोपा॥
तबहिं दशानन अतिहि रिसाई। ब्रह्मदत्त लिय शक्ति महाई॥
जान्यो लषन विभीषण नासा। आगू भयो बचावन आसा॥
हने शक्ति कहँ सायक लाखा। दियो नासि दसमुख अभिलाखा॥
तब लंकेस कोपि कह बाता। लियो बचाय मोर सठ भ्राता॥
ताते सावधान रहु वीरा। भस्म करी यह शक्ति सरीरा॥
अस कहि लषन ताकि रनधीरा। तजी शक्ति पुरदायक पीरा॥
आवत शक्ति देखि रघुराई। कह्यो स्वस्ति जीवै मम भाई॥

(दोहा)

लगी लषन उर माँझ सो कियो धरनि लगि फोर।
सिथिल अंग बिन संज्ञ ह्वै गिरिगो राजकिसोर॥५६६॥

(चौपाई)

राम बहुरि सो शक्ति उखारी। दै भुज बीच तोरि तिहि डारी॥
सक्ति उखारत महँ लंकेसा। दियो छाय हनि वान असेसा॥
कपिपति मारुति काहँ बुलाई। बोल्यो सरुष वचन रघुराई॥
रहहु लषन कहँ घेरि कपीसा। विक्रम काल मोहिं महँ दीसा॥
अस कहि रघुकुलवीर उदंडा। कियो धनुष टंकोर अखंडा॥
हन्यो हजारन सायक घोरा। सर अँधियार भयो चहुं ओरा॥
रावण राम वान नभ छाये। लै विमान सुर विकल पराये॥

गिरहिं गगन ते कटि कटि वाना । महा भयंकर लूक समाना ॥
रावण रथी राम पदचारी । सुरपति लखि मातली हँकारी ॥
सायुध स्यंदन मम लै जाहू । तिहि पर चढ़ैं भानुकुलनाहू॥
सुरपति सासन सुनि सुख पायो । मातलि रथ अवनी लै आयो॥
करि प्रनाम बोल्यो कर जोरी । सुरपति विनय कियो प्रभु थोरी ॥
रघुनंदन चढ़ि स्यंदन माहीं । हनैं बान वृंदन रिपु काहीं ॥
मातलि विनय सुनत रघुराई । दै परदच्छिन चढ़े तुराई ॥

(दोहा)

रघुनंदन स्यंदन चढ़े सोहे मधि संग्राम ।
मानहुं भानु सुमेरु पर उदित भयो अभिराम ॥६०७॥

(चौपाई)

होन लग्यो तव द्वै रथ जुद्धा । रावण राम भये अति क्रुद्धा ॥
तव रावन रन कोपित भयऊ । सहस बान प्रभु पर तजि दयऊ ॥
पुनि मातलि को वहु सर मास्यो। वास व ध्वजा काटि रथ डास्यो ॥
कियो व्यथित वासव के वाजिन। प्रभु कहँ मूँद्यो हनि सर-राजिन॥
भुजा बीस दससीस भयावन । देखि पस्यो रन रोपित रावन ॥
सिथिल भये मनु प्रभु सुमसीला । देखि विकल भे सुर रनलीला॥
देवन कपिन विकल लखि रामा । नेसुक भ्रुकुटि कियो तहँ वामा॥
रावणहूँ जान्यो निज काला । हट्यो कछुक लै जान विसाला ॥
पुनि थिर चित करिकै दशशीशा । आयो सन्मुख जहँ जगदीशा॥
तहँ सकोप-निशिचरगणनाथो । लीन्ह्यो महाशूल यक हाथो ॥
अस कहि तज्यो शूल वरजोरा । तडित प्रकाश भयो चहुँ ओरा ॥

हने राम सायक बहु लाखा । भस्म भये लगि शूलहि पाखा ॥
लियो महेन्द्र शूल रघुराई । शत्रु शूल पर दियो चलाई ॥
भयो खंड द्वै रावण शूला । मिटी देव मुनि कपि हिय शूला ॥
बानवृंद पुनि पुनि रघुनाथा । हनत कहत रहु थिर दशमाथा ॥
रोम रोम वेध्यो तनु चानन । भयो शल्य की सरिस दशानन ॥

(दोहा)

ह्वै विसंग रथ पर गिस्यो, सोरथि मृतक विचारि ।
लै भाग्यो रन ते तुरत आरत वचन पुकारि ॥५१६॥

(चौपाई)

लंकद्वार लगि जब रथ गयऊ । सावधान दशकंधर भयऊ ॥
चढ़यो महारथ रावन राजा । धावत आयो संगर काजा ॥
महाभयंकर श्यामशरीरा । लखि रावण प्रमुदित रघुवीरा ॥
मातलि सों अस कह्यो बुझाई । तुम सुजान सारथि सुरराई ॥
लै चलु रथहि सवेग धवाई । परै वाम दिसि निशिचरराई ॥
तहँ मातलि प्रभुपद सिर नाई । रघुनंदन स्यंदनहि धवाई ॥
तब कीन्हीं रन रावण माया । अंधकार दसहूँ दिसि छाया ॥
प्रभु हँसि भास्कर अस्त्र चलायो । छन महँ माया सकल उड़ायो ॥

(दोहा)

महा धनुर्धर वीर दोउ, रचे गगन सरजाल ।
तिल भर अंतर नहिं रह्यो, सुर मुनि भये विहाल ॥५२१॥
तहँ राघव लाघव कियो, तजि सर तेज-निकेत ।
रावण सिर काट्यो तुरत, कुंडल मुकुट समेत ॥५२२॥

(चौपाई)

दूसर सीस भयो दशशीशा। लखि आश्चर्य गुन्यो जगदीशा॥
सोउ रावण सिर काटि गिरायो। तीसर सीस तुरत ह्वै आयो॥
यहि विधि सत सिर काट्यो रामा। भे नव नव सिर तिहि संग्रामा॥
तब मातलि बोल्यो कर जोरी। सुनहु नाथ विनती इक मोरी॥
हिरनकशिपु कनकाछ सँहारे। अमित वार भुवि भार उतारे॥
यह रावण है केतिक बाता। हनहु ब्रह्मसर करै निपाता॥
मातलि कहे सुरति प्रभु कीन्हा। घोर ब्रह्मसर अस्त्रहि लीन्हा॥
सो सर संधान्यो रघुराई। वेद मंत्र पढ़ि आनँद छाई॥
रावन हृदय ताकि रघुनायक। तज्यो अमोघ ब्रह्मसर सायक॥
रावण हृदय लग्यो सर घोरा। पत्र सरिस ताको उर फोरा॥

(दोहा)

रावन प्रानसमेत सर फोरि सात पाताल।
रुधिरमयो रघुनाथ सर प्रविश्यो तून विसाल॥५२८॥
गिरो भूमि में धनुष तिहि मृतक भयो दशभाल।
स्यंदन ते धरनी गिरो कँपी धरनि तिहि काल॥५२९॥

(छंद चौबोला)

भागे निसाचर करत आरत शोर लंका ओर को।
रगदे वलीमुख ऋच्छ वृन्दन हनत करि करि जोर को॥
बरजे कपिन रघुवंसमनि अब जातुधान बचाइयो।
[illegible] अपराध नहिं अब कोप मन नहिं लाइयो॥५३०॥
[illegible] ते मातली मिलि कहे रघुपति बैन को।

कीन्ह्यो परम उपकार रथ लै जाउ सुरपति-ऐन को ॥
तिहि समय रावण नारि निकसीं करत अतिहि विलाप।
रनभूमि महँ सब जाय लखि पति मृतक लहि संताप ॥५३१॥
मंदोदरी वहु भाँति करति विलाप रावण रानि।
कहि वचन परम कृपालु बोध्यो जाइ जानकि-जानि ॥
तहँ राम सासन मानि रावण-अनुज जाय निकेत।
रचि कनक विमल विमान ल्यायो माल्यवान समेत ॥५३२॥
रावण सरीर उठाय तिहि धरि जाय मर्घटभूमि।
दीन्ह्यो मुखानल विधि सहित चहुँ ओर तिहि छन घूमि ॥
करि अग्निहोत्र विधान दाह्यो दिय तिलांजलि न्हाय।
आयो विभीषण राम जहँ तियवृंद नगर पठाय ॥५३३॥
रघुवंसमनि तहँ जानि अवसर कह्यो लषन बुलाय।
कीजै विभीषण राजतिलक सुलंकनगर सिधाय ॥
सुनि नाथ सासन लषन गवने लै विभीषण संग।
साखामृगन दीन्ह्यों निदेस विचारि तिलक प्रसंग ॥५३४॥
वानर तुरंतहि जाय ल्याये सिंधुजल घट चारि।
सौमित्र सिंहासन विभीषण दियो तहँ वैठारि ॥
पढ़ि वेदमंत्र स्वतंत्र लछिमन कियो तिहि अभिषेक।
कीन्ह्यों तिलक पुनि राज को भेटी जु टैकी टेक ॥५३५॥
उपहार को लै सकल धन सौमित्र संग सिधारि।
आयो विभीषण आसु प्रमुदित जहँ सुकंठ खरारि ॥
प्रभु के परो अरविंद पद परदच्छिना दै चारि।

उठि नाय लीन लगाय उर अहि भोग भुजनि पसारि ॥५३६॥
उपहार दीन्ह्यो जो विभीषण लियो रघुकुलराज।
कृतकाज मान्यो आपने को आय सहित समाज॥
तहँ खड़ो सन्मुख पवनसुत गिरितरिस परम विनीत।
परसंशि तिहिं रघुवंसमनि कह वचन परम पुनीत ॥५३७॥
जो होय कपि अब उचित तौ लै लंकनाथ निदेस।
तुम जाहु लंकहि आसु वैदेही बसति जिहि देस॥
सुनि पवनसुवन प्रमोद भरि प्रभु जलज पद सिर नाय।
लै लंकनाथ निदेस आसुहि चल्यो चौगुन चाय ॥५३८॥

दोहा।

कुशल प्रश्न पूँछन सकल, लखि हनुमत मुसक्यात।
भाषत सकल निसाचरन, सुखी हमारे भ्रात ॥५३९॥

सीता-आगमन और अग्निप्रवेश।

(चौपाई)

गयो असोकवाटिका जबहीं। जनकसुता कहँ देखत तबहीं॥
दूरिहिं ते कपि कियो प्रनामा। कहि जय जय जगदंब ललामा॥
देवि कुसल कोसलपुर राजा। कुसल कीशपति सहित समाजा॥
रावण कुंभकर्ण घननादा। मरे समर महँ पाय विषादा॥
सुनि कपिवचन विदेहकुमारी। आनँदमगन न गिरा उचारी॥
जस तसकै पुनि सुरति सम्हारी। बोली बानि विदेहकुमारी॥
रामविजय सुनु पवनकुमारा। भयो मोर जीवन रखवारा॥

नाथ-जिजय भाग्यो तुहिं आई। तिहि बदलो नहिं परै दिखाई॥
जनकसुता के वचन सुहाए। सुनि हनुमंत बहुरि सिर नाए॥
देहु रजाय मातु अब जाहूँ। जहाँ लपन अरु कोसलनाहू॥

दोहा।

पवनसुवन को गमन सुनि कह्यो विदेहकुमारि।
कौन घरी प्यासे नयन ह्वैहैं सफल निहारि॥५४५॥
पवनसुवन बोल्यो वचन नहिं विलंब जगदंब।
पियपूरनससि-बदन लखि पैहौ मोद कदंब॥५४६॥
अस कहि सीताचरन जुग वंदि सुखद हनुमंत।
चल्यो तुरंत अनंत सुख आयो जहँ भगवंत॥५४७॥

(चौपाई)

प्रभुपद प्रमुदित कियो प्रनामा। सीय खबरि पूँछी तहँ रामा॥
कह्यो पवनसुत जोरे हाथा। सिय दरसन चाहति रघुनाथा॥
दंड द्वैक लगि राम विचारी। कह्यो विभीषण काहि हँकारी॥
सुनि प्रभुसासन निशिचरराजा। चल्यो लंक भरि मोद दराजा॥
तहाँ दैत्य दानव की कन्या। सिय मज्जन करवाई धन्या॥
दिव्य विभूषन पुनि पहिराई। षोड़स विधि शृंगार बनाई।
मनिन-जाल की रुचिर पालकी। चढ़ी सुता मिथिलाभुवाल की॥
यहि विधि लै सीतैं लंकेसा। गयो जहाँ रविवंस दिनेसा॥
तहँ सीता के दरसन काजा। झुको बलीमुख बीर समाजा॥
कलमल पस्यो कपिन को भारी। सहि न गयो प्रभु कह्यो पुकारी॥
सुनहु विभीपण सखा हमारे। बरजहु निज राक्षसन अपारे॥

सीता पग सों इत चलि आवै । लंका वहुरि पालकी जावै ॥
प्रभुसासन सुनि जनक कुमारी । तजि सिविका पैदर पगुधारी॥
चलत विभीषण के सिय पीछे । ताकति पति मुख नयन तिरीछे॥

(दोहा)

वोले राम पुकारि कै लखहु सीय कपिवृंद ।
जाके हित निज जीव की तजे छोह छल छंद ॥५५५॥
सफल भयो मम श्रम सकल विक्रम दियो दिखाइ ।
मोर अनादर मोर रिपु परत न जगत लखाइ ॥५५६॥

(चौपाई)

प्रन पूरन कीन्ह्यो रिपु मारी । जो सिय हस्यो लोक दुखकारी ॥
नहिं क्षत्रिय जो निज अपमाना । नासै करि विक्रम विधि नाना॥
कीन्ह्यों सकल हेतु मैं अपने । निज हित जानु सीय नहिं सपने ॥
तुहि रिपु-भवन वसत सुख रीते । जनकसुता दस मास व्यतीते॥
करौं कौन विधि ग्रहन तुम्हारा । परघर वसत गहत को दारा ॥
पीतम वचन सुनत सुकुमारी । मृगी सरिस ढारति दृग वारी ॥
जस तसकै धीरज धरि सीता । वोली वचन होत मन भीता ॥
नाथ चरन तजि कहँ अव जैहौं । तुम्हरे देखत देह दहैहौं ॥
ताते जिअव उचित नहिं मोरा । तुमहिं त्यागि जैहौं केहि ठोरा ॥
लषन रहे दृग ढारत वारी । तासों कह्यो विदेहकुमारी ॥
देहु लषन अव चिता वनाई । यह कुरोग कर यहै उपाई ॥
लषन लख्यो रघुपति की ओरा । कहि न सकत प्रभु भय भरि भोरा॥

(दोहा)

प्रभु अभिमत निज जानि तहँ, सैनन दीन रजाय।
अनुसासन सुनि लषन तहँ, दीन्ह्यो चिता बनाय॥ ५६३॥

(चौपाई)

बैठ अधोमुख प्रभु तिहि ठामा। मानहुँ कालरूप भय-धामा॥
कियो प्रदच्छिन पिय बैदेही। गई चिता ढिग राम-सनेही॥
दियो लगाय अगिन तहँ बाला। उठी त्रिसाल ज्वाल विकराला॥
बोली बचन बिदेहकुमारी। सुनहु सबै साखी असुरारी॥
तन मन बचन राम जदि मोरे। लख्यों न और नयनहू कोरे॥
तो पावक रच्छै यहि काला। साखी सकल देव मुनि माला॥
अस कहि प्रबिसी अगिन मँझारी। लियो अगिन जिमि पिता कुमारी॥
प्रगट्यो पावक रूप पुनीता। बैठायो निज अंकहि सीता॥

(दोहा)

पंचबटी महँ जानकी राम रजायसु पाइ।
पावक माहँ प्रबेस किय छायारूप टिकाइ॥ ५६८॥
सो छाया बपु सिय मिल्यो प्रगट्यो रूप प्रधान।
सो पावक धरि अंक महँ निकस्यो अति हरषान॥ ५६९॥

(चौपाई)

कह्यो रामसों करत प्रनामा। लेहु सुद्ध प्रभु आपन बामा॥
जगजननी यह बिगत बिकारा। धर्मरूप कीरति आकारा॥
तिहि अवसर प्रमुदित रघुराई। सीतै लिए निकट बैठाई॥
सुर मुनि कपि कीन्हे जयकारा। बरषे कुसुम देव बहु बारा॥

(दोहा)

राम लपन कपि सैन्यजुत, कीन्ह्यो सुखित निवास।
जोरि पानि बोल्यो वचन, आय विभीपन पास॥ ५७२॥

अयोध्या-गमन

(चौपाई)

मज्जन करहु भ्रातजुत रामा। पहिरहु भूपन वसन ललामा॥
यह विभूति रघुनाथ तिहारी। होय कृतारथ है न हमारी॥
सुनत विभीपन वचन रसाला। हियहर्पित हँसि कह्यो कृपाला॥
मैं नहिं मज्जहुँ सो सुनु कारन। कीन्हें भरत मोर व्रत धारन॥
राजकुमार बड़ो सुकुमारा। सखा भरत मुहिं प्रानपियारा॥
जैहौं अवध जु अवधि बिताई। मिली न जियत प्रानप्रिय भाई॥
विपम पंथ दूरी अति देसा। बीतत अवधि होत अंदेसा॥
कह्यो विभीपन तब कर जोरी। सुनहु नाथ विनती यह मोरी॥
अवध एक दिन महँ पहुँचैहौं। नाथ सकल संदेह मिटैहौं॥
है यक पुप्पक नाम विमाना। भानु समान प्रकास महाना॥
सो विमान हाजिर तुव हेतू। मोरि विनय सुनु कृपानिकेतू॥
जो कछु पूजन करहुँ तुम्हारा। सैन्यसहित अवधेशकुमारा॥

(दोहा)

करि कृपालु मो पर कृपा, सबै ग्रहन करि लेहु।
दीन जानि मुहिं मान दै, कीजे सफल सनेहु॥ ५७३॥

(चौपाई)

सखा विनय सुनि दीनदयाला। बोले जल भरि नयन विसाला॥
कीन्ह्यो सखा सकल सत्कारा। तुम्हँ उऋन मैं जुग न हजारा॥
भरत समीप बसत मन मेरा। तुमसों चलत सखा नहिं जोरा॥
चित्रकूट महँ जब हम आये। घर ते भरत मनावन धाये॥
मुहिं लेचलन भरत अभिलाषी। मैं निज पिता प्रतिज्ञा राखी॥
भरत कियो पुनि वचन सुनाई। पैहौ जो प्रभु अवधि बिताई॥
तो मुहिं नाथ जियत नहिं पैहौ। यह कलंक किहि भाँति मिटैहौ
सखा छमहु यह चूक हमारी। किह्यो न कोप सनेह विचारी॥
विनती करहुँ सखा कर जोरी। लाउ विमान जानि रुचि मोरी॥
भयो सिद्ध सिगरो मम काजा। कीन्ह्यो तोहिं लंक महराजा॥

(दोहा)

राम वचन कल्यान सुनि, लंकराज मतिमान।
जाय लंक ल्याए तुरत, कामग पुष्पविमान॥७८९॥

(चौपाई)

अवसर जानि भरत सुधि कैकै। वैदेही लछिमन सँग लैकै॥
पुहुपविमान चढ़े रघुराई। राजासन बैठे छविछाई॥
खड़े चहूँकित कीस अपारा। कपिपति अंगद पवनकुमारा॥
बली वलीमुख मुख्य निहारी। बोले मंजुलवचन खरारी॥
तुमसे उऋन कबहुँ हम नाहीं। जाहु सबै निज निज घर काहीं॥
माँगि विदा हमहूँ सब पाहीं। करहिं पयान अवधपुरकाहीं॥
तहँ निशिचर वानरकुलभूपा। कहे वचन कर जोरि अनूपा॥

सकल वीर चाहत अस स्वामी। तुम सबके हौ अंतरजामी ॥
लखैं अवधपुर संग सिधाई। राजतिलक देखैं सुख छाई॥
संग चलब अभिलाष विचारी। कह्यो कृपानिधि वचन पुकारी॥
गवनहु संग सुकंठ हमारे। सहित वीर वानर बलवारे॥
चढ़े सकल कपि पुहुप विमाना। निसाचरेंद्र कपींद्र महाना॥

(दोहा)

जानि समय सुभ राम तहँ सासन दियो सुजान।
अवध-ओर उत्तर दिसा गवनै पुहुपविमान ॥ ५६२ ॥

(चौपाई)

राम रजाय पाय हरषाना। गगनपंथ ह्वै चल्यो विमाना॥
गयो गगन जब ऊंच विमाना। देख्यो समरभूमि भगवाना॥
किष्किंधा के उपर विमाना। गयो गगन महँ वेग महाना॥
चित्रकूट नाके रघुबीरा। लख्यो जमुन मर्कतमय नीरा॥
गंग जमुन संगम सित स्यामा। तीरथराज सकल सुखधामा॥
पुनि उत्तर लखि पानि पसारी। बोले राम त्वरा करि भारी॥
लखु लखु लखु मिथिलेशकुमारी। राजधानि मम परै निहारी॥
देखु अवधपुर महल उतंगा। देखि परति सरजू सित रंगा॥
पेखि प्रयाग विमान उतारे। प्रभु बेनी मज्जन पगु धारे॥
सीय-लषन-जुत मज्जन कीन्हें। विप्रन दान अनेकन दीन्हें॥
सब विधि जोग जानि हनुमाना। कहे वचन मंजुल भगवाना॥
जाहु अवध केसरीकिसोरा। जहाँ बैठ भ्राता लघु मोरा॥

(दोहा)

सुन्यो वचन तुम भरत के, देख्यो सब व्यवहार।
ताकी मन अभिलाष गुनि, पेख्यो सकल अकार॥ ५९९॥

(चौपाई)

पूँछि सकल वृत्तांतहि जानी। ताकी रुख लीन्ह्यो पहिचानी॥
होय राज्यलोभी यदि भ्राता। तौ न कह्यो मम आवनि बाता॥
आसुहि आय खबरि मुहिं देहू। मैं नहिं तजिहौं भरत सनेहू॥
करिहौं और ठौर को राजू। होय भरत कोसल महराजू॥
सुनि प्रभु वैन अंजनीनंदन। चल्यो अवध कहँ करि पदवंदन॥
गगन पंथ कपि कुंजर धायो। नंदिग्राम आरामहि आयो॥
धस्यो पवनसुत विप्रस्वरूपा। भरत कुटी कहँ चल्यो अनूपा॥
लख्यो दूर ते रघुपति भ्राता। राम प्रेम मूरति अवदाता॥
राम राम मुख कढ़त निरंतर। विकल होत कबहूं परि अंतर॥
निरखि भरत कहँ पवनकुमारा। गद्गद गर नहिं वचन उचारा॥

(दोहा)

जस तस कै धरि धीर कपि, पाय परम अहलाद।
रामबंधु जीवहु सदा, दीन्ह्यो आसिरवाद॥ ६०५॥

(चौपाई)

भरत प्रनाम कियो द्विज जानी। आकस्मात बह्यो दृग पानी॥
तहाँ पवनसुत वचन सुनाये। अति प्रिय खबर कहन इत आये॥
जिहि वियोगवस कृसित सरीरा। ध्यावहु जाहि नयन भरि नीरा॥
जासु विरह यह दसा तिहारी। चौदह बरष जासु व्रत धारी॥

सो कोसलपुरपाल कृपाला । आय प्रयाग वस्यो यहि काला ॥
सहित वानरीसैन्य समाजू । आवत लपन सीय रघुराजू ॥
तजहु सोक दारुन प्रभु-भ्राता । लखिहो काल्हि भानुकुलत्राता ॥
इतना सुनत भरत तिहि काला। भयो महामुद मगन बिहाला ॥
गद्गद कंठ बोलि नहिं आवत । हनुमतवदनलखत टक लावत ॥
जस तसके अस वचन सुनाये । को हो तात कहाँ ते आये ॥

(दोहा)

कह्यो वचन मुहि परम प्रिय राख्यो जात सरीर ।
देहुँ धेनु यक लच्छ तुहिं तदपि होत नहिं धीर ॥ ६११ ॥

(चौपाई)

बोल्यो हुलसि प्रभंजननंदन । पुलकित भरत चरन करि वंदन ॥
मैं कपि हौं केसरी-किशोरा । रघुपति किंकर तैसहु तोरा ॥
धस्यौं विप्र वपु परिचय हेतू । दिय निदेस अस रघुकुलकेतू ॥
सुनि रामानुज रामागमनू । मंगलमूल अमंगलदमनू ॥
पुनि पुनि मिलि अस वचन उचारा।विधि आखर को मेटनहारा॥
चौदह वरस विते कपिराई । आज नाथ सिगरी सुधि पाई ॥
भयो मनोरथ पूरन आजू । लखिहौं कृपासिंधु कृतकाजू ॥
ऐहैं अवसि काल्हि रघुराजू । करहुँ अलंकृत नगर दराजू ॥

(छंद हरिगीतिका)

हरषित भरत तहँ बोलि रिपुहन कह्यो वचन उदार ।
तुम जाहु आसुहि अवधपुर जहँ जननि दुखित अपार ॥
दीजे खवरि रघुवंसमनि जानकी लषन समेत ।

अब कालिह आवत अवधपुर कपिसैन्य जुत सुखसेत ॥६१६

सुनि भरत सासन सत्रुहन लाखन सुदूत बुलाय।
दीन्ह्यो निदेस अनंद भरि रघुनन्द दरस लुभाय॥
भरि गयो नंदीग्राम जनगन तिहि निसा अवसेस।
तब कहहिं सब अब राम कहँ अब राम कहँ अवधेस॥ ६१७॥

(दोहा)

पुरवासी भाषत सकल चलहु भरत अतुराय।
बिन देखे रघुपति चरन यक छन जुग सम जाय॥६१८॥
नाथ पादुका माथ महँ लियो भरत तब धारि।
चमर चलावत सत्रुहन साथहि चल्यो सिधारि॥६१९॥
जबते राम प्रयाग ते भये सवार विमान।
सबते कपि तिहि जान ते चले उड़त असमान॥ ६२०॥
सोइ सोर सुनि पवनसुत कह्यो भरत सों बैन।
कपिदल सोर सुनात इत मृषा बैन मम है न॥ ६२१॥

(चौपाई)

मोरे मन अस होत विचारा। तरत गोमती सैन्य अपारा॥
देखहु दच्छिन नयनं उठाई। धूरि पूरि नभ उड़ी महाई॥
आवत अतिहि सवेग विमाना। धुंधकार छावतो दिसाना॥
यतनी सुनत पवनसुत बानी। अवध प्रजा अतिसय हरषानी॥
जिमि कपिकटक विमान अपारा। तिमि कहि प्रजा लहै को पारा॥
मनुज जूह धरनी परिपूरी। रथ तुरंग मातंगहु भूरी॥
तब प्रभु निकट बालिसुत जाई। कीन्हो विनय सुनहु रघुराई॥

भरत लेन आये अगुवानी। आई मातु परत अस जानी॥
भरत-आगवन सुनि सुख छाई। गये विमान द्वार रघुराई॥
खड़े विमान द्वार रघुराई। उदय मेरु मनु दिनकरराई॥

(दोहा)

कोलाहल माच्यो तहाँ, लोग लखन ललचान।
अवध-अलंब विलंब विन, उतरे भूमि विमान॥ ६२७॥

(चौपाई)

तिहि अवसर सीता तहँ आई। लषन मातुपद गह्यो त्वराई॥
गयो वैठि जब भूमि विमाना। कूदे तब तुरंत भगवाना॥
कूदत प्रभु कहँ भरत निहारी। गिर्‌यो दंडसम भूमि मँझारी॥
भरतहि हिय उठाइ रघुराई। गए लपटि विह्वल दोउ भाई॥
गुरु वशिष्ट तिहि अवसर आये। जस तस कै दोहुँन विलगाये॥
गुरुपद परे पुलकि भगवाना। लियो अंक गुरु रह्यो न भाना
आवत निरखि भरत वैदेही। गह्यो दौरि पद परम सनेही॥
जनकसुता दिय आसिरवादा। जियहु लाल लगि महि मरजादा॥

(दोहा)

गह्यो लषन तब भरत-पद भरत लियो उर लाइ।
कह्यो भरत धनि धनि लषन किय भल प्रभु सेवकाइ॥६३२॥

(चौपाई)

शत्रुशाल गिरि प्रभुपद माहीं। लीन्हों नाम वहत दृग जाहीं॥
रिपुहन कहँ प्रभु हिये लगाई। सूँघ्यो सीस गोद वैठाई॥
आइ गए जननी जिहि ठामा। कियो प्रथम कैकयी प्रनामा॥

सकुचि विलखि पुलकित तनु माता।उर लगाय लिय सुख न समाता
पुनि प्रभु कौसल्या ढिग जाई। परे चरन निज नाम सुनाई॥
जननी लियो अंक बैठाई। वत्स हिरान लह्यो जनु गाई॥
तिहि अवसर लछिमन अतुराई। गिस्यो कौसिला-पद महँ आई॥
लियो उठाइ अंक महँ माता। चूमवि पुनि पुनि सुखजलजाता॥
तव उठि भरत सपुलकित गाता। बोल्यो मंजु वचन अवदाता॥
अब प्रभु लेहु राज्य कर भारा। एक मनोरथ अहै हमारा॥
होय नाथ राउर अभिषेका। पालहु प्रजा सदा सविवेका॥
कह्यो सुमंतहि रानि बुलाई। चारिहु सुअन देहु नहवाई।
भूषन वसन सकल पहिरावहु। अंगराग मृदु अंग लगावहु॥
राम भरत निज कर नहवाए। भूषन वसन विविध पहिराए॥

(दोहा)

जब मज्जन करि चुकत भे, रघुपति बंधुसमेत।
गुरु वशिष्ठ आवत भए, गवन करावन हेत॥६४०॥

(चौपाई)

कह्यो वचन गुरु सुनहु नरेसा। आजु सुभग दिन चलहु निवेसा॥
प्रभु तथास्तु कहि कियो प्रनामा। लै गुरु गए भरत के धामा॥
कह्यो सत्रुहन सचिव बुलाई। ल्यावहु रथ सुंदर सजवाई॥
सासन दियो सुमंत तुरंता। सजी सैन्य गज वाजि अनंता॥
हल्ला पस्यो नगर महँ जाई। आवत अवध आज रघुराई॥
दुहुँ दिसि पंथ प्रजा कर जूहा। नारि बाल जुव वृद्ध समूहा॥
खड़े राम दरसन के आसी। तिहि दिन भयो भुवन

चल्यो कटक अति चटक अपारा। मनहुँ सिंधु तजि दियो करारा॥
चली मंदगति सैन्य अपारा। लखहिं मनुज अवधेस कुमारा॥
प्रकृति त्रिप्र मंत्री पुरवासी। चलैं चहूँकित आनँदरासी॥

(दोहा)

आगे बजत अनंत तहँ, तुरही अरु करनाल।
डिगत न ताल विधान में, गावत मधुर विसाल॥९४६॥

(छंद गीतिका)

पितु महल द्वारे रोकि रथ प्रभु कह्यो भरत बुझायकै।
लै जाहु तीनहु मातु अंतहपुरहि विनय सुनायकै॥
सिय जाइ अपने महल मातुन संग सुदिन विचारिकै।
कपिराज को तुम कर पकरि लेजाहु प्रेम पसारिकै॥९४७॥
सुनि राम सासन भरत आसु हुलास भरि कपिराज को।
कर पकरि लायो कनकभवन निवास दिय सुख साह को॥

राज्याभिषेक

हनुमान आदिक चारि वीर सुनीर चारि समुद्र को।
ल्याये निसा वीतत हरषि करि हरष सुर अज रुद्र को॥९४८॥
प्रभु सकल बंधुन सहित दशरथ महल कीन निवास है।
तहँ गुरु वशिष्ठहु आय बोल्यो वचन वलित हुलास है॥
सिय सहित कीजै नेम यहि निसि कालिह तुव अभिषेक है।
विधि सकल जानी रावरे की जथा जौन विवेक है॥९४९॥
प्रभु नाय गुरुपद सीस पंकज पानि जोरे हँसि कह्यो।

अवलंब आप प्रताप को कछु और मेरे नहिं रह्यो ॥
गवने निवेसहि दै निदेसहि गुरु जवै हिय हरषिकै।
संत्र सहित सिय रघुनाथ निवसे नेम जुत मुद वरषिकै॥६५०॥

(कवित्त)

जानिकै प्रभात प्रभु मीजि जलजातनैन, उठे अँगिरात अलकावली सँभास्यो है। भरत लषन रिपुदमन अनिलसुत, सुगल विभीषण प्रणाम को उचास्यो है॥ रघुराज आसिष दै कीन्हें प्रातकर्म सब, मज्जनकै नाथ रंगमंदिर पधास्यो है। वंदि कुलदेव करि सेव बोलि भूमिदेव, देन लागे दान मेव मन तें विसास्यो है॥६५१॥

(सोरठा)

उदयमान जब भानु, भै प्रसन्न प्राची दिसा।
बाजें अमित निसान, मच्यो नगर खरभर महा॥ ६५२॥

(चौपाई)

रामराज अभिषेक अनंदा। सुनि सुनि आये नागर वृंदा॥
गायक गावहिं गुनगन गीता। होय सुजस सुनि भुवन पुनीता॥
गुरु वशिष्ठ तिहि अवसर आये। मुनिन वृंद सानंद सुहाये॥
बोलि लषन बोले अस वानी। आनहु जनकसुता छविखानी॥
सीतहि ल्याये तुरत लिवाई। रही तहाँ चहुँकित छविछाई॥
सीता रामहिं संग लिवाई। चले मुनीस स्वास्त्ययन गाई॥
कलसावली मातु पठवाई। सुंदर सखी साजि सब आई॥
भरि सब सकुन सुकंचन थारा। गावत मंगल वारहिं वारा॥
जननी अटन झरोखन बैठीं। पेखि प्रमोद पयोनिधि पैठीं॥

भरत लेन आये अगुवानी। आई मातु परत अस जानी॥
भरत-आगवन सुनि सुख छाई। गये विमान द्वार रघुराई॥
खड़े विमान द्वार रघुराई। उदय मेरु मनु दिनकरराई॥

(दोहा)

कोलाहल माच्यो तहाँ, लोग लखन ललचान।
अवध-अलंब विलंब बिन, उतरे भूमि विमान॥ ६२७॥

(चौपाई)

तिहि अवसर सीता तहँ आई। लषन मातुपद गह्यो त्वराई॥
गयो बैठि जब भूमि विमाना। कूदे तब तुरंत भगवाना॥
कूदत प्रभु कहँ भरत निहारी। गिस्यो दंडसम भूमि मँझारी॥
भरतहि हिय उठाइ रघुराई। गए लपटि विह्वल दोउ भाई॥
गुरु वशिष्ठ तिहि अवसर आये। जस तस कै दोहुँन विलगाये॥
गुरुपद परे पुलकि भगवाना। लियो अंक गुरु रह्यो न भाना
आवत निरखि भरत वैदेही। गह्यो दौरि पद परम सनेही॥
जनकसुता दिय आसिरवादा। जियहु लाल लगि महि मरजादा॥

(दोहा)

गह्यो लषन तब भरत-पद भरत लिया उर लाइ।
कह्यो भरत धनि धनि लपन किय भल प्रभु सेवकाइ॥६३२॥

(चौपाई)

शत्रुशाल गिरि प्रभुपद माहीं। लीन्हों नाम वहत दृग जाहीं॥
रिपुहन कहँ प्रभु हिये लगाई। सूँघ्यो सीस गोद बैठाई॥
आइ गए जननी जिहि ठामा। कियो प्रथम कैकयी प्रनामा॥

सकुचि बिलखि पुलकित तनु माता। उर लगाय लिय सुख न समाता
पुनि प्रभु कौसल्या ढिग जाई। परे चरन निज नाम सुनाई॥
जननी लियो अंक बैठाई। वत्स हिरान लह्यो जनु गाई॥
तिहि अवसर लछिमन अतुराई। गिस्यो कौसिला-पद महँ आई॥
लियो उठाइ अंक महँ माता। चूमवि पुनि पुनि सुखजलजाता॥
तब उठि भरत सपुलकित गाता। बोल्यो मंजु वचन अवदाता॥
अब प्रभु लेहु राज्य कर भारा। एक मनोरथ अहै हमारा॥
होय नाथ राउर अभिषेका। पालहु प्रजा सदा सविवेका॥
कह्यो सुमंतहि रानि बुलाई। चारिहु सुअन देहु नहवाई।
भूषन वसन सकल पहिरावहु। अंगराग मृदु अंग लगावहु॥
राम भरत निज कर नहवाए। भूषन वसन विविध पहिराए॥

(दोहा)

जब मज्जन करि चुकत भे, रघुपति बंधुसमेत।
गुरु वशिष्ठ आवत भए, गवन करावन हेत॥६४०॥

(चौपाई)

कह्यो वचन गुरु सुनहु नरेसा। आजु सुभग दिन चलहु निवेसा॥
प्रभु तथास्तु कहि कियो प्रनामा। लै गुरु गए भरत के धामा॥
कह्यो सत्रुहन सचिव बुलाई। ल्यावहु रथ सुंदर सजवाई॥
सासन दियो सुमंत तुरंता। सजी सैन्य गज वाजि अनंता॥
हल्ला पस्यो नगर महँ जाई। आवत अवध आज रघुराई॥
दुहुँ दिसि पंथ प्रजा कर जूहा। नारि बाल जुव वृद्ध समूहा॥
खड़े राम दरसन कै आसी। तिहि दिन भयो भुवन सुखरासी॥

चल्यो कटक अति चटक अपारा। मनहुँ सिंधु तजि दियो करारा॥
चली मंदगति सैन्य अपारा। लखहि मनुज अवधेस कुमारा॥
प्रकृति विप्र मंत्री पुरवासी। चले चहूँकित आनँदरासी॥

(दोहा)

बाजे बजत अनंत तहँ, तुरही अरु करनाल।
डिगत न ताल विधान में, गावत मधुर विसाल॥६४६॥

(छंद गीतिका)

पितु महल द्वारे रोकि रथ प्रभु कह्यो भरत बुझायकै।
लै जाहु तीनहु मातु अंतहपुरहि विनय सुनायकै॥
लिय जाइ अपने महल मातुन संग सुदिन विचारिकै।
कपिराज को तुम कर पकरि लेजाहु प्रेम पसारिकै॥६४७॥
सुनि राम सासन भरत आसु हुलास भरि कपिराज को।
कर पकरि लायो कनकभवन निवास दिय सुख साह को॥

राज्याभिषेक

हनुमान आदिक चारि वीर सुनीर चारि समुद्र को।
ल्याये निसा बीतत हरषि करि हरष सुर अज रुद्र को॥६४८॥
प्रभु सकल बंधुन सहित दसरथ महल कीन निवास है।
तहँ गुरु वशिष्ठहु आय बोल्यो वचन ललित हुलास है॥
सिय सहित कीजे नेम यहि निसि काल्हि तुव अभिषेक है।
विधि सकल जानी रावरे की जथा जौन विवेक है॥६४९॥
प्रभु नाय गुरुपद सीस पंकज पानि जोरे नमि ग्यो।

अंबलंब आप प्रताप को कछु और मेरे नहिं रह्यो ॥
गवने निवेसहि दै निदेसहि गुरु जबै हिय हरषिकै।
सब सहित सिय रघुनाथ निवसे नेम जुत मुद बरषिकै॥६५०॥

(कवित्त)

जानिकै प्रभात प्रभु मीजि जलजातनैन, उठे अँगिरात अलकावली सँभारो है। भरत लषन रिपुदमन अनिलसुत, सुगल विभीषण प्रणाम को उचारो है॥ रघुराज आसिष दै कीन्हें प्रातकर्म सब, मज्जनकै नाथ रंगमंदिर पधारो है। वंदि कुलदेव करि सेव बोलि भूमिदेव, देन लागे दान मेव मन तें विसारो है॥६५१॥

(सोरठा)

उदयमान जब भानु, भै प्रसन्न प्राची दिसा।
बाजे अमित निसान, मच्यो नगर खरभर महा॥ ६५२॥

(चौपाई)

रामराज अभिषेक अनंदा। सुनि सुनि आये नागर वृंदा॥
गायक गावहिं गुनगन गीता। होय सुजस सुनि भुवन पुनीता॥
गुरु वशिष्ठ तिहि अवसर आये। मुनिन वृंद सानंद सुहाये॥
बोलि लषन बोले अस बानी। आनहु जनकसुता छविखानी॥
सीतहि ल्याये तुरत लिवाई। रही तहाँ चहुँकित छविछाई॥
सीता रामहिं संग लिवाई। चले मुनीस स्वास्त्ययन गाई॥
कलसावली मातु पठवाई। सुंदर सखी साजि सब आई॥
भरि सब सकुन सुकंचन धारा। गावत मंगल वारहिं वारा॥
जननी अटन झरोखन बैठीं। पेखि प्रमोद पयोनिधि पैठीं॥

रघुपति राजतिलक अनुरागीं। अगनित मनिन लुटावन लागीं ॥

(सोरठा)

मुनि वशिष्ट तिहि काल, कह्यो वचन हँसि राम सों।
सिंहासन छविजाल, वैठहु सीता सहित अब ॥ ६५८ ॥

(दोहा)

आयो समय सुहावना, देव दुंदुभी दीन।
गुरु वशिष्ठ सव मुनिन को, वोले परम प्रवीन ॥ ६५६ ॥

(चौपाई)

सुनहु विनय कश्यप जावाली। कात्यायन गैातम तपसाली ॥
वामदेव आदिक ऋपिराई। राजतिलक वेला अव आई ॥
करहु रामअभिपेक सुहावन। लेहु वनाइ जन्म निज पावन ॥
अस कहि लियो कमंडलु हाथा। लाग्यो पढ़न वेद मुद गाथा ॥
लग्यो करन रघुपति अभिपेका। वेदमंत्र पढ़ि सहित विवेका ॥
किय अभिपेक प्रथम गुरु ज्ञानी। पुनि सब मुनि विधिवत मतिखानी
आईं पुनि द्विजसुता कुमारी। किय अभिपेक सुगंधित वारी ॥
मंत्री वर्ग सकल पुनि आये। करि अभिपेक महा सुख पाये ॥

(छंद चौवोला)

यहि विधि राजतिलक रघुवर को भयो अवधपुर माहीं।
तिहि दिनते सतजुग अस लाग्यो प्रानी सुखित सदाहीं ॥
नित नित मंगल मोद महोत्सव देस देस महँ भयऊ।
तीनिहुँ ताप विगत पुरजन सव स्वप्नेहुँ सोक न छयऊ ॥६६४॥
पृथक पृथक वानरन सयूथन प्रभु कीन्हों सत्कारा।

नित नित नव नव भोजन पान सुभूषन बसन अपारा ॥
कछुक काल महँ प्रभु कपिनायक निसिचरनायक आन्यो।
सील सकोच सनेह मित्रता संजुत वचन बखान्यो ॥६६५॥
अस अभिलाष होति मोरे मन कछु दिन कहँ दोउ मीतू।
किष्किंधा लंका कहँ गवनौ संजुत सैन्य अभीतू ॥
अस कहि सकल साज मँगवायो प्रभु दोहुँन कहँ दीन्ह्यो।
चले नाथ पहुँचावन दोहुँन भ्रातन संगहि लीन्ह्यो ॥६६६॥

(दोहा)

यहि विधि करि सब कपिन की, विदा भानुकुलभान।
आय सभा बैठत भये, रघुपति कृपानिधान ॥६६७॥
राजराज रघुवंसमनि, राजत सहित समाज।
पालक त्रिभुवन भवन वसि, छावत सुजस दराज ॥६६ ॥
राज्य करत रघुराज को, विते हजारन वर्ष।
सतजुग सम त्रेता भयो, रह्यो पूरि जग हर्ष ॥६६६॥

दुर्गाप्रसाद खत्री द्वारा भारत-जीवन प्रेस, काशी में मुद्रित